रूप-निघंटु कोष

अ

अः–[सं०] १. शिव । २. विष्णु ।

अंकडुचेट्ट–[तै०] कुड़ा । कुटज ।

अंकन–[सं०] ढेरा । अंकोट । अंकोल ।

अंकलेख्य–[सं०]
अंकलोड्य–[सं०]
कसेरू छोटा । चिंचोटक क्षुप । चिचोड़ ।

अंकुडुचेट्ट–[तै०] कुड़ा । कुटज । कोरैया ।

अंकुल–[उ०] ढेरा । अंकोट । अंकोल । ढेला ।

अंकोट–[सं०]
अंकोटक–[सं०]
अंकोठ–[सं०]
अंकोठक–[सं०]
अंकोल–[मु०, गोंड०, कोल०, द्रा०]
अंकोल–[सं०, हिं०]
अंकोलक–[सं०]
अंकोलमु–[तै०]
ढेरा । अंकोल । ढेला वृक्ष ।

अंकोलसार–[सं०] स्थावर विषभेद । अफीम, संखिया आदि :

अंकोलय–[मरा०] ढेरा । अंकोल । ढेला वृक्ष ।

अंकोल्ल–[सं०] देवदारु । देवदार ।

अंकोल्लक–[सं०] ढेरा । अंकोट वृक्ष ।

अंकोल्लसार–[सं०] स्थावर विष । स्थावर विष का एक भेद ।

अंकोलि–[गु०]
अंकोली–[गु०]
अंकोले–[क०]
ढेरा । अंकोल । ढेला वृक्ष ।

अँखदुखनी रोग–[हिं०] अभिष्यंद । सर्वाक्षि रोग । नेत्ररोग विशेष ।

अंग–[सं०] शरीर । देह ।

अंगग्रह–[सं०] गात्र-पीड़ा । शरीर की वेदना ।

अंगज–[फा०] हींग । हिंगु ।

अंगदाँ–[यू०]
अंगदान–[यू०]
अंजदाँ । अंजदान रूमी ।

अंगना–[सं०] १. प्रियंगु । दहिंगना । २. स्त्री । नारि । औरत ।

अंगनियार–[हिं०] अरनी । अग्निमंथ । गनियारी ।

अंगप्रिय–[सं०] १. अशोक । शोकनाश वृक्ष । २. ऋतुमती । कुमोत्पल । उत्कट कमल ।

अंगप्रिया–[सं०] प्रियंगु । गंधप्रियंगु । फूल प्रियंगु ।

अंगबार–[फा०] अँजुबार । अंजबार ।

अंगर–[सं०] हिमावली । हितावली ।

अंगरक्त–[सं०] कमीला । कंपिल्ल ।

अंगरस–[सं०] वह रस जो ताजी ओषधियों को कूटकर कपड़े से छानने पर निकलता है । स्वरस ।

अंगरापर्ण–[सं०]
अंगरापाण–[मरा०]
अंगरा पान–[हिं०]
अंगरा नामक पान । एक प्रकार का पान । पान अंगरा ।

अंगलोड्य–[सं०] १. अदरक । आर्द्रक । आदी । २. कसेरू छोटा । चिंचोटक क्षुप । चिचोड़ ।

अंगसुंदर–[सं०] अगद । दद्रुघ्न । दद्रुमर्दी वृक्ष ।

अंगसेन–[सं०] अगस्त । बक वृक्ष ।

अंगाकर–[सं०] लिट्टी । बाटी ।

अंगार–[सं०] कोयला । अलात ।

अंगारक–[सं०] १. कटसरैया । कुरंटक । २. भँगरा । भृंगराज । भँगरैया ।

अंगारक मणि–[सं०] मूँगा । प्रवाल ।

अंगारकर्कटी–[सं०] लिट्टी । बाटी ।

अंगारकुष्ठका–[सं०] हिमावली । हितावली ।

अंगारपर्णी–[सं०] भारंगी । भार्गी ।

अंगारपुष्प–[सं०]
अंगारपुष्पक–[सं०]
१. पितवँजिया । पुत्र-जीव वृक्ष । जियापोता । २. हिंगोट । इंगुदी वृक्ष । गोंदी ।

अंगारमंजरी–[सं०]
अंगारमंजी–[सं०]
करंज । महाकरंज । उद्दर करंज ।

अंगारमणि–[सं०] मूँगा । प्रवाल ।

अंगारवर्णी–[सं०] भारंगी । भार्गी ।

अंगारवल्लरी–[सं०] घृतकरंज । नाटा करंज ।

अंगारवल्ली–[सं०] १. महाकरंज । बड़ा करंज । २. भारंगी । भार्गी । ३. गुंजा । चोटली । ४. लता करंज । करंजुआ ।

अंगारवृक्ष–[सं०] हिंगोट । इंगुदी वृक्ष ।

अंगारा–[सं०] १. हिमावली । हितावली । २. हिंगोट । इंगुदी वृक्ष ।

अंगारिका–[सं०] १. ईख । इक्षुकांड । २. ढाक की कली । पलाश-कलिका ।

अंगारित–[सं०] ढाक की कली । पलाश-कलिका ।

अंगियार–[ने०] अयार । अंजीर ।

अंगिर–[सं०] तीतर । तित्तिर पक्षी ।

अँगीठी—[हिं०] अग्नि जलाने का एक प्रसिद्ध बर्तन जिसमें कोयले अथवा कंडे की आग जलाते हैं। यह धातुओं को गलाने अथवा तपाने के काम में आती है । हसान्तिका । वह्निशकटिका । बोरसी । अँगैठा । अँगेठी।

अंगुज–[यू०] हींग । हिंगु ।

अंगुजदरख्त–[यू०] हींग । हिंगुवृक्ष ।

अंगुझ–[यू०] हींग । हिंगु ।

अंगझ दरख्ते–[फा०] हींग । हिंगुवृक्ष ।

अंगण–[सं०] भंटा । वार्ताकु । बगन ।

अंगुर–[क०] १. असगंध । अश्वगंधा । [हिं०] २. अंगूर । अपक्वद्राक्षा ।

अंगुलिफला–[सं०] खीरा । निष्पावी ।

अंगली–[सं०] गजकर्ण आलु । गजकर्णिका ।

अंगलीफला–[सं०] खीरा । निष्पावी ।

अंगूर–[हिं०] अंगूर । [सं०] अपक्वद्राक्षा । मधुरसा । रसाला । स्वादुफला । फलोत्तमा इत्यादि । [हिं०] कच्ची दाख । [द०] अंगूर । [ता०] कोडिमंड्रिप पजहम । दिराक्षा पजहम । दिराक्षा परम । [ते०] द्राक्षापंडु । गोस्तनीपंडु । [मला०] मुंतिरीङ्ङय पजहम् । मुंत्रिपरम । [खा०] द्राक्षोहन्नु । [बं०] अंगूर । द्राक्षा । [म०] द्राक्ष । [गु०] द्राख । [सिंह०] मुद्रपलम । मद्रपलम । मुद्रका । मद्रका । [बर०] सबीसी । सब्यसी । [फा०] अंगूर । देशावह । [अ०] अनब । आनाब । ऐनाब । हसरम ।

लैं०–Vitis Vinifera.

अं०–Grapes.

अंगूर का वृक्ष लता-वृक्ष की भाँति होता है । इसका डंठल काष्ठवत्, डंठी चिमड़ी और बाल सूत्रवत् लंबे होते हैं जिनके ऊपर का हिस्सा प्रायः जोड़े में देखा जाता है। पत्ते गोलाकार, पाँच दलवाले, कँटीले एवं दँतीले अथवा कँगूरेदार होते हैं । फूल सुगंधियुक्त और हरे रंग के होते हैं । प्रायः बालों पर फूलों के सींके लगते हैं और फूल तथा फल गुच्छों में होते हैं । इसकी लता को जाफरी, टट्टी या मचान पर चढ़ा देते हैं। यह उसके सहारे फैलकर खूब फल देती है । परंतु इस देश के अंगूर उतने सुस्वादु नहीं होते जितने अफगानिस्तान और फारस प्रभृति प्रदेशों के होते हैं ।

जहाँ पर दिन भर सूरज की धूप खूब तेजी से पड़ती हो, उस जगह की अपेक्षा जिस जगह संध्या के पहले कुछ छाया पहुँचती हो, वहाँ इसको रोपण करना अच्छा होता है । इसके लिये हलकी और दुम्मट मिट्टीवाली ऊँची जमीन अच्छी होती है । उसको भली भाँति जोत, मिट्टी को चूर करके और घासों को निकालकर खाद मिलानी चाहिए । पुराने गोबर के चूर्ण, सड़ी हुई खली, हड्डी के चूर्ण और शोरे आदि से बनी हुई खाद इसके लिये अच्छी होती है। सड़ी मछली भी अच्छी समझी जाती है । काँटी कलम अथवा दाबा कलम से इसके पौधे लगाए जाते हैं । बरसात के अंत में कुँआर और कातिक के महीनों में छायादार जमीन पर क्यारी बनाकर मिट्टी में तरी का कुछ बालू मिलाकर इन कलमी पौधों को रोपना चाहिए । जिन जगहों पर पौधों को रोपना हो, वहाँ की मिट्टी एक हाथ गहरी खोदकर खाद और मिट्टी से दुरुस्त करके पौधों को रोपना चाहिए । पर खाद मिली हुई मिट्टी से गड्ढों को भरने के पहले गड्ढों में ईंटों या खपड़ों का कुछ चूर्ण बिछा देना उत्तम होता है । ऐसा करने से इनकी जड़ मिट्टी के अंदर अधिक दूर तक प्रवेश न करके ऊपर के हिस्सों में ही फैलती हैं, जिससे अधिक फल लगते हैं । बरसात में ऐसा उपाय करना चाहिए जिसमें इनकी जड़ों में पानी इकट्ठा न होने पावे । पौधों से जितनी शाखें निकलें, उन्हें मचान पर चढ़ा देना चाहिए और शाखा-प्रशाखाओं को परस्पर एक साथ सम्मिलित होने से रोकने के लिये डालियों को समयानुसार हटाकर अलग अलग कर देना चाहिए । कातिक के महीने में इसकी जड़ की मिट्टी खोदकर प्रायः एक महीने तक जड़ों को खुली रहने देने से पत्ते स्वयं गिर जाते हैं । उसी समय शाखाओं को काटना-छाँटना चाहिए । एक ही शाखा-प्रशाखा में बार बार फल लगने देने से फल बड़े नहीं होने पाते और पौधे भी जल्द खराब हो जाते हैं । वृक्षों में एक प्रकार के कीड़े लगते हैं जिससे सब के सब पौधे धीरे धीरे नष्ट हो जाते हैं । जब किसी वृक्ष में ऐसे कीड़े दिखाई पड़ें, तब उस वृक्ष को समूल काटकर आग में जला देना अच्छा होता है । चित्र नं० २ उस अंगूर का है जिसकी लता वाटिकाओं में देखी जाती है । इसके फल वैसे सुस्वादु नहीं होते जैसे परदेश से आए हुए फल होते हैं ।

अफगानिस्तान और फारस आदि देशों के अंगूर अच्छे होते हैं । इनके सिवा काश्मीर में किशमिश, मुनक्का, हुसैनी और मस्का नामक कई जातियों के अंगूर उत्पन्न होते हैं । औरंगाबाद के अंगूर लाल और स्वादिष्ट होते हैं । दौलताबाद के अंगूर देश-देशांतरों में भेजे जाते हैं । इँगलैंड और फ्रांस में भी बढ़िया अंगूर होते हैं, पर वे इतने कोमल होते हैं कि एक देश से दूसरे देश में ले जाने से उनमें कुछ न कुछ अंतर हो ही जाता है । भारतवर्ष में सब जगह जलवायु समान नहीं है, इसलिये प्रत्येक स्थान के फलों में कुछ न कुछ भेद हुआ ही करता है ।

अंगूर, किशमिश, दाख, मुनक्का आदि सब एक ही जाति की लताओं के फल हैं । कच्चे, पक्के, बीजहीन तथा छोटे, बड़े, सूखे आदि फलों के भेद से यह भिन्न भिन्न नामों से पुकारा जाता है जिनका उल्लेख उन उन नामों के अंतर्गत यथास्थान किया जायगा । इसके प्रायः सूखे ही फल औषध के काम में आते हैं । वे स्निग्ध-कारक, सारक, मधुर, शीतल, स्वादिष्ट तथा तृषा, शारीरिक उष्णता, कास, विदारी और क्षय रोग में गुणकारी होते हैं ।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष–कच्चा अंगूर भारी, खट्टा तथा रक्तपित्त को उत्पन्न करनेवाला और दाख से कम गुणवाला है ।

अंगूर के ताजे फल–रुधिर को पतला करनेवाले, छाती के रोगों में हितकारी, अत्यंत शीघ्रता से पचनेवाले, रक्तशोधक तथा रुधिर को बढ़ानेवाले हैं। कच्चे फलों का रस संकोचक होता है ।

इसकी लकड़ी की भस्म—वस्ति की पथरी में गुणकारी तथा अर्श की सूजन दूर करनेवाली है ।

पत्ते–संकोचक तथा अतिसार-नाशक हैं ।

अंगूर का शरबत–शीतल, चित्त को प्रसन्न करनेवाला, तृषा को रोकनेवाला एवं ज्वर के कारण उत्पन्न होनेवाली तृषा में लाभदायक है ।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–शीघ्र-पाकी, पक्वाशय में शीघ्रता से उतरनेवाला, उत्तम रुधिर उत्पन्न करनेवाला, रक्तशोधक, शरीर को बृंहण-कारक, वातज मल को नष्ट करनेवाला, स्वच्छ-कारक, मल को पकानेवाला, पथ्य और मन को प्रसन्न करने-

अंगूर

अंगूर जंगली

वाला है। शोथ रोग में खतमी के साथ पकाकर लेप करना लाभदायक है। पका हुआ फल दूसरे दर्जे में गरमतर और कच्चा फल पहले दर्जे में शीतल और दूसरे में रूक्ष है; स्निग्ध, आमाशय और प्लीहा के लिये हानिकारक तथा वातकारी है।

दर्पनाशक–सोंठ और गुलकंद।

प्रतिनिधि–मुनक्के के बीज।

प्रयोग–१. अंगूर सब प्रकार के फलों में उत्तम और निर्दोष फल है। यह सभी प्रकृतियों के मनुष्यों के अनुकूल होता है। रोगी, नीरोग, बलवान्, बालक, वृद्ध सबके लिये हितकारी है। यह नीरोग मनुष्यों के लिये उत्तम पौष्टिक खाद्य है और रोगी के लिये अत्यंत बलवर्द्धक पथ्य अथवा औषधि है। जिन बड़े बड़े भयंकर और जटिल रोगों में किसी प्रकार का और कोई खान-पान का पदार्थ नहीं दिया जाता, उनमें भी अंगूर या दाख दी जा सकती है। अंगूर कई प्रकार के होते हैं। उनमें से दो प्रकार के काले और तीन प्रकार के हरे अंगूर प्रधान हैं। काले अंगूरों में एक तो वह है जो जामुन के समान नीले रंग का और अधिक चमकदार होता है। इसको प्रायः हबशी अंगूर कहते हैं। यह खाने में बहुत मीठा होता है। दूसरा काला अंगूर साधारण बैंगनी रंग का होता है और पकने पर बहुत मीठा होता है; परन्तु हबशी अंगूर से किंचित् कम मीठा होता है, इसलिये हबशी अंगूर से गुणों में हीन भी समझा जाता है। पिटारी का अंगूर सबसे बड़ा, लंबा और अधिक मीठा होता है तथा हरे अंगूरों में सबसे अच्छा गिना जाता है। दूसरे प्रकार का हरा अंगूर, जिसका छिलका बहुत मोटा होता है और जो प्रायः आकार में काले अंगूर के समान होता है, बहुत मीठा नहीं होता और उसमें अधिक रस भी नहीं होता। इसलिये सब अंगूरों में यह निकृष्ट गिना जाता है। हरे रंग का सबसे छोटा अंगूर बेदाना नाम से प्रसिद्ध है जो सब अंगूरों से कोमल और स्वादिष्ट होता है। यह स्वाद में कुछ मीठा और खट्टा होता है और इसमें बीज नहीं होते, इसलिये इसको बेदाना कहते हैं। कच्ची अवस्था में सब प्रकार के अंगूर खट्टे और हरे रंग के होते हैं तथा पकने पर मीठे और अपने असली रंग पर आ जाते हैं। हरी जाति के अंगूर भी पककर दूसरे रंग के अथवा कुछ कुछ सफेद रंग के हो जाते हैं। पके अंगूरों को सुखाकर दाख या मुनक्का बनाया जाता है। कहते हैं कि अंगूरों को उनकी लता ही पर सुखाकर दाख या मुनक्का बनाते हैं; और जिन अंगूरों की दाख या मुनक्का बनता है, वे इस देश में बहुत कम आते हैं। काले अंगूर का काला मुनक्का, पिटारी के सफेद अंगूर का भूरे रंग का मुनक्का और बेदाना अंगूर की किशमिश बनता है।

अंगूर का इस देश में फल और औषधि दो प्रकार से व्यवहार होता है। फल रूप में पके और ताजे अंगूर खाने के काम में आते हैं और औषधि के काम में प्रायः सूखे फल (दाख या मुनक्का) लाए जाते हैं।

२. **अण्डवृद्धि पर**–इसके पत्ते पर घी चुपड़ आग पर खूब गरम करके पोतों पर बाँधने से सूजन घट जाती है।

अंगूर, जंगली–[हिं०] जंगली अंगूर। [बं०] अमधोक। अमल्क। [द०] जंगली अंगूर। [तै०] सबरा। शबरावल्लि। [मला०] चबरावल्लि। [मरा०] रानद्राक्षा। कोलेजान। [कों०] पाल कंडा। [सिंह०] टावेल। रतवुलतवेल। [लै०] Vitis Indica.

मध्यभारत, पश्चिम प्रायद्वीप और बंगाल तथा लंका की नीची भूमि में यह पाया जाता है।

यह लता जाति की वनस्पति है। इसकी डंडी पतली होती है, पत्ते गोलाकार ४ से १० इंच के घेरे में दँतीले अथवा बारीक कँगूरेदार किनारेवाले और किंचित् नुकीले होते हैं। फूल हरापन लिए लाल रंग के होते और दो इंच की बालों पर लगते हैं। फल गोलाकार, किंचित् लंबे, बड़े मटर के समान और २-४ बीजवाले होते हैं।

प्रयोग–नारियल की गिरी के साथ इसकी जड़ का रस स्वच्छताकारक होता तथा मृदु रेचन के लिये व्यवहार में आता है। कोंकण में स्वास्थ्य-रक्षा के लिये इसके काढ़े का उपयोग किया जाता है। यह संशोधक, रुधिर को शुद्ध करनेवाला तथा स्वास्थ्य को सुधारनेवाला है।

अंगूर रोबाह–[फा०] मकोय। काकमाची। भटकोआ।

अंगेठा–[हिं०], **अंगेठी**–[हिं०] – अँगीठी। बोरसी। हसंतिका।

अंगोजा–[फा०] हिंगु। हींग।

अंगोझा–[फा०] १. हिंगु। हींग। २. कलगा घास। राजगिर।

अंग्ररी हिंद–[फा०] जपापुष्प। अड़हुल।

अंगुजेह–लरी। [फा०] हींग। हिंगु।

अंघ्रिग्रंथिक–[सं०] पीपलामूल। पिप्पलीमूल। पीपरामूल।

अंघ्रिजिह्विक–[सं०], **अंघ्रिनामक**–[सं०], **अंघ्रिनामन्**–[सं०] – दोना। दमनक।

अंघ्रिपर्णिका–[सं०], **अंघ्रिपर्णी**–[सं०], **अंघ्रिवला**–[सं०], **अंघ्रिवल्लि**–[सं०], **अंघ्रिवल्लिका**–[सं०], **अंघ्रिवल्ली**–[सं०] – पिठवन। पृश्निपर्णी। पिठोना। ढौला।

अंघ्रिस्कंद–[सं०], **अंघ्रिस्कंध**–[सं०] – पाँव की घुट्टी। गुल्फ।

अंचार–[हिं०] सेवान। अचार।

अंजक–[सं०] आँख। नेत्र।

अंजदा–[यू०], **अंजदा रूमी**–[यू०], **अंजदा विलायती** [यू०], **अंजदान**–[यू०], **अंजदान रूमी**–[यू०], **अंजदान विलायती** [यू०] – अंगदा। इसको फारसी में "शिसालयूस" कहते हैं। यह एक यूनानी दवा या विलायती बूटी है और घास की जाति की है। इसका रंग काला या हरा अथवा सुर्ख और सफेदी लिए या पीला होता है। किंतु एक हकीम के मत से यह एक काँटेदार वृक्ष का गोंद है। पर वास्तव में अंजदा एक घास ही है। यह स्वाद में तीक्ष्ण और गंधयुक्त होता है। यह घास चार प्रकार की होती है। एक के पत्ते सौंफ के समान, दूसरे के इस्कर्पचा के समान और तीसरे के जतून के पत्ते के समान होते हैं। चौथा अंजदा वह है जिसका उल्लेख पहले हो चुका है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, शोथनाशक, स्वच्छताप्रद, मलशोधक, मल और आर्तव-प्रवर्तक, रोधउद्घाटक, पक्वाशय और आँतों को बलकारक तथा आंतरिक पीड़ा को दूर करनेवाला है। गर्भ न रहने के लिये ऋतुधर्म

के बाद एक सप्ताह तक सेवन करना चाहिए। यकृत् और वस्ति तथा आंत के रोगी एवं उष्ण प्रकृतिवालों को हानिकारक है।

दर्पनाशक–ज़रिश्क और कतीरा।

प्रतिनिधि–राई।

मात्रा–दो माशे।

अंजन–[सं०] १. सुरमा। स्रोतोंजन। सुर्म्मा। २. रसौत। रसांजन। रसवत। ३. छिपकली। गृहगोधा। ४. अंजन वृक्ष। [हि०] अंजन। [मरा०] लिंब। लिंबा। [गु० मु०] अंजन। [मु०] यालकी। लोखंदे। [मा०] अंजन वृक्ष। [ते०] अछि आकु। अछि चेट्टु। [द्रा०] काशामरं। [क०] लिंब टोली। [ता०] कर्युपु कुंचुड्डी। कसरी चट्टी। कशरम। [खा०] लिंबा टोली। [मला०] कशवा। लै० Memecylon edule। [अं०] The iron wood tree.

इसकी झाड़ी अथवा छोटा सुहावना वृक्ष होता है। यह पूरबी प्रायद्वीप और सीलोन में तथा महाबलेश्वर एवं घाट में अधिकता से पाया जाता है। यह वृक्ष दक्षिण कोंकण में कम मिलता है। इसकी छाल पतली, खाखली और हलके खाकी रंग की होती है। लकड़ी खाकी रंग की और हलकी किंतु दृढ़ होती है। पत्ते १॥ से ३॥ इंच तक लंबे, चौड़े और नुकीले होते हैं। फूल नीले, चमकीले, एक इंच के घेरे में गोलाकार कालापन लिए तथा अष्टमांश इंच तक चौड़े मुखवाले होते हैं।

गुण तथा प्रयोग–इसकी जड़ और पत्ते औषधि-प्रयोग में आते हैं। पत्ते शीतल, संकोचक, स्वच्छताकारक तथा आम रोग और सूजाक में गुणकारी होते हैं। खरल किए हुए पत्ते का काढ़ा या फांट देना चाहिए। इसका हिम लोशन के रूप में व्यवहार में आता है। कोंकण में सम भाग इसकी छाल, नारियल की गिरी, अजवायन और काली मिर्च के चूर्ण को कपड़े में बांधकर पोटली बनाकर मरोड़ पर सेंक करते हैं अथवा पीसकर लेप करते हैं।

१. मासिक धर्म के समय अधिक रुधिर आने पर इसकी जड़ का काढ़ा लाभकारी समझा जाता है। २. श्वेत प्रदर में पत्तों को पीसकर तथा छानकर पिलाना चाहिए। ३. नेत्ररोग में इसके काढ़े या फांट से आंख धोना गुणकारी है। ४. मूत्रकृच्छ्र में पत्तों का काढ़ा पिलाने से लाभ होता है। ५. चोट की सूजन और पीड़ा मिटाने को इसकी छाल, नारियल की गिरी, अजवायन, वन हलदी और काली मिर्च बराबर पीसकर गरम करके लेप करना चाहिए।

अंजनफूल–[द्रा०] सुरमा। स्रोतोंजन।

अंजनकेशी–[सं०] १. नखी। नख। २. नलिका। विद्रुम लता।

अंजनकेशिका–[सं०] १. नखी। हट्टविलासिनी (गंध द्रव्य)। २. नलिका। विद्रुम लता।

अंजनत्रय–[सं०] } त्रिअंजन। तीन अंजन (पुष्पांजन,
अंजन त्रितय–[सं०] } कालांजन और रसांजन)।

अंजन दुकल्लु–[क०] सुरमा। स्रोतोंजन।

अंजनमु–[ते०] } अंजन वृक्ष। लिंब।
अंजनवृक्ष–[मा०] }

अंजनयुग्म–[सं०] दो अंजन (स्रोतोंजन और रसांजन)।

अंजनादि गण–[सं०] सौवीरांजन, रसांजन, नागकेशर, फूल प्रियंगु, नीलोत्पल, खस, नलिका, मधुक और पुन्नाग।

अंजनाधिका–[सं०] काली कपास। कालांजनी।

अंजनिक–[सं०] गंधनाकुली। रास्नाभेद।

अंजनिका–[सं०] काली कपास। कृष्णकार्पास। कालांजनी।

अंजनी–[सं०] १. कुटकी। कटुका। २. काली कपास। कालांजनी।

अंजरा–[फा०] शिरियारी। सुनिषण्णक। गुरुवा शाक।

अंजरी–[क०] अंजीर। काकोदुंबरिका।

अंजरूत–[फा०] लाई। कुंजद।

अंजलक–[फा०] जंगली अमरूद के बीज। इसको अरबी में 'वालज' कहते हैं।

अंजलि–[सं०] १. कलिंगमान तौल परिमाण। २. प्रसृति या ३२ तोले की तौल।

अंजलिका–[सं०] लजालू। लज्जावंती।

अंजलिकारका–[सं०] १. लजालू। लज्जावंती। छुई मुई। २. वराह-क्रांता। लैरी शाक।

अंजलिनी–[सं०] लजालु। लज्जावंती।

अंजवार–[फा० पं०] अजुवार। अंगवार।

अंजीर–[ने०] अयार। आंगयार।

[सं०] अंजीर। मंजुल। काकोदुंबरिका फल। [हि०] अंजीर। गूलर। खबार। अंजीरी। बेड़। बेड़ू। [बं०] आंजीर। पेयारा। बड़ पेयारा। [क०] मेडिपंडु। [ते०] मेडिपंडु। [फा०] तीन। [पं०] फगवारा। काक। कोक। फडु। इंज़र। फाग। फग। किर्मी। फगोरू। फागु। फाग। खवारी। फेगरा। थापुर। जमीर। धूरु। धुड़ी। दुद्दोलिया। किमरी। [पश०] फगवरा। फगवारा। [अफ०] अंजीर। इंजर। [रा० पू०] कबरी। [म० प्र०] घौउरा। [गु०] पिपरी। पेपरि। [उ० भा०] फगवारा। थपुर। [लै०] Ficus Palmata. Syn: Ficus Carica [अं०] Fig tree.

अंजीर एक काबुली मेवा है। इसका छोटा वृक्ष या झाड़ होता है। छाल चिकनी, खाकी रंग की और लकड़ी सफेद होती है। यह वृक्ष १०-१२ फुट तक ऊंचा होता है। पत्ते लंबे, चौड़े और बीच में कटे हुए तथा खुरदरे और रूखे होते हैं। फल गूलर के समान, आध से एक इंच के घेरे में गोलाकार, कच्चेपन में हरे, पकने पर कुछ पीले या बैंगनी रंग के और अंदर से बहुत लाल होते हैं।

काबुल, अफगानिस्तान, फारस आदि देशों के फल मीठे होते हैं। भारतवर्ष में भी इसका वृक्ष लगाया जाता है। यह संयुक्त प्रदेश, पश्चिमोत्तर भारत, पंजाब, सिंध और उससे पूरब की ओर, राजपूताना, अवध, मद्रास, बंबई, हिमालय तथा आबू पहाड़ पर पाया जाता है। यह दो प्रकार का होता है; एक आप ही आप जंगलों में उत्पन्न होनेवाला और दूसरा वह जिसे वाटिकाओं में लगाते हैं। जंगलों के पत्ते और फल बागी से छोटे होते हैं। तीन से चार वर्ष बाद यह फलने लगता है और साल में दो बार फलता है। पहली बार आषाढ़ और सावन में; दूसरी बार पूस और माघ में। फल मीठा और स्वादिष्ट होता है। वृक्ष तथा डालियों में चीरा देने से इसके प्रत्येक अंग से दूध निकलता है। अंजीर का वृक्ष प्रायः बीस वर्ष तक फलता है; फिर निर्जीव होकर सूख जाता है।

चित्र नं० ४ उस अंजीर का है जिसके फल रस्सी में गुथे हुए विदेश से आते हैं और बाजार में बिकते हैं तथा चित्र नं० ५ उस अंजीर का है जिसका वृक्ष यहाँ की वाटिकाओं में पाया जाता है।

मेटीरिया मेडिका के अनुसार गुण-दोष–इसके फलों में शक्कर का भाग अधिक रहता है तथा यह भीतर से लसीला और चिकना होता है; इस कारण यह स्निग्धकारक और संसन

अंजन वृक्ष

अंजीर
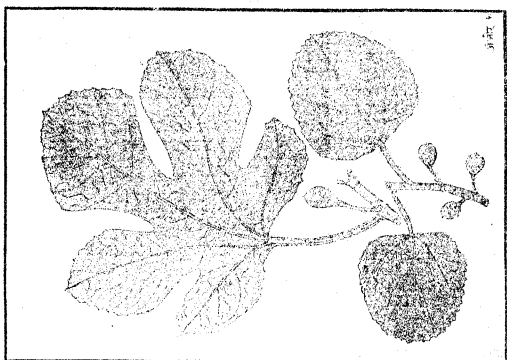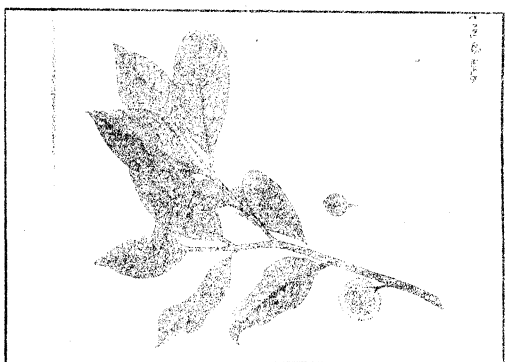
माना जाता है। प्रायः कोष्ठबद्धता और वस्ति के रोगों में पथ्य के रूप में व्यवहृत होता है। इसकी पुल्टिस भी बनाई जाती है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष–स्वादिष्ठ, रुचिकारी, पाक और रस में भारी, शीतल, रुधिर और पित्तविकार को शांत करनेवाला, वात-पित्तनाशक, कफ और आमवातकारक तथा नकसीर फूटने में हितकारी है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–पहले दर्जे में गरम और दूसरे में तर है। मृदु, वातनाशक, कांतिकारक, अपस्मार, पक्षवात और कफज रोगों को दूर करनेवाला, प्रकृति के लिये मृदुकारक, क्रम क्रम से रेचक तथा रोध, प्लीहा, शोथ, बहुमूत्र और वृक्क की कृशता नष्ट करनेवाला है। कास रोग में इसका शरबत लाभदायक है। यकृत और आमाशय के लिये हानिकारक है।

दर्पनाशक–बादाम और सातिर।

प्रतिनिधि–चिलगोजा और मुनक्का।

मात्रा–५-७ दाने।

प्रयोग–१. इसके बीज और छिलके खाने से मंदाग्नि और अफरा होता है। बालकों के श्वास में शक्कर और सिरके में पीसकर पिलाना चाहिए। २. शरीर की गर्म्मी मिटाने के लिये खाँड़ में मिलाकर खाना लाभदायक है। ३. घाव पकाने के लिये इसकी पुल्टिस बाँधना अच्छा है। ४. सफ़ेद कोढ़ के प्रारंभ में पत्तों का रस लगाना हितकारी है। ५. सूखी खाँसी में इसका सेवन करना गुणकारी है। ६. शरीरपुष्टि में (मोटा करने को) इसका सेवन करना लाभदायक है। ७. शोथ पर इसको सिरके में भिगोकर खाना चाहिए। ८. मसूड़ों के रोग में इसको पानी में उबालकर उस पानी से कुल्ली करना अच्छा है। ९. गुदा के फोड़े पर इसकी पुल्टिस बाँधना चाहिए। १०. रुधिर और मांस बढ़ाने के लिये इसका मुरब्बा सेवन करना अच्छा है। यह शीतल और सारक है। ११. शरीर के कठोर भाग पर पत्तों अथवा फलों की पुल्टिस लगानी चाहिए। १२. स्वाभाविक बद्धकोष्ठता में ताजे फलों का कुछ दिनों तक लगातार सेवन करना चाहिए। १३. चिंताजन्य शिरपीड़ा में वृक्ष की छाल की भस्म सिरके या पानी में पीसकर लेप करने से पीड़ा शांत होती है। १४. दंतपीड़ा में इसके दूध या दूधिया रस में रूई भिगोकर दाँत के नीचे दबाने से लाभ होता है। १५. फोड़े और गाँठों की सूजन पर इसको पीसकर जल में उबालकर गुनगुना लेप करना चाहिए। १६. दूध अथवा रुधिर का जमाव मिटाने के लिये इसकी लकड़ी की राख को पानी में घोलकर स्वच्छ जल निथारकर फिर उस जल में दूसरी राख घोलकर जल निथारे। सात बार इस प्रकार निथारा हुआ जल पिलाने से बहुत लाभ होता है।

अंजीर आदम–[फा०] गूलर। उदुंबर।

अंजीर दश्ती–[फा०]
अंजीर दस्ती–[फा०] } कठूमर। काकोदुंबरिका। कोठाडूमर।

अंजीर बेल–[हि०] गण्डमाला। कंठमाला रोग।

अंजीरी–[हि०] अंजीर। काकोदुंबरिका।

अंजीरे आदम–[फा०] गूलर। उदुंबर।

अंजीरे दश्ती–[फा०]
अंजीरे दस्ती–[फा०] } कठूमर। काकोदुंबरिका। कोठाडूमर।

अंजुबार–[फा०]
अञ्जुबार–[फा०] } अंजुवार। अंजबार। [पं०] अंजबार। बिलारी। मसलून।

लै०–Polygonum Viviparum. Syn: Polygonum Bistora.

यह हिमालय पहाड़ की नीची और ऊँची चोटियों पर काश्मीर से सिक्कम तक पाया जाता है।

यह क्षुप जाति की वनौषधि है। इसके डंठल ४ से १२ इंच तक ऊँचे, पतले और सीधे होते हैं। जड़वाली डंडी अँगूठे के बराबर मोटी होती है। जड़ के पत्ते बड़े, किंचित् अंडाकार और १ से ६ इंच तक के घेरे में होते हैं; किंतु ऊपर के पत्ते लंबे और पतले होते हैं। फूलवाली डंडी १ से ४ इंच तक लंबी, सीधी और पतली होती है। फूल लाल रंग के होते हैं और फल छोटे-छोटे तथा किंचित् त्रिकोणाकार होते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि इसका क्षुप ५-६ फुट ऊँचा होता है। इसकी जड़ औषधि के काम में आती है। यह देखने में लाल रंग की और स्वाद में फीकी होती है।

मेटीरिया मेडिका के अनुसार गुण-दोष–इसकी जड़ संकोचक तथा शोथ में लाभकारी है। इसका काढ़ा साम रोग में दिया जाता है। इसका कुल्ला मसूड़ों की सूजन और गले के घाव में लाभकारी है। इससे घाव धोने से वह स्वच्छ होता है। विषम ज्वर में इसको जिंतियाना के साथ सेवन कराते हैं। यह अतिसार और रुधिर-स्राव के प्रवाह को रोकनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–यह तीसरे दर्जे में शीतल और रुक्ष है। संपूर्ण अवयवों के रुधिर तथा फेफड़े और वक्षस्थल के रुधिर को रोधक है। पित्त और रुधिर के दाह को नाश करनेवाला, अर्श के रुधिर, मरोड़, वमन और जीर्णातिसार का वद्धक तथा नजले का रोधक है। शीत प्रकृतिवाले को हानिकारक है।

दर्पनाशक–सोंठ।

प्रतिनिधि–जरिश्क और गिले अरमनी।

मात्रा–४ से ६ माशे तक।

अंटी–[हि०] एरंड। अंडी। रेंडी। अरंड।

अंड–[सं०] १. कस्तूरी। मृगमद। मुश्क। २. अंडा। डिंब। ३. एरंड। रेंड़ी। अरंड। ४. अंडकोष। खुसिया।

अंडक–[सं०] अंडकोष। आँड़।

अंडकाकड़ी–[हि०]
अंडकाकरी–[हि०] } चकोतरा नीबू। मधुकर्कटी। पपई। एक प्रकार का बिजौरा।

अंडकोटरपुष्पा–[सं०]
अंडकोटरपुष्पी–[सं०] } वस्त्रांत्री। फंजी। विधारा-भेद।

अंडकोष–[सं०]
अंडकोषक–[सं०] } अंडक। खुसिया।

अंड खरबूज–[हि०]
अंड खरबूजा–[हि०] } पपीता। वातकुंभ फल। रहमेवा।

अंडग–[सं०] गेहूँ। गोधूम।

अंडगज–[सं०] चकवँड़। चक्रमर्द।

अंडज–[सं०] १. मछली। मत्स्य। २. पक्षी। चिड़िया। ३. कस्तूरी। मृगनाभि। मुश्क।

अंडजा–[सं०] १. साँप। सर्प। २. मछली। मीन। ३. पक्षी। चिड़िया। ४. कस्तूरी। मृगमद। मुश्क।

अंडवृद्धि–[सं०] कोषवृद्धि। [फा०] आबनजूल। वरम उल् खुसिया। अं० Hydrocele.

जिस रोग में वायु अपने कारणों से कुपित होकर नीचे को गमन करती है, सूजन और शूल उत्पन्न करती है, कोष में

विचरण करती हुई अंडकोष और वंक्षण में से अंड में प्राप्त होकर कोष को बढ़ानेवाली धमनियों को दूषित करके अंड को बढ़ाता है, उसको "अंडवृद्धि" कहते हैं। यह रोग वातादि दोषों से तीन प्रकार का तथा रक्तज, मेदज, मूत्रज और अंत्रज इन भेदों से सात प्रकार का होता है।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग संख्याएँ—अंगूर नं० २। अदरक नं० २३। अपराजिता नीली नं० १६। अमलतास नं० १६। अरनी नं० १६। आक लाल नं० ३०। एरंड नं० १७। एरंड का तेल नं० ११। कचूर नं० १४। कलुआ नं० ५। कपास के बीज नं० १६। कमीला नं० ८। करंज नं० ४। करनपात नं० १। गूगल नं० १५। जयन्ती नं० ६, १८। जीरा सफेद नं० २८। ढाक नं० १४। ढाक के फूल नं० ५, १०। तमाखू नं० १२, १४, २८। त्रिफला नं० ३। दाख नं० ३। दारु हलदी नं० १०। देवदारु नं० ६। धतूरा काला नं० ३३। बच नं० १०, ३८। बरियार नं० २२। बरियार बड़ी नं० ७। बोल नं० १६। भाग नं० १६, २३। भारंगी नं० ६। मरुआ नं० ४। मसूर नं० ८। महुआ नं० ६, ११। माजूफल नं० ११। मैनफल नं० ६। लता करंज नं० १४, १५, १६। शिलारस नं० ३। समुद्रफल नं० ८१। सरफोंका नं० २१। सुहागा नं० १३। हरीतकी नं० २६। हरीतकी चेतकी काली नं० २, ३। हलदी नं० १८।

अंडहस्ती–[सं०] चकवँड़। चकमर्द। पवाँर।

अंडा–[हिं०] अंडा। [सं०] डिंब। [अं०] Egg। बच्चों को दूध न पिलानेवाले मादा जंतुओं के गर्भाशय से उत्पन्न गोल पिंड जिसमें से पीछे से उस जीव के अनुरूप बच्चा बनकर निकलता है।

आयुर्वेद मतानुसार गुण-दोष–पक्षियों के अंडे पाक में मधुर, बलकारी, वातनाशक, मधुर, अत्यंत वीर्य-वर्द्धक और भारी होते हैं, पर अधिक स्निग्ध नहीं होते।

मछलियों के अंडे–अत्यंत पुष्टिकारक, बल-वर्द्धक, स्निग्धकारक, लघु, कफकारी, मेद को बढ़ानेवाले, ग्लानि उत्पन्न करनेवाले और प्रमेह को नाश करनेवाले होते हैं।

अंडा–[उ०] १. आमला। आमलकी। आँवला। २. [हिं०] अंडकोष। बेजा।

अंडा, मुर्गी का–[हिं०] मुर्गी का अंडा। [सं०] कुक्कुटांड। कुक्कुटगर्भ।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–इसके अंदर की जर्दी गर्म और स्नायु को जोड़नेवाली होती है तथा इसकी सफेदी तीसरे दर्जे में ठंढी और तर होती है। अध-उबाला अंडा रस को सम्यक् प्रकार से पकानेवाला, अल्पाहार, सूक्ष्म मलोत्पादक, हृदय, मस्तिष्क, शरीर और ओज को बल देनेवाला, उष्ण, प्रतिश्याय को वक्षस्थल में रोकनेवाला, वक्षस्थल की खुरखुराहट और पक्काशय के मुख से गिरते हुए रुधिर को रोकनेवाला और बालकों को दूध के स्थान में दूध के समान गुणकारी है। जर्दी की चिकनाई ओज को बल देनेवाली और केशों को अधिक तथा उत्पन्न करनेवाली होती है। इसके छिलके की भस्म शीघ्रपतन और स्त्रियों के श्वेत प्रदर तथा उससे उत्पन्न हुई दुर्बलता नष्ट करनेवाली, वक्षस्थल के रोगों को दूर करनेवाला और ओज को गुणकारी होता है। मुर्गी का अंडा आमाशय के लिये हानिकारक तथा पथरी और गुल्म उत्पन्न करनेवाला होता है।

अंडाली–[सं०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी।

अंडालु–[सं०] मछली। मत्स्य।

अंडिका–[सं०] तौल परिमाण ४. यव।

अंडिनी–[सं०] योनिरोग-विशेष।

अंडी–[हिं०] एरंड। अंड। रेंडी।

अंडुकु–[कु० ते०]
अंडुग–[कु० ते०]
अंडुग पिसुलु–[ते०]
} कुँदरू। कुन्दुरुक। शल्लकी निर्यास। सलई वृक्ष का गोंद। गुंदबरोसा।

अंतक–[सं०] कचनार। कांचनार वृक्ष।

अंतड़ी–[हिं०] आंत। पचौनी।

अंतमल–[हिं०] आंतमूल। अंतामल। [सं०] अंतमल। मलान्त। लोमश।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष–वमनकारक, पसीना लानेवाला और कफ को निकालनेवाला है। पसीना लाने और कफ निकालने के लिये सूखे पत्तों की मात्रा २ रत्ती और वमन के लिये १ माशा है।

अंतमारी–[बं०] रंगलता। मरोड़फली।

अंतरघुंगा–[द०] जलकुंभी। कुंभिका।

अंतर दामर–[ते०] १. जलकुंभी। कुंभिका। २. रासन। रास्ना। रायसन। अंतर दामर।

अंतरवेल–[को०] अमरवल्ली। आकाशबेल। अमरवेल। अमरलता।

अंतरुहा–[सं०] दूब सफेद। सफेद दूब। श्वेत दूर्वा।

अंतर इतमरा–[ते०]
अंतदामर–[ते०]
} जलकुंभी। कुंभिका।

अंतमल–[सं०] अंतमल। मलांत।

अंतमहानाद–[सं०] शंख।

अंतवृद्धि–[सं०] अंत्रवृद्धि (रोग)।

अंतवेग ज्वर–[सं०] ज्वर रोग का एक भेद जिसमें अधिक अंतदाह हो, प्यास हो, प्रलाप हो, श्वास हो, भ्रम हो, संधि और हड्डियों में शूल हो, पसीना न आवे और अधोवायु तथा मल अच्छी तरह बाहर न निकले।

अंतस्नेहफला–[सं०] कंटकारी सफेद। श्वेत कंटकारी। सफेद रिंगनी।

आंतका–[सं०] सातला। थूहर भेद।

आंतशा–[ते०] आँगा। अपामार्ग।

अंतामल–[बं०]
अंतामूल–[बं०]
} आंतमूल। अंतमूल।

अंत्य–[सं०] मोथा। मुस्तक।

अंत्यपुष्पा–[सं०] धातकी। धव। धवई।

अंत्रवासिका–[सं०] पाताल गरुड़ी। महिषवल्ली। जलजमनी।

अंत्रवल्ली–[सं०] सोमलता। सोमवल्ली।

अंत्रवृद्धि–[सं०] आंतों का बढ़कर उतरना। [अ०] फितक उल् अमआया। [अं० लै०] Hernia. वात को कुपित करनेवाले आहार के भक्षण करने से, शीतल जल में घुसकर स्नान करने से, आए हुए मलमूत्रादिक के वेग को धारण करने या रोकने से, नहीं आए हुए मलमूत्रादि को बलपूर्वक निकालने से, भारी बोझ ढोने से, अत्यंत मार्ग चलने से, टेढ़े-सीधे होकर चलने से, बलवान् से कुश्ती लड़ने से, विषम धनुष के चढ़ाने से तथा वात के कुपित करनेवाले अन्य कारणों से वायु कुपित होकर छोटी आंतों के अवयवों में प्रवेश कर उस देश को बिगाड़-

अंजुवार

अंधाहुली
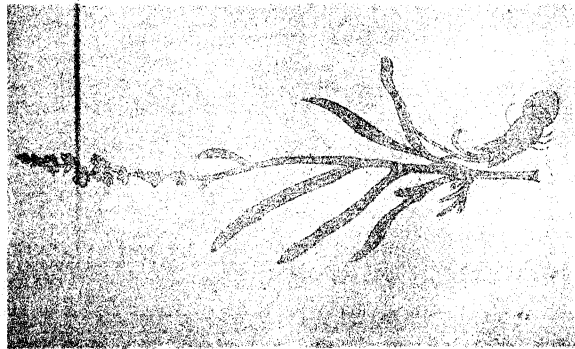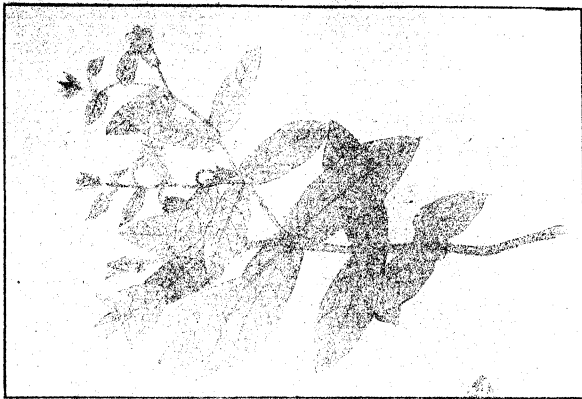
कर रहने के स्थान से उनको नीचे ले जाकर वंक्षण संधि में स्थित होकर उस स्थान में गाँठ के समान सूजन उत्पन्न करती है। फिर वहाँ ग्रंथि रूप से स्थित होकर कुछ काल में जब फल कोषों में प्राप्त होता है, तब पेट में अफरा, शूल और मलमूत्रादि के वेग को रोककर अंडवृद्धि करता है। हाथ से दबाने से यह गुड़-गुड़ शब्द करती हुई पेट में चली जाती है और छोड़ देने से अंडकोषों को फुलाकर उसी में आ जाती है।

तवृरोगनाशक ओषधि-प्रयोग और नं०–एरंड का तेल नं० १। केचुआ नं० १।

अंत्री–[सं०] विधारा। वृद्धदारु।

अंतःकुटिल–[सं०] शंख।

अंतःकोटरपुष्पिका–[सं०] } वस्तांत्री। फंजी। नील बेना।
अंतःकोटरपुष्पी–[सं०] }

अंतःसत्वा–[सं०] भिलावाँ। भल्लातक।

अँदरसा–[हिं०] एक प्रकार की मिठाई। अनरसा। धुले हुए चावलों के आटे में घी का मोयन देकर और उसे सानकर गुड़ के पानी में उबालकर छोटी छोटी लोई बनाकर पूरी के समान बेलते और एक ओर पोस्त के दाने लगाकर घी में पका लेते हैं। इसी को अँदरसा कहते हैं।

गुण–रुचिकारी, वृष्य, स्निग्ध तथा शीतल और अतिसार-नाशक है।

दूसरी क्रिया–धुले हुए चावलों के तीन सेर आटे में एक सेर मिस्री मिलाकर दही में भली भाँति मिलाते और एक दिन रख छोड़ते हैं। दूसरे दिन उपर्युक्त प्रकार से लोई बनाकर बेलकर एक ओर सफेद तिल लगाकर घी में तल लेते हैं।

गुण–यह बलकारी, कफ तथा वात का नाशक, हृदय को बलकारी, अति शीतल और पुष्टिकारक है।

तीसरी क्रिया–धुले हुए चावलों के आटे में सम भाग मिस्री मिलाकर पानी में सानकर उक्त विधि से पकाते हैं।

गुण–वृष्य, हृदयशोधक, धातुवर्धक, पित्तनाशक, भारी, रुचिकारी, तृप्तिदायक तथा पुष्टि, कांति और बल देनेवाला है।

अंदलीप–[अ०] बुलबुल। हजारदास्ताँ।

अंदुग–[ते०] } शालई। शल्लकी वृक्ष। सलई का पेड़।
अंदुग–[ते०] }

अंध–[सं०] १. नेत्ररोग। तिमिर रोग। मंद दृष्टि। २. भात। भक्त।

अंधक–[सं०] तुंबरु। तुंबुरु। सौरभ।

अंधकाक–[सं०] मुर्गाबी। जलकाक।

अंधपुष्पी–[सं०] अंधाहुली। अधःपुष्पी।

अंधपूतना–[सं०] बालग्रह रोग।

अंधमूषिका–[सं०] देवदाली। बन्दाल। सोनकसार।

अंधरी हिंद–[फा०] ओड़हुल। ओड़ पुष्प। गुड़हल।

अंधाहुली–[हिं०] [सं०] १. अंधपुष्पी। रोमालु। गोलोमी। अधोमुखा। धेनुजिह्वा। अधःपुष्पी इत्यादि। [हिं०] औंधाहुली। औंधाहुली। औंधाफूली। औंधाफूली। गुठौली। छोटा कुलफा। [बं०] चोरहुली। [मरा०] पाथरी। [गु०] ऊँधाफुली। ऊँधाफूली। [क०] हेटमुंडिया। [मा०] भिंघी। लश्शान कल्प। [पं०] कौरी बूटी। कटमंडू। [सिं०] गाओजवाँ। [संथा०] हितमुदिया। हेतमुदिया। [कु०] कटमंडी। [कारा०] रतीसुखं। नीलकराई। [ता०] कजुथई तुंबई। [ते०] गुसवा गुत्ति। [लै०] Trichodesma Indicum. Syn: Borago Indica.

अंधाहुली दो प्रकार की होती है। एक का क्षुप कुछ बड़ा और पत्ते चौड़े तथा दूसरे का क्षुप कुछ छोटा और पत्ते सँकरे तथा लंबे होते हैं। चित्र नं० ७ बड़ी अंधाहुली का है जिसका उल्लेख वनौषधि-प्रकाश में किया गया है। इसका क्षुप गोरखपुर से प्राप्त करके चित्र तैयार किया गया है। यह पश्चिमी प्रांतों में तो अधिक पाई जाती है, किन्तु पूरब की ओर देखने में नहीं आती।

चित्र नं० ८ उस अंधाहुली (छोटी अंधाहुली) का है जिसको पाश्चात्य चिकित्सकों ने ग्राह्य किया है। यह चित्र मेटीरिया मेडिका से लिया गया है। यह भारतवर्ष के प्रायः सब प्रांतों में पाई जाती है; किंतु बंगाल में बहुत कम देखने में आती है।

यह क्षुप जाति की वनस्पति सीधी और रोमयुक्त होती है। डंडी सीधी या तिरछी १८ इंच तक ऊँची होती है। सब पत्ते समवर्ती, किंतु ऊपरवाले विषमवर्ती, १ से ४ इंच तक लंबे और अनीदार होते हैं। फूल पहले फीके नीले रंग के, फिर सफेदी मायल हो जाते हैं। फल छोटे छोटे खुरदरे, त्रिकोणाकार, पकने पर सफेद या नीलापन लिए होते हैं। फूल और फल भूमि की ओर झुके रहते हैं।

यह क्षुप जाति की वनौषधि प्रायः बरसात के दिनों में खेतों और पथरीली तथा रेतीली भूमि में अधिक पाई जाती है। इसका क्षुप दो फुट तक ऊँचा होता है। पत्ते लंबे, बीच में किंचित अंडाकार अथवा गोलाई लिए हुए होते हैं। फूल फीका आसमानी रंग का नीचे को झुका हुआ होता है, इसी कारण इसका नाम औंधाफूली (अधःपुष्पी) है। इसका समस्त क्षुप रोओं से भरा रहता है, इसलिए इसका नाम "रोमालु" भी है। इसकी जड़ भूरी अथवा काले रंग की, ऊपर की छाल पतली और भीतर की रस-भरी सफेद होती है। इसका क्षुप सूखने पर काला हो जाता है।

चित्र नं० ९ भी इसी अंधाहुली का है। इसका क्षुप बिहार प्रांत से प्राप्त करके चित्र बनाया गया है। इसका क्षुप, पत्ते, फूल, फलादि उक्त अंधाहुली से छोटे होते हैं। संभवतः इसका कारण मिट्टी और जल-वायु है। यहाँ देहातों में इसको गुठौली कहते हैं।

मेटीरिया मेडिका के मतानुसार गुण-दोष–इसकी जड़ और पत्ते ओषधि-प्रयोग में आते हैं। इसकी सर्पविषनाशक शक्ति प्रसिद्ध है। यह संशोधक होती है और इसके पत्तों का रस स्वच्छताकारक है। दक्षिण में यह क्षुप कोमलताकारक पुल्टिस के समान व्यवहार में आता है। छोटा नागपुर में विशेषकर संधि की सूजनपर इसकी जड़ पीसकर लगाते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष–नेत्रों को हितकारी और मूढ़ गर्भ को अपकर्षण करनेवाली है।

प्रयोग–१. फोड़ों पर पत्तों को पीसकर पुल्टिस बाँधनी चाहिए। २. सर्पविष पर पत्तों का काढ़ा मिर्च डालकर पिलाना लाभकारी है। ३. प्रमेह में फूलों को मिस्री के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ४. कास और श्वास में बीजों को मधु में पीसकर गोली बनाकर सेवन करना चाहिए। ५. यदि बैल के कंधे पक गए हों और उनमें कीड़े पड़ गए हों तो मंगलवार को इसकी जड़ लाकर सींगों में बाँधने से कीड़े मर जाते हैं। ६. सिंगरफ भस्म करने के लिये इसके पंचांग की लुगदी में शुद्ध किया हुआ सिंगरफ रखकर कपड़ा लपेटकर पाँच सेर उपलों की अग्नि देने

से उत्तम लाल रंग की भस्म तैयार होती है। यह भस्म अनुपान-भेद से अनेक रोगों को नष्ट करनेवाली है।

[हिं०] २. अर्कपुष्पी। अर्कपुष्पिका। ३.[सं०]तरवड़। आहुल्य।

अंधाहोली-[हिं०] अंधाहुली। अधःपुष्पी।

अंधिका-[सं०] सरसों। सर्षप।

अंधुल-[सं०] सिरस। शिरीष वृक्ष।

अँधेरा के बीज-[हिं०] } हब्बुलास। आसवृक्ष। मोरद।
अँधेरे के बीज-[हिं०]

अंध्र देश की सुपारी-[हिं०] सुपारी अंध्र देश की। आंध्रोद्भव पूग।

अंपल-[मला०] कुमुद लाल। रक्तोत्पल। लाल कुमुद।

अंपुलै-[ता०] अंबाडा। आम्रातक।

अंबक-[सं०] १. ताँबा। ताम्र धातु। २. मौलसिरी। वकुलवृक्ष।

अंबज-[अ०] आम। आम्र।

अंबट-[मु०] बायविडंग। विडंग।

अंबट वेल-[मरा०] अश्वमूलपर्णी। रामचना। इमिर्ती।

अंबटेमर-[खा०] } अंबाडा। आम्रातक। आमड़ा।
अंबड़ा-[मु०]

अंबत-[मु०] बायविडंग भेद। विडंग भेद।

अंबर-[सं०] १. कपास। कार्पास। २. अबरक। अभ्रक। ३. [यू०] अंबर। [सं०] अग्निजार। [अ०] अंबर अशहब।

यह एक महासुगंधित द्रव्य है जो देखने में कृष्ण वर्ण का और छूने में चिकना तथा स्वाद में कड़वा होता है। लोग कहते हैं कि यह एक समुद्री जीव की विष्ठा है और किसी के मत से एक वृक्ष का गोंद है; किंतु कई आचार्यों ने सिद्ध किया है कि अंबर का संस्कृत नाम अग्निजार है अथवा अग्निजार और अंबर एक ही पदार्थ है। यह भारतीय महासागर आदि में प्रवावस्था में मिलता है तथा भारतीय समुद्र के निकटवर्त्ती महाद्वीपों में पाया जाता है; एवं हिंदुस्तान, अफ्रिका और ब्रेजिल के आस पास के समुद्रों में और इनके किनारों के पास तरता हुआ मिलता है। यह मोम के समान, वर्ण में सफेद, धूसर, पीत अथवा काले रंग का होता है और श्वेत पाषाण के समान कर्बुरित होता है। जो अंबर सफेदी लिए हुए कुछ पीले रंग का छींटेदार हो, वह उत्तम समझा जाता है। हरे और काले रंग का अच्छा नहीं होता। यह स्वाद में चरपरा, स्निग्ध और सुगंधित होता है।

कहते हैं कि अंबर ह्वेल मछली की अँतड़ियों में जमी हुई एक चीज है जो भारतवर्ष, अफ्रिका और ब्रेजिल के समुद्री किनारों पर बहती हुई पाई जाती है। ह्वेल का शिकार भी इसके लिये होता है। अंबर बहुत हलका और बहुत शीघ्र जलनेवाला होता है तथा आँच दिखाते रहने से बिल्कुल भस्म होकर उड़ जाता है। इसका व्यवहार ओषधियों में होने के कारण यह नीकोबार (कालेपानी का एक द्वीप) तथा भारतीय समुद्र के और और टापुओं से आता है। प्राचीन काल में अरब, यूनानी और रोमन लोग इसे भारतवर्ष से ले जाते थे। इससे राजसिंहासन के सुगंधित किए जाने का उल्लेख जहाँगीर ने किया है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष-कटुरस, उष्णवीर्य्य, लघुपाकी, पित्तकारी तथा कफ, वात, सन्निपात और शूल का नाश करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष-दूसरे दर्जे में गरम और पहले में रुक्ष, प्राणरक्षण, तीनों शक्तियों को दृढ़ करनेवाला, प्रकृति को प्रसन्न करनेवाला, वास्तविक उष्णता और बाह्य तथा आभ्यंतरिक इंद्रियों को पुष्ट करनेवाला, रोध-उद्घाटक, ओजप्रद तथा वृद्ध को अनुकूल, मस्तिष्क संबंधी रोग, हृदय रोग और यकृत् रोग का नाश करनेवाला एवं हृदय की व्याकुलता और महामारी का हरण करनेवाला है। विषयशक्ति को बढ़ाने और वाजीकरण के लिये लिंगेंद्रिय पर इसका लेप करना गुणकारी है। आँत और पित्त को हानिकारक है।

दर्पनाशक-बबूर का गोंद और कपूर।

प्रतिनिधि-कस्तूरी और केसर।

मात्रा-१ से ३ रत्ती।

प्रयोग-१. यह यूनानी ओषधि-प्रयोग में अधिक व्यवहार में आता है। पुरुषार्थ और मानसिक शक्तियों को बढ़ाने के लिये यह एक उत्तम ओषधि है। २. कफज रोग में इसको पान के बीड़े में रखकर खाने से लाभ होता है। ३. वाजीकरण के लिये सोने का वर्क, पीसा हुआ मोती और अंबर मधु के साथ सेवन करने से फायदा होता है। ४. वातज रोग में इसको लौंग और जायफल के साथ सेवन करना चाहिए। ५. वातरोग में वातनाशक तेल में मिलाकर मालिश करने से अधिक लाभ होता है। ६. विष पर इसको घृत में मिलाकर देना चाहिए। ७. उन्माद रोग पर और स्मरण-शक्ति को बढ़ाने के लिये अंबर, ब्राह्मी और शंखपुष्पी को मधु में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। ८. शीत और पसीना दूर करने के लिये अंबर, केसर, कस्तूरी और शुद्ध शिंगरफ को पान के रस में खरल करके गोलियाँ बनाकर सेवन करना चाहिए।

अंबर अशहब-[अ०] अंबर (सुगंध-द्रव्य)।

अंबर कंद-[हिं०] अंबर कंद। सकाकुल भेद। शालब भेद। [सं०] सुधामूली भेद। [लै०] Eulophia nuda.

यह हिमालय पहाड़ के गरम प्रांतों में नेपाल से पूरब की ओर, आसाम, खासिया पहाड़ और मैनपुर में तथा दक्खिन में कोंकण से दक्षिण की ओर पाया जाता है।

अंबर कंद सालब मिस्री की जाति का कंद है। इसका गुल्म हलदी के समान होता है। पत्ते १० से १४ इंच तक लंबे, अनीदार और चौड़ाई में अनियमित होते हैं। फूल बड़े, हरे रंग के या कालापन लिए लाल रंग के होते हैं।

इसका कंद प्रयोग में आता है और सालब मिस्री की जगह व्यवहृत होता है।

अंबरद-[सं०] कपास। कार्पासी।

अंबरबेद-१. [यू०] अजदा। अजदा कबीर। यह एक यूनानी औषधि इसी नाम से प्रसिद्ध है। इसको अरबी में 'आदह' कहते हैं। रंग काला, पत्तियाँ हरी और सफेद तथा फूल पीले होते हैं। इसका स्वाद कड़वा, तीव्र गंधयुक्त होता है। यह नदियों के किनारे होनेवाली एक प्रकार की घास है; इसकी डालियों से बाल के समान जटाएँ निकलकर लटकती रहती हैं।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष-रेचक, मूत्रल, रक्तशोधक, दोषों को मृदु करनेवाली, बुद्धिवर्द्धक, संपूर्ण अवयवों के रोध का उद्घाटक तथा उदरकृमि, वात-विकार और विष का नाश करनेवाली एवं बिच्छू के विष को शांत करनेवाली है। शिरपीड़ा उत्पन्नकारक और आमाशय को विकृत करनेवाली है।

दर्पनाशक-धनिया।

प्रतिनिधि-पहाड़ी पुदीना।

मात्रा-२ से ४ माशे तक।

अंधाहुली छोटी

अंबर कंद

२. अंजदा।
अंबरबेल–[मु०] गिलोय। गुडूची।
अंबरा–[सं०] १. कपास। कार्पास वृक्ष। २. [हिं० कोंड] आमड़ा। आम्रातक।
अंबरिष–[सं०] आमड़ा।
अंबरी–[सं०] १. आमड़ा। आम्रातक। २. [द०] चूका शाक। चुक्रिका। ३. [सं०] माचिका। मोइया। ४. [गारो०] आंवला। आमलकी।
अंबरीय–[सं०] } आमड़ा। आम्रातक।
अंबरीष–[सं०] }
अंबल–[ता०] १. कमल। पद्म। २. कुमुद लाल। रक्तोत्पल। लाल कुमुद। ३. [पं०] आंवला। आमलकी।
अंबलकुटा–[हिं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल।
अंबलपिष्ट–[सं०] चांगेरी। अंबिलोना।
अंबलाचेट्टु पिटें–[तै०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबली–[अ० प०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबष्ठका–[सं०] १. पाठा। पाढ़ी। २. भारंगी। ब्राह्मणयष्टिका। भनेठी। ३. चांगेरी। खटकल। तिपत्ती। ४. जूही। यूथिका। ५. मोरशिखा। मयूरशिखा। ६. माचिका। मोइया। साकुरुंड। ७. आमड़ा। आम्रातक।
अंबष्ठकी–[सं०] १. पाठा। पाढ़ी। २. भारंगी। ब्राह्मणयष्टी। ३. चांगेरी। अंबिलोना। खटकला। ४. जूही। यूथिका। ५. माचिका। मोइया। ६. आमड़ा। आम्रातक। ७. मोरशिखा। मयूरशिखा।
अंबष्ठा–[सं०] } १. पाठा। पाढ़ी। २. भारंगी। ब्राह्मणयष्टी। ३. चांगेरी। ४. माचिका। मोइया। खटकल आमला। ५. जूही। यूथिका। ६. मोरशिखा। मयूरशिखा। ७. माचिका। मोइया। ८. आमड़ा। आम्रातक। अमला।
अंबष्ठिका–[सं०] }
अंबष्ठी–[सं०] पाठा। पाढ़ी।
अंबह–[फा०] १. आम। आम्र। २. [यू०] जामफल। सफरी।
अंबा–[सं०] १. माचिका। मोइया। २. पाठा। पाढ़ी। ३. [फा० खा०] आम। आम्र।
अंबाडा–[हिं०] आमड़ा। आम्रातक। अमरा। अमला। [द०] माचिका। मोइया। अंबष्ठा।
अंबाडा पान–[हि०] पान अंबाडा। अम्लवारी पर्ण। अम्लबाटी पान।
अंबाडो–[मा०] अंबाडा। आम्रातक।
अंबादि–[मरा०] १. माचिका। २. मोइया।
अंबानुँ झाड़–[गु०] आम। आम्रवृक्ष।
अंबा भोसा–[भील०] कचनार सफेद। श्वेतकांचन वृक्ष। सफेद कचनार।
अंबारि–[हिं०] माचिका। मोइया।
अंबालमु–[तै०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबालिका–[सं०] १. माचिका। मोइया। २. पाठा। पाढ़ी। पुरइन पाती।
अंबावट–[हिं०] अमावट। आम्रवर्त।
अंबि–[सं०] भेड़ा। मेष।
अंबिका–[सं०] १. माचिका। मोइया। अंबष्ठा। २. मैनफल। मदन। करहर। ३. कुटकी। कटु रोहिणी। कटुका।
अँबिया हरदी–[हिं०] }
अँबिया हर्दी–[हिं०] } आमा हलदी। अमिया हलदी। आम्रगंध हरिद्रा।
अँबिया हलदी–[हिं०] }
अँबिया हल्दी–[हिं०] }
अंबिलोणा–[सं०] } चांगेरी। चौपतिया। खटकल बूटी।
अंबिलोना–[हिं०] }
अंबु–[सं०] १. सुगंधबाला। नेत्रबाला। बालक। २. जल। पानी।
अंबुकंटक–[सं०] घड़ियाल। नक्र।
अंबुकंद–[सं०] सिंघाड़ा। शृंगाटक।
अंबुक–[सं०] १. आक सफेद। श्वेतार्क। मदार। सफेद आक। २. एरंड लाल। रक्तैरण्ड। लाल अण्डी।
अंबुकिट–[सं०] } घड़ियाल। नक्र। मगर।
अंबुकित्र–[सं०] }
अंबुकीश–[सं०] १. गोह। गोधा। २. सूँस। शिंशुमार।
अंबुकुक्कुटिका–[सं०] } १. प्लव (पक्षी)। जल में तैरनेवाली चिड़िया। हंस, सारस, चकवा, बगुला, बत्तक आदि। २. मुर्गाबी। जलकुक्कुट।
अंबुकुक्कुटी–[सं०] }
अंबुकूर्म–[सं०] गोह। गोधा।
अंबुकृष्ण–[सं०] जल-पीपल। जल-पिप्पली।
अंबुकेशर–[सं०] बिजौरा नींबू। बीजपूर।
अंबुचर–[सं०] १. कुलेचर। जलचर। जल में रहनेवाले जीव। २. जल चौलाई। कंचट।
अंबुचाम–[सं०] सेवार। शैवाल।
अंबुचारिणी–[सं०] स्थल कमल। स्थल पद्म। पद्मचारिणी।
अंबुचुक–[म० प्र०] चूकाशाक। चुक्रिका।
अंबुज–[सं०] १. इज्जल। हिज्जल वृक्ष। २. जलबेंत। विकुंचक। ३. जलचालाई। कंचट। ४. कुलेचर। जलचर। जल में रहनेवाले जीव। ५. कमल। पद्म।
अंबुजामलकी–[सं०] पानी आंवला। प्राचीनामलक।
अंबुट–[सं०] अश्मंतक। आबुटा वृक्ष।
अंबुड–[उ०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबुतचुक–[म० प्र०] चूका (शाक)। चुक्रिका। खटपालक।
अंबुताल–[सं०] सेवार। शैवाल।
अंबुद–[सं०] मोथा। मुस्तक।

अंबुधर-[सं०] १. नागरमोथा। नागरमुस्तक। २. भद्रमोथा। भद्रमुस्तक।
अंबुधि-[सं०] समुद्र। सागर।
अंबुधिफल-[सं०] समुद्रफल। समुंदर फल।
अंबुधिफेन-[सं०] समुद्रफेन। समुंदर फेन। अब्धि-कफ।
अंबुधिश्रवा-[सं०] } घीकुवार। घृतकुमारी।
अंबुधिस्रवा-[सं०] }
अंबुनाम-[सं०] १. सुगंधबाला। बालक। नेत्रबाला। २. हाऊबेर। हवुषा।
अंबुप-[सं०] चकवँड़। चक्रमर्द। पवांर।
अंबुपत्रा-[सं०] उटंगन। उच्चटा।
अंबुपत्रिका-[सं०] } १. उटंगन। उच्चटा। २. गुंजा लाल। रक्त-गुंजा। ३. गुंजा सफेद। श्वेत गुंजा।
अंबुपत्रा-[सं०] }
अंबुप्रसाद-[सं०] } निर्मली। कतक वृक्ष।
अंबुप्रसादन-[सं०] }
अंबुप्रसादन फल-[सं०] निर्मली (फल)। कतक वृक्ष।
अंबुभृत-[सं०] मोथा। मुस्तक।
अंबुमयूरक-[सं०] जलापामार्ग। जलचिचड़ा। जलचिटचिटा।
अंबुमात्रज-[सं०] घोंघा। शंबूक।
अंबुयष्टिका-[सं०] भारंगी। भार्गी।
अंबुरुह-[सं०] कमल। पद्म।
अंबुरुहा-[सं०] १. स्थल कमल। स्थल पद्म। २. कमलिनी। पद्मिनी।
अंबुर्री-[कोल०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबुल-[पं०] आँवला। आमलकी।
अंबुवल्लिक-[सं०] घोंघा। शंबूक।
अंबुवल्लिका-[सं०] करेला। कारवेल्ल।
अंबुवल्ली-[सं०] १. करेली। कारवेली। २. जल-पीपल। जल-पिप्पली।
अंबुवारिणी-[सं०] स्थल-कमल। स्थलपद्म।
अंबुवासिनी-[सं०] १. पाढ़र। पाटला वृक्ष। २. पाढ़र नं० १। पाटला।
अंबुवासी-[सं०] पाढ़र। पाटला वृक्ष।
अंबुवाह-[सं०] मोथा। मुस्तक।
अंबुवेतस-[सं०] जलबेंत। निकुंचक।
अंबुशिरिषिका-[सं०] } जल सिरस। टिंटिनी।
अंबुशिरीष-[सं०] }
अंबुशुक्ति-[सं०] जल-सीप। जल-शुक्ति।
अंबुस अलव-[अ०] मकोय। काकमाची।
अंबुसापणी-[सं०] जोंक। जलौका।
अंबुसादन-[सं०] निर्मली। कतक।
अंबुसारा-[सं०] केला। कदली वृक्ष।
अंबुसालब-[सं०] मकोय। काकमाची।
अंबुसाह्व-[सं०] कुंद। कुंद-पुष्प-वृक्ष।
अंबे-[फा०] आम। आम्र।
अंबेडा-[गु०] अंबाडा। आम्रातक।
अंबेरा-[कुर०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबेलिया-[सिह०] वायविडंग। विडंगा।
अंबेहलद-[मरा०] गंध-पलाशी। कचूर-भेद। कपूर-कचरी।
अंबोधा-[हिं०] आमड़ा। आम्रातक।
अंबोर-[मु०] तूत नं० १। तूद वृक्ष।
अंबोहम-[माल०] आमड़ा। आम्रातक।
अंभ-[सं०] १. जल। पानी। २. सुगंधबाला। नेत्रबाला। बालक।
अंभपा-[सं०] पपीहा। चातक पक्षी।
अंभफल-[सं०] बिहीदाना। बीहदाना।
अंभसार-[सं०] मोती। मुक्ता।
अंभसू-[सं०] घोंघा। शंबूक।
अंभु-[लध०] काला जीरा नं० २। स्याह जीरा। कृष्णजीरक।
अंभेडा-[गु०] आमड़ा। आम्रातक। अमरा। अमला।
अंभोज-[सं०] १. कमल। पद्म। २. जलबेंत। निकुंचक।
अंभोजनाल-[सं०] कमल की नाल। पद्मनाल।
अंभोजा-[सं०] जल मुलेठी। वल्लीयष्टी मधु। जलयष्टी।
अंभोजिनी-[सं०] कमलिनी। पद्मिनी।
अंभोटा-[उ०] कचनार सफेद। श्वेत कांचन वृक्ष।
अंभोद-[सं०] १. भद्रमोथा। भद्रमुस्तक। २. पुंडेरी। प्रपौंडरीक। पुंडरिया।
अंभोदर-[सं०] मोथा। मुस्तक।
अंभोधिपल्लव-[सं०] } मूँगा। प्रवाल।
अंभोधिवल्लभ-[सं०] }
अंभोमुक-[सं०] }
अंभोरुह-[सं०] कमल। पद्म।
अंभोरुहकेशर-[सं०] कमलकेशर। पद्मकेशर।
अँवला-[मरा०] आँवला। आमलकी।
अंश-[सं०] स्कंध। कंधा।
अंशवान-[सं०] सोमलता। सोमवल्ली।
अंशुक-[सं०] तेजपत्ता। पत्रज।
अंशुकाय-[सं०] मूँगा। प्रवाल।
अंशुपर्णिका-[सं०] } सरिवन। शालिपर्णी। सालपान।
अंशुपर्णी-[सं०] }
अंशुमती-[सं०] सरिवन। शालिपर्णी।
अंशुमतीफला-[सं०] } केला। कदलीवृक्ष। रंभा।
अंशुमत्फला-[सं०] }
अंशुमत्फली-[सं०] केला। कदली।

अंशुमा-[सं०] वंशलोचन। वंशरोचना।

अंशुमान-[सं०] सोमलता। सोमवल्ली।

अंशूदक जल-[सं०] दिन को धूप में और रात को शीत में रखा हुआ पानी।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—सब प्रकार के रोगों को दूर करनेवाला, कफ, मेद और वातनाशक तथा दीपन, वस्तिशोधक, श्वास और खाँसी को दूर करनेवाला और नेत्र-रोग-नाशक है।

अंस-[सं०] कंध। कंधा।

अंसपारिक-[सं०] बकायन। महानिंब।

अंह्रिपर्णी-[सं०] पिठवन। पृश्निपर्णी।

अश्राकुल-[अ०] जवासा। यवास। धमासा भेद।

अइल-[मु०] बिजैसार। असनवृक्ष। पीतसाल। असना।

अइलकुस-[तै०] लोणा छोटी। लोणी। लोनिया। नोनी शाक।

अइस-[मो०] अतीस। अतिविषा।

अइलकुस-[ते०] लोणा छोटी। लोणी।

अउ-[उ०] लिसोरा। श्लेष्मांतक।

अउलकम-[अ०] इना। इंद्रवारुणी।

अपमव कोला-[सिह०] आमड़ा। आम्रातक। अमड़ा।

अओदैओाचि-[ता०] झिंझीरीटा। झिंझिरिष्टा।

अओार-[पं०] १. आलूबुखारा। आलूक। २. सतालुक। शफ्तालू।

अओारा-[मरा०] ईख। इक्षु। गन्ना।

अकंदा-[मु०] आक। अर्कवृक्ष। अकाव। अकवन।

अकक-[अ०] }
अककअ-[अ०] } कौवे के समान एक काला पक्षी अथवा एक जंगली कौवा। महू। फालनहवह।

अकड़ाहट-[हिं०] धनुस्तंभ। धनुर्वात।

अकड़ा-[गु०] आक। अर्क। मदार।

अकत मकत-[अ०] लताकरंज। कंटकरंज। कठकरंज।

अकदचा झाड़-[मरा०] }
अकर-[मु०] } आक। अर्क वृक्ष। अकाव। अकवन।

अकरकरहा-[हिं०] १. अकरकरा। आकर करभ। २. अकरकरा नं० १। ३. [पं०] अकरकरा नं० २।

अकरकरा-[हिं०] १. अकरकरा। २. अकरकरा नं० १। ३. अकरकरा नं० २। [सं०] आकार करभ। आकल्लक। अकल्लक इत्यादि। [बँ०] आकरकरा। [पं०] अकरकरा। [मरा०] अकलकारा। [गु०] अकलकरो। [मा०] अकलकरो। [तै०] अक्करकरमु। [द्रा०] अक्करकारम्। [फ०] अकलकर्रे। [हिं०] अकर्करा। [अ०] आकरकरहा। [लै०] Anacyclus Pyrethrum [अं०] Pellitory root; The Pellitory of Spain.

यह अरब और भारतवर्ष की एक प्रसिद्ध बूटी है, जो अफ्रिका के उत्तरी प्रदेशों में अधिक उत्पन्न होती है और वहाँ से इस देश में आती है। इसको अँगरेजी में "प्लेटोरी रूट" और लैटिन में "पाईरथराई रैडिक्स" कहते हैं। इसके क्षुप को लैटिन में "ऐनेसाइकिलस पाईरथरम्" कहते हैं। यह क्षुप जाति की वनौषधि पहाड़ी भूमि में अधिक पाई जाती है। इसकी छोटी छोटी अनेक शाखाएँ जमीन से निकलकर प्रसर के समान भूमि पर फैलती हैं। चौमासे की प्रथम वर्षा में इसके छोटे छोटे क्षुप निकलते हैं। डाली रोएँदार होती है। डाली, पत्ते और फूल सफेद बाबूने के समान होते हैं। डाली के ऊपर गोल गुच्छेदार छतरी के आकारवाला तथा बाबूने से विपरीत पीले रंग का फूल आता है। बीज सोआ के समान होते हैं। इसकी जड़ २ इंच से ४ इंच तक लंबी और आधे से पौन इंच तक मोटी होती है। छाल मोटी, भूरी और झुर्रीदार होती है। कुछ लोग कहते हैं कि इसकी जड़ एक बित्ता लंबी और छोटी उँगली के समान मोटी होती है। इसकी जड़ ही औषधि के काम में आती है। इसमें विशेष प्रकार की कोई गंध नहीं होती। यही जड़ अकरकरा कहलाती है और इसकी शक्ति सात वर्ष तक बनी रहती है। इसको चबाने से मुख में जलन होती है एवं मुख और कंठ में वह काँटे के समान चुभती हुई मालूम पड़ती है और तब कड़वे, चरपरे, कसैले आदि का कुछ भी ज्ञान नहीं होता।

कहते हैं कि यह मिस्र देश की पहाड़ी भूमि में बहुत उत्पन्न होती है तथा बंगाल, महाराष्ट्र और गुजरात में भी पाई जाती है। इसकी डंडी पोली होती है। महाराष्ट्र और गुजरात में इस डंडी का अचार और शाक बनाते हैं।

यद्यपि कहा जाता है कि अकरकरे का क्षुप भारतवर्ष के कई प्रांतों में पाया जाता है, किंतु यह अकरकरा मुझको प्राप्त नहीं हो सका। इसका डाक्टरी नाम "ऐनेसाइकिलस पाइरथरम" है, जो विदेश से आता है।

भारतवर्ष में दो प्रकार का अकरकरा होता है जिसका उल्लेख नीचे किया जाता है—

अकरकरा नं० १—यह क्षुप जाति की वनस्पति वर्षजीवी होती है और इस देश की वाटिकाओं में लगाई जाती है। इसका क्षुप अकरकरा नं० २ के क्षुप के समान है, पर अधिक दृढ़ और रसदार होता है। पत्ते भी बड़े होते हैं। पर्याय—[हिं०] अकरकरा। [बँ०] रोशिनिया। [मु०] अकरा। [पं०] अकरकरहा। पोकर मूल। [मरा०] उकरा। [तै०] मराति मोग्गा। मराति सिगे। [लै०] Spilanthes Oleracea Syn: Spilanthes Acmella.

इसके समस्त क्षुप का स्वाद अकरकरे के समान तीक्ष्ण, चरपराहटवाला होता है, विशेषकर फूलों की घुंडी अधिक

उष्णतायुक्त और जलन उत्पन्न करनेवाली होती है, जिससे मुख से लार अधिक गिरती है। इसी हेतु माळियों ने इसका नाम अकरकरा रखा है। तुतलाकर बोलनेवाले बालकों के लिये यह बहुत उपकारी औषध है। कुछ लोग दंतपीड़ा होने पर फूलों की घुंडी भी चबाते हैं। यह अकरकरा अत्यंत उत्तेजक होता है; इस कारण शिरपीड़ा, जिह्वास्तंभ, गले की पीड़ा, मसूड़ों के दर्द और दंतपीड़ा में व्यवहृत होता है।

अकरकरा नं० २—इसका लैटिन नाम Spilanthes Acmella है। यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में पाया जाता है। इसका क्षुप वर्षजीवी होता है। इस पर थोड़े-बहुत रोएँ होते हैं। कोई कोई क्षुप रोएँ से भरे रहते हैं। शाखाएँ जड़ के पास १-२ फुट लंबी फैली हुई अथवा खड़ी रहती हैं। इनकी अनेक शाखा-प्रशाखाएँ होती हैं। पत्ते समवर्ती, पौन इंच से डेढ़ इंच के घेरे में अंडाकार, कँगूरेदार और अनीदार होते हैं। शाखाओं के अंतवाली लंबी डंडी पर फूलों की घुंडी लगती है। फूल पीले अथवा सफेद आते हैं। इसकी घुंडी अकरकरा नं० १ की घुंडी की अपेक्षा अधिक चरपराहटवाली होती है। यह दंतपीड़ा पर चबाई जाती है जिससे लार अधिक गिरती है और मसूड़े लाल हो जाते हैं।

अकरकरा के गुण-दोष—उष्णवीर्य, बलकारक तथा प्रतिश्याय, सूजन, पित्त और कफ को दूर करनेवाला, स्वाद में चरपरा, किसी किसी के मत से मधुर, शीतवीर्य और मातदिल है। रुधिर की गाँठ को खोलनेवाला तथा सिर के मल को शुद्ध करनेवाला है। इसका लेप करने से लकवा, पक्षाघात, कफवात, गरदन का जकड़ना या ढीला होना और पीड़ा, जोड़ों का दर्द, तोतलापन, छाती और दाँत का दर्द, गृध्रसी, जलोदर इत्यादि का नाश होता है। ठंढी प्रकृतिवाले मनुष्य को इंद्रिय में ताकत देनेवाला, खुलकर मूत्र लानेवाला तथा स्त्रियों के रजोधर्म, ज्वर और पसीने में हितकारक तथा स्तनों में दूध बढ़ानेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—यह दूसरे दर्जे में रूक्ष और गरम है। कोई तीसरे दर्जे के अंत में और चौथे दर्जे तक खुश्क मानते हैं। किंतु किसी किसी के मत से तीसरे और चौथे दर्जे में शीतल है। फुफ्फुस को हानिकारक है।

दर्पनाशक—मुनक्का और कतीरा।

प्रतिनिधि—सोंठ, पीपल और मधु।

प्रयोग—जड़।

मात्रा—३ माशे।

जिगर के रोगों में इसके प्रतिनिधि पीपल और मधु तथा आमाशय के रोगों में राळा और अगर हैं; परंतु इन दोनों के न मिलने पर सोंठ और सोंठ से आधी काली मिर्च लेनी चाहिए। गरगरों में अकरकरे के प्रतिनिधि-स्वरूप डेढ़ गुना पहाड़ी पुदीना लेना उत्तम है और हलकी पीड़ा में इसकी जगह इलायची लेते हैं।

डाक्टरी मतानुसार गुण-दोष—अकरकरा चबाने से थूक की ग्रंथियों पर यह उत्तेजक के समान गुण दिखलाता है; इसी कारण लार बहुत बहती है। जीभ के रह जाने या सुन्न हो जाने, शरीर के पट्ठे के रोगों, दाँत के दर्द, जबड़ों की घूमनेवाली पीड़ा और गले की घंटी के लटक आने में इसका चूर्ण मलते या इसको चबाते हैं। ३० ग्रेन से ६० ग्रेन तक की मात्रा चबाने के लिये लेनी चाहिए।

प्रयोग—१. इसकी जड़ उत्तेजक होती है और उसके लेप से चमड़ा लाल हो जाता है तथा चरपराहट होने लगती है। अकरकरे की लकड़ी भारी होती है और तोड़ने में अंदर से सफेद दिखाई देती है। वमन या विरेचन करनेवाली औषधि का सेवन करने के पहले इसको खूब चबाकर थूक देने से उसका स्वाद नहीं जान पड़ता। इस कारण हकीम लोग कड़वे काढ़े आदि पिलाने के पहिले इसको चबवाकर थुका देते हैं। २. इसको जैतून के तेल में पीसकर मालिश करने से शिर रोग, संधियों के दर्द तथा मुख और छाती के रोगों में फायदा होता है। ३. इसके गरम गरम काढ़े का सिर पर लेप करने और उसे तालू पर मलने से सर्दी और नजला दूर होता है। ४. मस्तकी या कसैली वस्तु के साथ चबाने से दूषित दोष से प्रकट हुए मिरगी रोग, आँखों के सामने दिखाई पड़नेवाले अँधेरे और लकवा रोग में फायदा होता है। ५. श्वास लेने की रुकावट में इसकी सुँघनी बनाकर नस्य देना चाहिए। ६. तोतलेपन में इसका चूर्ण जीभ पर मलना हितकारी है। ७. दाँतों तथा मसूढ़ों के दर्द में सिरके में भिगोकर मसूढ़ों पर लगाना अच्छा है। ८. इसका काढ़ा मुख में रखने से हिलते हुए दाँत दृढ़ होते हैं। गले के फोड़े नष्ट होते हैं तथा जीभ को और घंटी लटकने में फायदा करता है। ९. पसीना लाने के लिये शरीर पर इसका चूर्ण मलना चाहिए। १०. बालकों के मिरगी रोग में इसको डोरे में बाँधकर गले में पहनाते हैं। ११. जीभ का रूखापन मिटाने के लिये और मुख में पानी लाने के लिये मधु के साथ इसका लेप करना हितकारी है। १२. डाढ़ की पीड़ा में इसको चबाते रहना अच्छा है। १३. शिरपीड़ा में इसको पीसकर और गरम करके ललाट पर लेप करना चाहिए। १४. दाँत, तालुमूल और गले के रोगों में इसके काढ़े का कुल्ला करना हितकारी है। १५. दस्त लाने के लिये इसके चूर्ण की ६ माशे की फंकी देनी चाहिए। १६. ज्वर उतारने के लिये जैतून के तेल में पकाकर शरीर पर मालिश करना उत्तम है। इससे पसीना आता और ज्वर उतर जाता है। पुरानी खाँसी में इसका काढ़ा पिलाना हितकारी है।

अकरकरा नं० १

अकरकरा नं० २
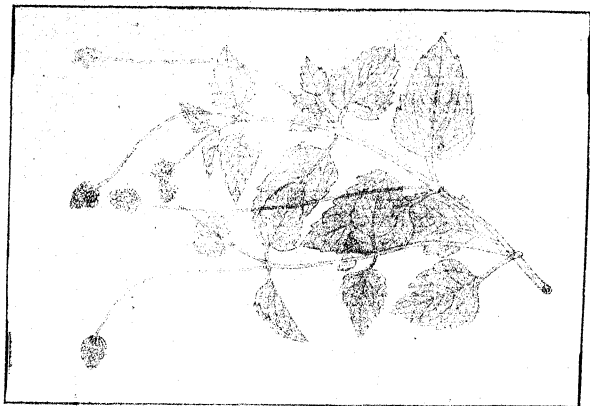
१७. बालक को जल्दी बुलाने के लिये इसके चूर्ण की फंकी दी जाती है। १८. दांत के दर्द में इसके चूर्ण का मंजन करना चाहिए। १९. मंदाग्नि और अफरे में सोंठ के साथ इसके चूर्ण की फंकी देना हितकारी है। २०. क्लीव रोग में और पुरुषार्थ बढ़ाने के लिये मूसली आदि धातुवर्द्धक औषधियों में मिलाकर दूध के साथ सेवन करना चाहिए। २१. हृदय रोग में कुलंजन, सोंठ और अकरकरे का काढ़ा देना अच्छा है। २२. शरीर की शून्यता पर लौंग के साथ, निरंतर रहनेवाले ज्वर में चिरायते के अर्क के साथ, शिरपीड़ा में बादाम के साथ और चेहरे के बादी के रोगों में पीपलामूल के साथ इसको औटाकर देना चाहिए। २३. आंख की पुरानी पीड़ा में आंखों के ऊपर इसका लेप करना हितकारी है। २४. अर्द्धांग वात में उशवे के साथ इसका काढ़ा दिया जाता है। २५. अपस्मार में ब्राह्मी और शंखाहुली के साथ इसका काढ़ा देना हितकारी है। २६. आलस्य में इसका काढ़ा लाभकारी है। २७. जलोदर में उचित अनुपान के साथ इसका सेवन करने से फायदा होता है। २८. गृध्रसी में अखरोट के तेल के साथ मालिश करना अच्छा है। २९. अनियमित मासिक धर्म में इसका काढ़ा पिलाना हितकारी है। ३०. मूत्र की रुकावट में इसका चूर्ण त्रिफला और मिस्री के साथ सेवन करना लाभकारी है। ३१. आलस्य और शिथिलता दूर करने के लिये सोंठ के साथ इसकी फंकी दी जाती है। ३२. प्रतिश्याय की शिरपीड़ा में इसको दांतों के बीच दबाकर रखना चाहिए। ३३. अर्द्धांग वात में राई और इसका चूर्ण जीभ पर मलना लाभदायक है। ३४. अपस्मार का वेग रोकने के लिये दौरा न होने की दशा में इसको सिरके में पीसकर मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए। ३५. दांतों की खोखली जगह में १ रत्ती अकरकरा, ५ रत्ती नौसादर और ५ रत्ती अफीम एक में मिलाकर २ रत्ती भर देने से दांतों की पीड़ा मिट जाती है। ३६. सब प्रकार की दंतपीड़ा में कपूर और इसके चूर्ण का मंजन गुणकारी है। ३७. इंद्रिय मोटी करने के लिये १ तोले अकरकरा को ५ तोले प्याज़ के रस में पीसकर उस पर लेप करना चाहिए। ३८. अकरकरे के तेल को इंद्रिय पर मलने से वह कठोर होती है और काम-शक्ति बढ़ती है। मधु के साथ तिला बनाकर इंद्रिय पर लेप करने से संभोग में स्त्री शीघ्र स्खलित होती है। ३९. अकरकरा और नौसादर बारीक पीसकर तालू और मुख में भली भांति रगड़कर आग रखने से मुख नहीं जलता।

अकरकाता-[बं०] ढेरा। अंकोट। अंकोल।

अकरब-[अ०] बिच्छू। वृश्चिक। बिच्छी।

अकरा-[सं०] आंवला। आमलकी।

अकरा-[मु०] अकरकरा नं० २।

अकरा करभ-[सं०]
अकरांभक-[सं०]
} अकरकरा। आकरकरभ। अकरकरहा।

अकरी-[हि०] कटकला नं० २।

अकरोट-[मरा०] १. अखरोट। अक्षोट। २. [बं० कच्छ०] अखरोट जंगली। वन अक्षोट। जंगली अखरोट।

अकरोड़ु-[ते०]
अकरोट्टु-[ता०]
अकरोठ-[मरा०]
अकरोडु-[खा०]
} अखरोट। अक्षोट।

अकर्करः-[सं०]
अकर्करा-[हि०]
अकलकरो-[मा०]
} अकरकरा। आकरकरभ। अकरकरहा।

अकलिपहकु-[ने०] ईख। इक्षु। गन्ना।

अकलिमियां-[यू०] एक यूनानी औषधि जिसको जलाने से सोना या चांदी, सोनामक्खी इत्यादि के समान, झाग की तरह ऊपर नीचे जम जाती है।

अकलीमाय फ़िज़्ज़ह-[अ०]
अकलीमाय फ़िज़्ज़ा-[अ०]
} रूपामाखी। तारमाक्षिक धातु।

अकलीलुल्मलक-[अ०]
अकलेलुल्मुल्क-[अ०]
} नाखूना। गयाह केसर।

अकल्करः-[सं०]
अकल्करा-[हि०]
अकल्लः-[सं०]
अकल्लक-[सं०]
} अकरकरा। आकरकरभ। अकरकरहा।

अकल्लकरः-[सं०]
अकल्लकरा-[मरा०]
अकल्लकरो-[गु०]
} अकरकरा। आकरकरभ। अकरकरहा।

अकवन-[हि०] आक। रक्तार्क। अकौना। लाल फूल का मदार।

अकसन-[हिं०] असगंध देशी। अश्वगंधा। देशी असगंध।

अकसवेल-[मा०] अमरवेल नं० १। आकाशवल्ली। अमरलता।

अक़हवाँ-[फा०]
अक़हवान्-[फा०]
} [हिं०] मुलहठी। बाबूना गाव। यह बाबूने की जाति की एक बूटी है।

अक़ाक़िआ-[यू०]
अक़ाक़िया-[यू०]
अक़ाक़िया असरा-[यू०]
अक़ाक़िया आसरा-[यू०]
अक़ाक़िया असारे-[यू०]
अक़ाक़िया उसरा-[यू०]
अक़ाक़िया उसारा-[यू०]
अक़ाक़िया उसारे-[यू०]
} १. [हि०] काले बबूल का गोंद। [सं०] काल बब्बूर निर्यास। [द०] कीकर का गोंद। [ता०] कारुवेलम पिशिन। [ते०] नल्ल तुम्मबंका। [मला०] कारुवेलकम पशा। [द०] कारेगोब्बलि गोंदु। कारेजाली गोंदु। [बं०] काला बबुलेर गुन। [मरा०] काला बाबलिचा गोंद। [गु०] कालो बबलनु गुंदर। [लै०] (वृक्ष)—

Acacia Ferruginea. Syn: Mimosa ferruginea

२. [अ० फा०] अकाकिया। यह एक प्रकार के बबूल के वृक्ष का गोंद है। इस वृक्ष के बीज को "करज" कहते हैं। यह काले रंग का, स्वाद में कडुवा और सुगंधियुक्त होता है। अनेक विद्वानों की सम्मति है कि अकाकिया बबूल की जाति के एक वृक्ष का गोंद है, किंतु वास्तव में यह इस वृक्ष का गोंद नहीं है। यह इस वृक्ष की ताजी और कोमल फलियों से उत्पन्न द्रव सत्व है। इसका वृक्ष खैर के वृक्ष की जाति का होता है और नाम भी खैर के ही समान है। कई प्रांतों में इसको काला बबूर भी कहते हैं, इस कारण मैंने इसका प्रधान नाम 'बबूर काला' रखा है और इसका सविस्तर वर्णन तथा गुण-दोष इसी नाम के अंतर्गत दिया है; पाठकों के लाभार्थ इस वृक्ष का चित्र यहाँ दे दिया जाता है।

गुण-दोष—अकाकिया संकोचक, स्निग्धकारक तथा अतिसार, आमातिसार, आमरक्तातिसार, सूजाक और जीर्ण वस्ति के दाह पर गुणकारी है। यद्यपि अकाकिया अतिसार आदि में अफीम अथवा अफीम के योग से बनी हुई औषधियों की अपेक्षा कम गुणकारी है, तथापि यह अन्य बूटियों अथवा खनिज संकोचक गुणवाली औषधियों की अपेक्षा स्वतंत्र व्यवहार करने से अधिक लाभप्रद होता है। जब जलोदर का रोगी अतिसार या रक्तातिसार से पीड़ित होता है, तब अफीम अथवा अफीम मिली हुई औषध प्रायः हानिकर होती है; क्योंकि वह प्रायः जलोदर को बढ़ाती है। ऐसी अवस्था में अकाकिया का प्रयोग उपकारी होता है।

जिन ताजी फलियों में कोमल बीज हों अथवा बीज पुष्ट न हुए हों, उनको धूप में सुखाकर चूर्ण करके अतिसार और रक्तातिसार आदि में सेवन कराने से लाभ होता है। यदि इसमें कोई दूसरी संकोचक, स्निग्धकारक, उत्तेजक बूटी और अफीम मिलाई जाय तो वह और शीघ्र गुणकारी हो जाती है। इसी प्रकार अकाकिया में भी इन औषधियों के मिलाने से गुणों की विशेष वृद्धि होती है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—अशुद्ध अवस्था में तीसरे दर्जे में शीतल और रूक्ष तथा शुद्ध किया हुआ दूसरे दर्जे में ठंढा और रूक्ष है। रूक्षता-प्रद, मल को दुःखित अवयव से रोकनेवाला, वर्द्धक, मुख से रुधिर को रोकनेवाला, आमाशय और यकृत् को बलकारी, नेत्रों को बलप्रद और उनके दुखने में गुणकारी तथा रुधिर-स्राव को बंद करनेवाला है एवं गुद-भ्रंश में इसका खाना और लेप करना गुणकारी है। यह रोध उत्पन्न करनेवाला है।

दर्पनाशक—बादाम-रोगन।

प्रतिनिधि—चंदन और रसौत।

मात्रा—३॥ माशे।

अकात्सज बुह्नि-[मला०] अमरबेल नं० २। आकाश वल्लरी। अमरलता।

अकानादि-[हिं०] पाठा लघु। अंबष्ठा। लघु पाठा।

अकान्विधि-[उ०] पाठा। पाढ़ी।

अकारकरभ-[सं०] अकरकरा। आकरकरभ। अकरकरहा।

अकारून-[अ०] बच। बचा।

अकाव-[हिं०] आक। अर्क। मदार।

अकाश गरुड गड्डे-[खा०] } नाही। कड़वी। नाई।
अकाश गरुडन-[ता०] }

अकाशपवन-[द०] अमरबेल नं० १। आकाश बँवर। अकाश वल्लरी।

अकाशबेल-[हिं०] अमरबेल नं० २। आकाश वल्लरी। अमरलत्ती।

अकाश मांसी-[हिं०] अकास मांसी। सूक्ष्म जटामांसी। छोटी जटामांसी।

अकास गड्डाह-[द०] नाही। नाई।

अकासबेल-[हिं०] १. अमरबेल नं० २। २. [गु०] अमरबेल नं० १। आकाशवल्लरी।

अकास मांसी-[हिं०] आकाशमांसी। सूक्ष्म जटामांसी। छोटी जटामांसी।

अक़ाहुली-[यू०] }
अक़ाहूली-[यू०] } अर्कपुष्पी। अर्कहुली। रुधियार।
अक़ाहालो-[यू०] }

अक़ीक़-[यू०] यह एक प्रसिद्ध पत्थर है। इसका रंग सफेद, गहरा, लाल, नीला या पीला होता है। मुसलमान फकीर प्रायः इसकी माला गले में पहनते हैं।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में शीतल और रूक्ष, हृदय को बलकारी, हौलदिल को गुणकारक, रुधिर-स्राव को रोकनेवाला, विशेषतः आर्तव का रोधक और दृष्टि के लिये बलकारक है। इसको पास रखने से क्रोध की गर्मी दूर होती है। यह गुरदे और गले को हानिकारक है।

दर्पनाशक—कतीरा और कद्दू के बीज।

प्रतिनिधि—मूँगा और कहरुबा।

मात्रा—१॥ माशे।

अकु-[उ०] ईख। इक्षु। ऊख। गन्ना।

अकुजे मुडु-[ते०] थूहर नं० १। स्नुही।

अकुप्य-[सं०] १. सोना। स्वर्ण धातु। २. चाँदी। रजत। रौप्य। रूपा।

अकुरुन-[यू०] बच। बचा। घोड़-बच।

अकूजे मूदू-[ते०] थूहर नं० ३।
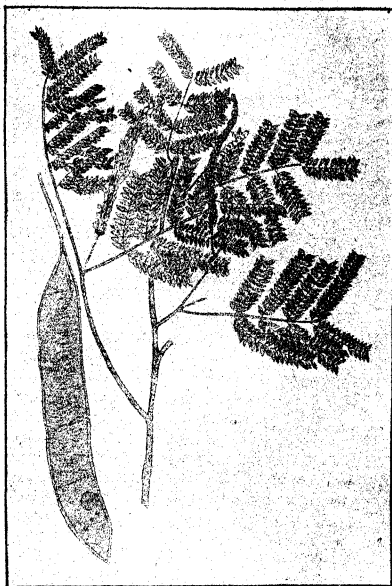
अकूट-[सं०] आगड फल।

अकोट-[सं०] सुपारी। गुवाक वृक्ष।

अकाकिया वृक्ष

पृ० १४]

अकोट–[खा०] कोसम । कोशाम्र ।

अकोट कोरा–[बँ०] अकरकरा । आकरकरभ । अकरकरहा ।

अकोल–[हिं०] ढेरा । अंकोट । ढेरा । [बँ०] अखरोट जंगली । वन अक्षोट । जंगली अखरोट ।

अकोहर–[हिं०] ढेरा । अंकोट वृक्ष ।

अकौआ–[हिं०] आक । अर्क वृक्ष । मदार ।

अक्करकरमु–[ते०]
अक्करकारम्–[द्रा०]
अक्कलकरें–[क०]
अक्कलकारा–[मरा०]
} अकरकरा । आकरकरभ । अकरकरहा ।

अक्रांत–[सं०]
अक्रांता–[सं०]
} बन भंटा । बृहती । बड़ी कटाई ।

अक्रोट–[द्रा०]
अक्रोड–[मरा०]
} अखरोट । अक्षोट ।

अक्लिका–[सं०]
अक्लीका–[सं०]
} नील । नीली वृक्ष । नील का पेड़ ।

अक्लोमियाउल जहब–[अ०] सोनामक्खी । स्वर्णमाक्षिक धातु ।

अक्ष–[सं०] १. बहेड़ा । विभीतक वृक्ष । २. चौहार कोड़ा । सौवर्चल लवण । सोंचर नोन । ३. तूतिया । तुत्थ । नीला थोथा । ४. रुद्राक्ष । उद्राक्ष । ५. कर्ष परिमाण । २ तोले । ६ ऋषभक । इंद्राक्ष । ७. कमलगट्टा । पद्मबीज ।

अक्षक–[सं०] १. बहेड़ा । विभीतक वृक्ष । २. तिनिश । जारुल । वंजुल वृक्ष । ३. रुद्राक्ष । उद्राक्ष । ४. ऋषभक । इंद्राक्ष । ५. कर्ष परिमाण । २ तोले ।

अक्षकारका–[सं०] घीकुवार । घृतकुमारी । ग्वार पाठा ।

अक्षकाष्ठ–[सं०] बहेड़ा । विभीतक ।

अक्षगंधिनी–[सं०] ककही । अतिबला ।

अक्षतंडुल–[सं०] ककही । अतिबला ।

अक्षत–[सं०] १. यव । जौ । २. खील । लाजा । लावा ।

अक्षता–[सं०] काकड़ा सिंगी । कर्कटशृंगी ।

अक्षतैल–[सं०] बहेड़े का तेल । विभीतक तैल ।

अक्षधर–[सं०] सहोरा । शाखोट । सिहोर ।

अक्षधूर्त्त–[सं०]
अक्षधर्तिल–[सं०]
} बैल । वृष ।

अक्षपाक–[सं०] चौहार कोड़ा । सौवर्चल लवण । सोंचर नोन ।

अक्षपिंड–[सं०] शंखाहुली । शंखपुष्पी ।

अक्षपीड़–[सं०] १. धमासा । दुरालभा । २. बनतिक्ता । श्वेतवोना । श्वेतबुन्हा ।

अक्षपीड़का–[सं०] १. शंखिनी । यवतिक्ता । २. धमासा । दुरालभा । ३. श्वेतवोना । श्वेतबुन्हा ।

अक्षपीड़ा–[सं०] १. श्वेत वोना । श्वेतबुन्हा । बनतिक्ता । २. शंखिनी । यवतिक्ता । यवेची ।

अक्षय–[सं०] १. गौरैया । चटक पक्षी । २. बगेरी । बनचटक पक्षी ।

अक्षर–[सं०] १. ओंगा । अपामार्ग । चिचड़ा । २. जल । पानी ।

अक्षरचटक–[सं०] पांशु लवण । मटियानोन । रेह का नोन ।

अक्षवीर्यवान–[सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर । सफेद कनेर ।

अक्षशस्य–[सं०] कैथ । कपित्थ वृक्ष ।

अक्षार लवण–[सं०] नमक । लवण ।

अक्षि–[सं०] नेत्र । आँख । चक्षु ।

अक्षिक–[सं०] आच्छुक । रंजन द्रुम ।

अक्षिपीलु–[सं०] बकायन । महानिंब ।

अक्षिभेषज–[सं०] पठानी लोध । पट्टिका लोध्र ।

अक्षिव–[सं०] १. पाँगा निमक । समुद्र लवण । २. सहिजन । शोभांजन वृक्ष । सैंजन । ३. काली मिर्च । गोल मरिच ।

अक्षीक–[सं०] आच्छुक । रंजनद्रुम ।

अक्षीव–[सं०] १. सहिजन । शोभांजन वृक्ष । मुनगा । २. बकायन । महानिंब । ३. पाँगा नोन । समुद्रलवण । ४. मिर्च । काली मिर्च । गोल मिर्च ।

अक्षोय–[सं०] आक लाल । रक्तार्क ।

अक्षोट–[सं०] १. अखरोट । गिरिज पीलु । २. अखरोट जंगली । बन अक्षोट । ३. पीलु । फल ।

अक्षोटक–[सं०]
अक्षोटकी–[सं०]
} १. अखरोट । अक्षोट । २. पीलु फल । फल ।

अक्षोड–[सं०]
अक्षोडक–[सं०]
} अखरोट । कर्परात । पहाड़ी पीलु ।

अक्षोलमु–[ते०] अखरोट । अक्षोट वृक्ष ।

अक्षोहार–[सं०] खजूर मीठा । मधुखर्जूरिका ।

अक्ष्म–[सं०] शीतल चीनी । कक्कोल ।

अक्ष्य–[सं०] चौंडाड़ कोड़ा । सौवर्चल । सोंचर नमक ।

अखज़ा–[यू०] अंधाहुली । अधःपुष्पी ।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—हलकी, रुचिकारक, बलदायक, कफघ्न, वातनाशक, किंचित् पित्तकारी और हाजमा बढ़ानेवाली है ।

अखतनाक उलरेहम–[फा०] योषापस्मार । हिस्टीरिया नामक रोग ।

अखतलाजुल कलब–[अ०] हृत्कंप । हौलदिल रोग ।

अखद–[सं०] चिरौंजी । पियाल वृक्ष ।

अखनी–[हिं०] तक्रमांस । छाछ और मसाले के साथ विधिपूर्वक उबाला हुआ मांस ।

अखर–[हिं०] कपास । कार्पासी वृक्ष ।

अखरीज़–[अ०] कुसुम । कुसुंभ । बर्रे ।

अखरोट–[हिं०, बँ०, पं०, गु०] अखरोट । [सं०] अक्षोट, आक्षोट, आखोट, आक्षोड इत्यादि । [हिं०] पहाड़ी पीलु । [बँ०] आकरोट । आखरोट । [मरा०] अक्रोड । अकरोड । [गु०] अक्रोडं । अखोड । [क०] आखोट । येहद गोतुमर । [तै०] अक्षोलसु । कोंड गोगुनु । अक्रोट्टु । [द्रा०] अक्रोट्टु । [ता०] अकरोटु । [खा०] अकरोट्टु । [पं०] अखरोट । दून । चारमग्ज । चारमगज । धनधान । दनदान । खोर । का । डर्गं । अखोरी । क्रोट । कबोटंग । स्तरण । उग्ज़ । मग्ज़ । टनका । [भो०] टगशिंग । [आसा०] कबसिंग । [लि०] कोनल । [काश०] अखोर । क्रोट दुन । [अफ़०] उट्टज़ । मग्ज़ । [फा०] चार मग्ज़ । गिर्दगां । [अ०] जौज़ । जोज़ । जोज़ुल हिंद । [लै०] Juglans Regia Syn: Juglans Arguta. [अं०] Walnut.

अखरोट एक प्रसिद्ध काबुली फल या मेवा है । यह दो प्रकार का होता है । एक कागजी अखरोट जिसका छिलका पतला होता है और दूसरा वह जिसका छिलका मोटा होता है । जो वृक्ष रोपण करके उत्पन्न किया जाता है और भली भांति सींचा जाता है, उसके फल का छिलका पतला होता है; तथा जो वृक्ष आप ही आप उत्पन्न होता है, उसका छिलका मोटा होता है । इसके वृक्ष इस देश के हिमालय के गरम प्रांत, काश्मीर से पूरब की ओर और खासिया पहाड़ी तथा मनीपुर आदि अनेक प्रांतों में पाए जाते हैं ।

इसका वृक्ष बहुत बड़ा, समय पाकर गिरनेवाला और मसालेदार सुगंधित होता है । छाल खाकी रंग की आध से दो इंच तक मोटी होती है । इसकी छाल को पंजाब में डिंडास कहते हैं । पत्ते ६ से १२ इंच तक लंबे, चौड़े, अंडाकार और अनीदार होते हैं । वे शीत काल में गिर जाते हैं और माघ से चैत्र तक नए पत्ते निकल आते हैं । फूल मैनफल के फूल के आकार के हरापन लिए सफेद रंग के होते हैं और गुच्छों में आते हैं । ३०-४० वर्ष के बाद वृक्षों में फल लगने लगते हैं । चैत्र-वैशाख में फूल लगते हैं; फिर फल लगकर आषाढ़ से आश्विन तक पक जाते हैं । फल गोलाकार २ इंच तक लंबे, मोटे और गूदेदार होते हैं और उनके अंदर कठोर बीज होता है । इसके अंदर एक प्रकार का दूध भी होता है; इसलिये फलों को तोड़कर तीन मास तक रख छोड़ते हैं । उस समय तक यह लेपदार पदार्थ गूदा बन जाता है । इससे तेल भी निकलता है ।

उपर्युक्त दो प्रकार के अखरोटों के अतिरिक्त एक जंगली अखरोट भी होता है, जिसका परिचय आगे दिया जाता है ।

अखरोट की गिरी भूरे रंग की और चिकनी होती है । वह स्वाद में फीकी और बादाम की मींगी के समान स्वादिष्ठ होती है ।

गुण-दोष—यह बादाम के समान गुणकारी है । मधुर, कुछ खट्टा, स्निग्ध, शीतल, वीर्य-वर्द्धक, गरम, रुचिकारक, कफ और पित्तकारी, भारी, प्रिय, बल बढ़ानेवाला, मलवर्द्धक और मल को बांधनेवाला तथा वात, पित्त, क्षय रोग, वात-रोग, हृदयरोग, रुधिर-विकार, रक्तवात और दाह को हरनेवाला है ।

गिरी मिस्री के साथ खाने से मोटापन लाती है, परंतु मुख में दाने निकल आते हैं और जीभ में भारीपन तथा शिरशूल उत्पन्न करती है; और यदि गिरी के ऊपर का सफेद छिलका उतार दिया जाय तो मुख और तालू को हानि नहीं पहुँचाती । ज्वार की भूसी के साथ देर तक तवे पर भूनने से और हाथों से मलने से छिलका निकल आता है । गरम मिजाजवालों को यदि कुछ कष्ट जान पड़े तो शिकंजबीन का सेवन करना लाभदायक है ।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम और दूसरे में रूक्ष, अर्थात मृदु, प्रकृति को मृदुकारक, व्यर्थ मल का नाशक, ओजप्रद, अजीर्ण-नाशक, मस्तिष्क, हृदय, यकृत् और आंतरिक इंद्रियों को बलकारक है । इसकी भूनी हुई मींगी शीतजन्य कास में गुणकारी है । उष्ण प्रकृतिवालों को हानिकारक है ।

दर्पनाशक—अनार का रस ।

प्रतिनिधि—चिरौंजी और चिलगोजा ।

मात्रा—१-२ तोले ।

प्रयोग—१. इस वृक्ष की छाल कृमिनाशक और स्वच्छताकारक है । इसको चबाने और दांतों पर मलने से होंठ सुंदर और लाल हो जाते हैं; इस कारण पंजाब की स्त्रियां इसका व्यवहार करती हैं । आंतों के कीड़े नष्ट करने के लिये छाल का काढ़ा पिलाया जाता है । पत्ते संकोचक और बलकारक होते हैं । पत्तों का काढ़ा कृमिनाशक तथा सूजे हुए एवं मवादवाले घावों पर गुणकारी है । फल आमवात को धीरे धीरे नाश करनेवाला है । इसकी पुरानी गिरी खांसी उत्पन्न करनेवाली और सड़ी रोग उत्पन्न करनेवाली है । ताजी गिरी खाने में उत्तम होती है । इसकी छाल और फल के छिलके रंग के काम में आते हैं । इसकी गिरी पौष्टिक है; किंतु अधिक खाने से मुख में छाले पड़ जाते हैं और सिर में पीड़ा होने लग जाती है । गुड़ या मिस्री के साथ खाने से गुणकारी है । २. घाव और फोड़े को साफ करने के लिये इसके काढ़े से धोना चाहिए । ३. पत्ते ग्राही और बलकारी हैं तथा उनका क्वाथ कृमिनाशक है । ४. कंठमाला पर इसके पत्तों का काढ़ा देना और उसी से गांठ धोना लाभकारी है । ५. गठिया में इसकी गिरी खाने से फायदा होता है और रुधिर शुद्ध होता है । ६. इसको खाने और लगाने से विष का प्रभाव नष्ट होता है । ७. नहरुआ (स्नायुक) की सूजन पर

अखरोट

अखरोट जंगली

इसकी छाल को पानी में पीसकर गरम करके लेप करना और पट्टी बाँधकर सेंकना लाभकारी है। १५-२० दिन में इस प्रयोग से अत्यंत लाभ होता है। ८. बादी की पीड़ा में ताजी पीसी गिरी का लेप करके, ईंट गरम कर, उस पर जल छिड़क, कपड़ा लपेटकर इससे सेंक करने से फायदा होता है। ९. दाद में प्रातःकाल, हाथ-मुँह धोकर, दाँतों से गिरी को बारीक पीसकर लेप करने से लाभ होता है। १०. दाँत साफ करने और उनके कीड़े नष्ट करने के लिये इसकी छाल की दातुन करना उत्तम है। ११. अफीम और भिलावें के विष पर गिरी खाना लाभजनक है। १२. नाड़ीव्रण (नासूर) पर सम भाग मोम मीठे तेल में गलाकर, पीसी हुई गिरी मिलाकर, लेप करने से फायदा होता है। १३. आँख की ज्योति बढ़ाने के लिये दो अखरोट और तीन हरीतकी की गुठली जलाकर, उसकी भस्म के साथ ४ दाना काली मिर्च को खरल करके अंजन लगाना चाहिए। १४. इसका छिलका उबालकर पीने से जुलाब का काम देता है। १५. रक्तार्श का रुधिर बंद करने के लिये इसके छिलके की भस्म को किसी विष्टंभी औषध के साथ खिलाना गुणकारी है। १६. इसके कोमल पत्तों का शीतल किया हुआ काढ़ा पिलाने से सब प्रकार के दस्त बंद हो जाते हैं। १७. क्षत में ताजे अखरोट का छिलका चोटवाले स्थान पर लगाने से बहुत लाभ होता है। १८. कान की पीड़ा में गरम किया हुआ पीले पत्तों का निचोड़ा हुआ रस डालना चाहिए। १९. श्वास रोग में ताजे अखरोट का मधु में डाला हुआ मुरब्बा रात को सोते समय २ तोले की मात्रा में सेवन करने से बहुत लाभ होता है। २०. इसके छिलके की राख ऋतुमती स्त्री यदि मधु के साथ बत्ती बनाकर अंदर रखे तो ऋतु का आना रुक जाता है।

अखरोट का तेल—[हिं०] अखरोट का तेल। [सं०] अक्षोट तैल। [यू०] रोगन अखरोट। [फा०] रोगन चारमग़ज़। [अ०] दुहनुल्जोज।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—अखरोट का तेल सफेद और स्वाद में मीठा होता है। इसका स्वभाव गरम, तर, वायु के विकार, कफ और पित्त के विकारों को नष्ट करनेवाला, ओज बढ़ानेवाला, केशों को हितकारी, कफकारी, प्रायः अवयवों को बलप्रद, प्रकृति को मृदु करनेवाला और चित्त को प्रसन्न रखनेवाला है। उष्ण प्रकृतिवालों के लिये गरिष्ठ है।

प्रतिनिधि—बादाम का तेल।

अखरोट का तेल बनाने की रीति-पहली क्रिया—४ सेर गिरी कोल्हू में डालकर पेरे। जब वह महीन होकर तेल छोड़ने लगे, तब एक सेर और डाल दे। जब अधपिसी हो जाय, तब आध सेर मिस्री के टुकड़े छोड़कर पेरने से खली जम जाती है और तेल अलग निकल आता है। इसे छानकर बोतल में सुरक्षित रखना चाहिए।

दूसरी क्रिया—गिरी को महीन कूटकर गाढ़े कपड़े की थैली में भरकर यंत्र से दबाने से सफेद, पतला और स्वादिष्ट तेल निकलता है। इस खली को पानी में उबालने से जो तेल निकलता है, वह हरे रंग का होता है। इसमें चमड़े को जलाने और फफोले उठाने की शक्ति होती है। ताजी गिरी का तेल पुरानी गिरी के तेल से अधिक मीठा होता है। पुराने तेल से दुर्गंधि आती है। यह तेल ज्यों ज्यों पुराना होता जाता है, त्यों त्यों इसमें फफोले उठाने की शक्ति अधिक होती जाती है।

प्रयोग—१. सरदी लगने पर या विशूचिका की ऐंठन में इसका मर्दन करना बहुत गुणकारी है। २. शरीर का शोथ उतारने के लिये एक पाव गोमूत्र में १ से ४ तोले तक तेल डालकर पिलाना चाहिए। ३. बादी से फूले हुए अर्श पर इसे लगाना हितकारी है। ४. अर्दित वात में इसकी मालिश करके बादी मिटानेवाली औषधियों के काढ़े का बफारा देना उत्तम है। ५. कुच-शोथ पर इसकी मालिश गुणकारी है। ६. पागल कुत्ते के विष पर ६-६ घंटे पर एक एक तोला तेल एक छटाँक गरम पानी में मिलाकर सेवन करते रहने से एक सप्ताह में शरीर से विष निकल जाता है।

अखरोट जंगली—[हिं०] जंगली अखरोट। दक्षिणी अखरोट। देशी अखरोट। [सं०] अक्षोट। [बं०] बन अकरोट। बन अखरोट। अकरोट। अकोल। जंगली अकरोट। [मरा०] जाफल अखोड। [मा०] जंगली अखरोट। जंगली एरंडा। जेलप। जाफला। अखोड। [गु०] अखोड़। अखोड़ा। [ते०] नाट अक्रोट चित्त। [क०] नाट अक्रोडु। [द्रा०] नाट्टु अक्रोट कोट्टै। [कच्छ०] अकरोट। [ता०] नाट्टु अकरोट्टु कोट्टइ। [तै०] नाट्टु अकरोटु विट्ट। [खा०] नाट अकरोडु। [मला०] बदाम। बादाम। कुआह। केरस। कनिहरि। [सि०] कक्कुन। [बर०] टो-सिक या-सी। [स्याम०] कनयिन। काक या उलिक। मकमन यऊ। [फा०] गिर्दगाने हिंदी। चहार मग्ज़े हिंदी। [अ०] जोज बर्री। जौजे बर्री। खासिफे हिंदी। [लै०] Aleurites Moluccana Syn: Aleurites Triloba. [अं०] The Belgaum Indian Walnut.

उपर्युक्त नामों में अधिक नाम वे ही हैं जो वास्तव में अखरोट के हैं, इस कारण उनके पहले "जंगली" शब्द लगाना अच्छा है।

यह भारत के कई भागों में होता है, विशेषकर मलाबार में अधिक पाया जाता है। वास्तव में यह मलाया टापू से ही हिंदुस्तान में लाया गया है। अब यह दक्षिण भारत के प्रायः सभी प्रांतों में और विशेषकर मद्रास में अधिक होता है, क्योंकि मद्रास की भूमि इसके लिये अनुकूल होती है।

बंगाल और उसके आसपास भी यह वाटिकाओं में लगाया जाता है। इसका वृक्ष बड़ा, ४० से ६० फुट तक ऊँचा होता है और बारहों मास हरा-भरा रहता है। कोमल शाखाएँ नए पत्ते, और धनहरे भूरे अथवा खाकी रंग के छोटे-मोटे रोओं से भरे रहते हैं। पत्ते ४ से १२ इंच तक लंबे, चौड़े, अंडाकार और अनीदार होते हैं। पत्ते की डंठी २ से ५ इंच तक लंबी होती है। शाखाओं के अंत में सफेद फूलों के गुच्छे लगते हैं। ग्रीष्म ऋतु में फूल लगते हैं और फल लगकर सावन भादों तक पक जाते हैं। फल २ से २॥ इंच के घेरे में गोल होते हैं तथा बीज बड़े बड़े होते हैं। इसके फलों और छोटी शाखाओं पर गोंद लगता है। फलों का गोंद खाने के काम में आता है तथा गिरी से तेल निकाला जाता है।

गुण-दोष—फल की मींगी आरोग्य-जनक और पुष्टिकारी है। इससे तेल निकाला जाता है। तेल निकालने की क्रिया वही है जो अखरोट के तेल की है। यह कहरुवा के समान होता है। साबुन के समान जम जाता है और जल्दी सूख जाता है।

प्रयोग—१. इसका तेल १-२ औंस की मात्रा में अवश्य मृदु रेचन का काम करता है। ३ से ६ घंटे में आँतें साफ हो जाती हैं। एरंड के तेल के समान कोमल और अवश्य दस्त लानेवाला है; बल्कि एरंड के तेल से यह अच्छा समझा जाता है। इसमें विशेषता यह है कि न इसमें स्वाद होता है, न गंध होती है और न दस्त के समय कोई तकलीफ ही जान पड़ती है। जलन, शूल, मरोड़ और मतली आदि नहीं होती। बलाबल के विचार से १ से ५ तोले तक सेवन करना चाहिए। २. व्रण (घाव) को भरनेवाला होता है। ३. गरिष्ठ भोजन के बद्धकोष्ठ पर इसके तेल या मींगी में बबूल का गोंद मिलाकर पेट और नलों पर लेप करना चाहिए। ४. यह खाने और जलाने दोनों के काम आता है। इसकी खली (पिन्याक) भी उत्तम रेचक है।

अखिल-उल मलिक–[पं०] तज बादशाही। कटीला। परंग।

अखेड़ो–[गु०] आंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

अखोड़–[गु०] १. अखरोट। अक्षोट। २. अखरोट जंगली। वन अक्षोट।

अखोड़ा–[गु०, मा०] अखरोट जंगली।

अखोर–[काश०] } अखरोट। अक्षोट।
अखोरी–[पं०] }

अगंधक–[सं०] तेजबल। तुंबरु।

अगंधिक–[सं०] चौहार कोड़ा। सौवर्चल लवण। सोंचर नोन।

अगंधिका–[सं०] बर्बरी। बनतुलसी।

अगकरा–[ति०] बाँझ खेक्सा। वंध्या कर्कोटकी। बन ककोड़ा।

अगचे–[गु०] अगस्त। मुनिद्रुम।

अगज–[सं०] १. शिलाजीत। शिलाजतु। २. तुंबरु। तुंबुरु। ३. धनिया हरा। आर्द्र धान्ये। ४. बेदा। परगाछा। बंदाक।

अगजु खालीस–[फा०] हींग। हिंगु।

अगती–[ता०] अगस्त। मुनिद्रुम वृक्ष।

अगत्यो–[मा०] संखिया। आखु पाषाण।

अगथिआ–[हिं०] }
अगथिओ–[गु०] }
अगथिया–[हिं०] } अगस्त। अगस्त्य वृक्ष। हदगा। हथिया।
अगथीओ–[गु०] }
अगथीयो–[गु०] }

अगथ्यो–[मा०] संखिया। आखु पाषाण।

अगद–[सं०] १. चकवँड। चक्रमर्द। २. रोग। व्याधि। ३. औषध। दवा। ४. रोगमुक्त। व्याधिमुक्त। ५. आरोग्य। नीरोग। ६. [सं०] दद्रुमर्दी। दद्रुघ्न। कोटारी। अंग सुंदर आदि। [हिं०] दाद-मर्दन। दादमारी। दाद-मर्दनी। [मु०, मरा०] दाद-मर्दन। [द०] दाद का पत्ता। दाद का पात। विलायती अगती। [ता०] शिमई अगति। सिमई अगति। वंडु कोल्लि। [तै०] सिमा अविसि। सिम अविसि। सिम अविस्ल। [उ०] जादुमारि। [क०, खा०] शिमे अगशे। सिमे अगसे। [द्रा०] शिमै अगत्ति। वंडुकोल्लि। [मला०] शिम अकट्टी। [लै०] Cassia Alata. Syn: Senna Alata.

अगद के वृक्ष बंगाल, पश्चिमी प्रायद्वीप और बरमा आदि कई प्रांतों में होते हैं। यह चकवँड़ और कसौंदी आदि की जाति की बूटी है। इसका वृक्ष छोटा या झाड़ बड़ा होता है। शाखाएँ मोटी और अंत में रोएँदार होती हैं। पत्ते १-२ फुट लंबे सींकों पर ५ से १०-१२ तक जोड़े लगते हैं। वे अंडाकार और २ से ६ इंच तक लंबे होते हैं। फूल छोटी डंडी पर आते हैं। उनके दल १। इंच लंबे, चमकीले, पीले रंग के और काली रेखाओं से युक्त होते हैं। फलियाँ ४ से ८ इंच तक लंबी और आध से पौन इंच तक चौड़ी होती हैं। उनमें ५० या इससे अधिक बीज होते हैं। यह एक प्रकार का चकवँड है, जो वनों, उपवनों तथा ग्रामों के पास उत्पन्न होता है।

गुण—दाद, पामा, खुजली और विचर्चिका रोग का नाश करनेवाला है।

पत्तों और फूलों का सेवन बलकारी है। तामिल लोग इसके पंचांग को दौर्बल्य, कामेच्छा की कमी और विषैले जंतुओं के काटने पर व्यवहार में लाते हैं।

प्रयोग—१. इसकी जड़, पत्ते आदि औषध के प्रयोग में आते हैं। वे पुराने रोगों की अपेक्षा नवीन रोगों में अधिक गुणकारी होते हैं। दाद के लिये यह एक बहुत ही अच्छी औषध है। यह दूसरे चर्मरोगों में भी व्यवहृत होता है तथा सर्पविष पर भी लाभकारी है। गले के रोग, श्वास रोग और

अगद्
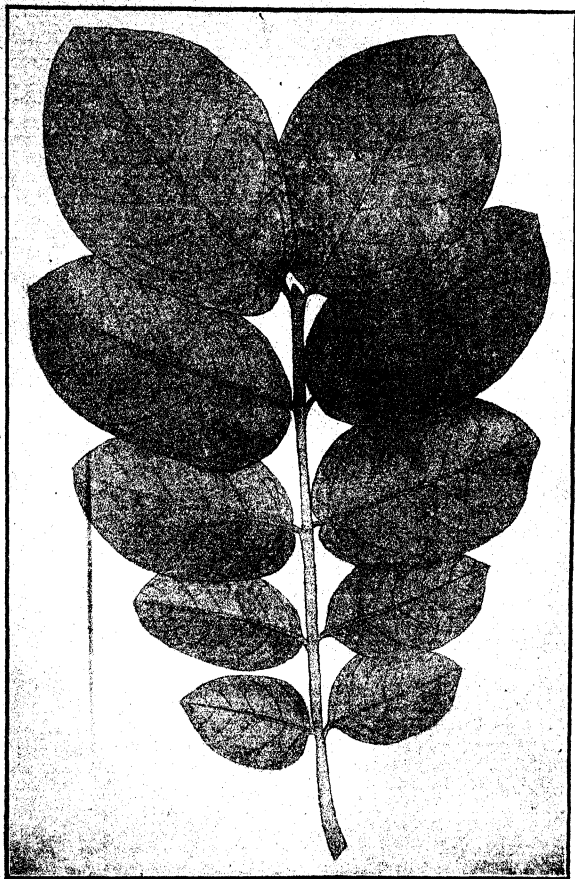
चर्म रोग में इसके पत्तों और फूलों का काढ़ा दिन में कई बार देना चाहिए। २. दाद-रोग में इसकी जड़ को सुहागे और हरीतकी के साथ पीसकर लेप करना चाहिए। ताजे पत्तों को पीसकर लेप करने से या उनको कुछ दिनों तक दाद पर रगड़ते रहने से अथवा नमक के साथ पीसकर लेप करने से लाभ होता है। ३. मुखपाक या मुख के छाले में पत्तों के काढ़े से कुल्ला करना चाहिए। ४. खाँसी में इसके पत्तों को अडूसे के पत्तों के साथ चूसते रहने से लाभ होता है। ५. बलवृद्धि के लिये पत्तों का चूर्ण मधु के साथ चाटने से फायदा होता है। ६. दाद में फूलों की पुल्टिस लाभकारी है। ७. विषैले जीवों के दंश पर पत्तों का रस मलना चाहिए। ८. उपदंश के घाव पर पत्तों का रस लगाना अथवा पत्तों को उबालकर बफारा देना हितकारी है। ९. पामा, खुजली आदि पर पत्तों को नीबू के रस में पीसकर लेप करना चाहिए। खुजली में पत्तों और फूलों के काढ़े से कई बार धोना चाहिए। इसकी छाल में भी यही गुण है। १०. कोष्ठबद्धता में पत्तों के चूर्ण की फंकी देनी चाहिए। ११. इसके पत्तों को सनाय के साथ उबालकर पिलाने से अथवा सूखे पत्तों का काढ़ा देने से दस्त आते हैं।

अगन–[हिं०] लवा। चंडूल पक्षी।

अगनचशमा नो काच–[गु०] आतसी सीसा। सूर्यकांत।

अगन चिड़िया–[हिं०] लवा। भरद्वाज पक्षी। चंडूल।

अगया–[यू०] यह यूनानी ओषधि इसी नाम से प्रसिद्ध है। रसायनी लोग इस बूटी की तलाश में बहुत रहते हैं। इसका रंग हरा और स्वाद कडुवा तथा तीखा होता है।

गुण-दोष—तीसरे दर्जे में गरम और दूसरे में रुक्ष है। यह अत्यंत कामोद्दीपक है। इसके स्वरस में गंधक को ४० दिन भिगोकर धूप में रखे। फिर २ रत्ती मात्रा पान के साथ सेवन करने से क्षुधा की अत्यंत वृद्धि होती है। इसके स्वरस के द्वारा भस्म किया हुआ वंग श्वास और कास को गुणकारी है। त्वचा को हानि करनेवाला और खुजली उत्पन्न करनेवाला है।

दर्पनाशक—मुर्दा संख और गाय का घी।

मात्रा—२ रत्ती।

अगया घास–[हिं०, बं०] रोहिस घास नं० १। रोहिष तृण।

अगया बात–[उ०] अरनी। अग्निमंथ। गनियार।

अगर–[हिं०] अगर। [सं०] अगुरु। प्रवर। लोह। राजार्ह। योगज। वंशिक। कृमिज। कृमिजंध। अनार्यक आदि। [बं०] अगरु। उगर। अगरु काष्ठ। अगरु चंदन। [मरा०, गु०, ते०, मु०, ता०] अगर। अगरु। [मा०, क०, प०] अगर। [द्रा०] अहिलकट्टे। अहरुकट्टे। अहरु कट्टई। [पं०] ऊद। ऊद फारसी। [मु०] हिंदी अगर। [ता०] अगलिचंड। [तै०] कृष्णा अगरु। अगरु काष्टमु। [आसा०] सत्ती। सची। विस्वास। [फा०] ऊद हिंदी। उदे हिंदी। वदुगर्की। अगरे हिंदी। अगर। [अ०] अगरे हिंदी। ऊद। औद। औदे हिंदी। उदे हिंदी। अगलुगेन। ऊद खाम। [लै०] Aquilaria agallocha [अं०] Calambac; Aloe wood; Eagle wood.

अगर के वृक्ष पूरब हिमालय, भूटान, आसाम, खासिया पहाड़, सिलहट, मालाबार, मलयाचल और मनीपुर आदि प्रांतों में पाए जाते हैं। यह वृक्ष बहुत बड़ा और ऊँचा होता है। बारहों मास हरा भरा रहता है और छोटी कोमल शाखाओंवाला होता है। छाल पतली होती है। लकड़ी सफेद, कोमल, चिकनी और काटने पर गंधयुक्त होती है। इसका सार भाग बहुत दृढ़, काले रंग का और मधु के समान गंधवाला होता है। पत्ते २ से ३॥ इंच तक लंबे, चौड़े, चमकीले, अंडाकार और अनीदार होते हैं। वे अन्य वृक्ष के पत्तों की नाईं पतझड़ में नहीं गिरते। इस पर के फूल-फल अनहोनी बात से प्रतीत होते हैं। फूल सफेद और फल १–२ इंच लंबे होते हैं।

इस वृक्ष की लकड़ी सफेद, कुछ पीलापन लिए खुरदुरी और रेशेदार होती है। इसमें बहुधा कीड़े लग जाते हैं। जब वह बिगड़ने लगती है, तब उसको काटकर टुकड़े करके भूमि में गाड़ देते हैं। कुछ दिनों के बाद वे भारी, काले, तेलिया और सुगंधित हो जाते हैं। सिलहट की अगर अच्छी होती है। जिसका रंग काला हो, जो वजन में भारी हो और पानी में डालने से डूब जाय तथा पानी से निकालकर कपड़े या हाथ से जल का अंश पोंछ करके दियासलाई लगा देने से वह बत्ती के समान जलने लगे एवं उसमें से निकला हुआ धूम्र सुगंधित हो वह श्रेष्ठ है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—गरम, कटु, तिक्त, पित्तकारक, हलकी, कान और आँख के रोगों का नाश करनेवाली तथा शीत, वात, कुष्ठ और कफ को हरनेवाली है। मंगलकारी और सुगंधित धूप में व्यवहार करने योग्य है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में गरम और तीसरे में रुक्ष, प्राणवायु को स्वच्छकारक, रोध-उद्घाटक, हृदय को प्रसन्नकारक, स्नायु को बलकारी, इंद्रिय, यकृत्, पक्वाशय और अंत्रि को बल देनेवाली, वातनाशक, गर्भाशय की शीतता को लाभकारी, ओजप्रद और हृदय की व्याकुलता का नाश करनेवाली है। गरम मिजाज को हानिकारक है।

दर्पनाशक—कपूर और गुलाब।

प्रतिनिधि—दालचीनी, लौंग, केसर, चंदन, बालछड़ और रूमी मस्तकी।

मात्रा—६ रत्ती से ३ माशे।

प्रयोग—१. अगर की उत्तम लकड़ी औषध-प्रयोग में आती है। यह सुगंधित धूपादि में डाली जाती है। वात-

रक्त में अगर और सोंठ का काढ़ा पिलाने से और शून्य स्थान में इसका लेप करने से लाभ होता है। ३. अतिसार में अगर और अतीस के चूर्ण का सेवन करना गुणकारी है। ४. छर्दि वा वमन में अगर और भूने हुए कमलगट्टे की सफेद गिरी के चूर्ण को मधु के साथ चाटना चाहिए। ५. चक्कर (घुमरी) में इसकी लकड़ी सूँघना हितकारी है। ६. ज्वर की तृषा में इसका काढ़ा पिलाना और ज्वर में अगर और सतावर का काढ़ा देना हितकारी है। ७. पसीना रोकने के लिये इसका महीन चूर्ण मलना चाहिए। ८. मंदाग्नि और हृदय रोग में इसके चूर्ण को मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ९. अगर का गोंद वात रोग में लेप करना हितकारी है। १०. अगर का तेल गर्म, कृमिनाशक, ओज को बढ़ानेवाला तथा स्नायु को दृढ़ करनेवाला है। वात रोग, गठिया और खुजली में इसकी मालिश करनी चाहिए।

प्रतिनिधि—देवदारु का तेल।

अगर तुरकी-[फा०], **अगर तुर्की**-[फा०] } बच। बचा। घोर बच।

अगर सख्त-[हिं०] अगर। अगुरु।

अगरसार-[हिं०] काली अगर। स्वाद्वागुरु। स्वादु अगर।

अगरा-[सं०], **अगरी**-[सं०] } देवदाली। देवताड़। घघर बेल। सोनैया।

अगरु-[सं०, बं०] अगर। अगुरु।

अगरुकाष्ठ-[बं०] अगर। अगुरु।

अगरुगिड़-[क०] शीशम। शिंशपा वृक्ष।

अगरु चंदन-[बं०] अगर अगरु।

अगरुसार-[हिं०] काली अगर। कृष्णागुरु। स्वादु अगर।

अगरे तुर्की-[फा०] बच। बचा।

अगरे हिंदी-[अ०, फा०], **अगलुगेन**-[अ०] } अगर। अगुरु।

अगलु शोंठि-[क०] पाठा। पाढ़ी।

अगसत्मरि-[ता०] जलकुंभी। वारिपर्णी। कुंभिका।

अगसि-[क०] तीसी। अलसी। अतसी।

अगसे-[क०, खा०], **अगसेध**-[सं०], **अगस्त**-[हिं०], **अगस्ता**-[मु०, मरा०], **अगस्ति**-[सं०] } १. अगस्त। [सं०] अगस्त्य। वंगसेन। बक। मुनिद्रुम। इत्यादि। [हिं०] बसना। हतिया। हथिया। अगथिया। अगस्तिया। [बं०] वक। बक। बक फुलेर गाछ। [मरा०] हदगा। [मा०] अगस्त्यो। अगथ्यो। [क०] अगचे। अगिचे। [गु०] अगथियो। अगथिओ। अगथीयो। [पं०] हदगा। हथिआ। [ते०] अविसी। अगिसे। अवसि। अविसे। [ता०] अगती। अगति। [द्रा०] अहत्ति। अत्ति। [लै०] Sesbania grandiflora. Syn: Aeschynomene grandiflora. Syn: Agati grandiflora. Syn: Coromilla grandiflora. [अं०] Large-flowered Agati.

अगस्त्य का वृक्ष मध्यम आकार का २० से ३० फुट तक ऊँचा होता है। छाल हलके भूरे रंग की और चिकनी होती है। लकड़ी सफेद और कोमल होती है। पत्ते इमली के पत्तों के समान पर उनसे आकार में बड़े १–१॥ इंच लंबे, किंचित् अंडाकार, आध से एक इंच तक लंबे सींकों पर १०–१२ जोड़े समवर्ती लगते हैं। फूल २ से ४ इंच तक लंबे, तिरछे, लाल या सफेद होते हैं। फलियाँ १०–१२ इंच लंबी, तिहाई इंच चौड़ी और चिपटी होती हैं।

यह वाटिकाओं में लगाया जाता है; विशेषकर दक्षिण भारत, गंगा के आसपास, दोआब और बंगाल में अधिक होता है।

फूल के रंगों के भेद से यह चार प्रकार का होता है। इनमें से सफेद और किंचित् पीले फूलवाले अगस्त का वृक्ष प्रायः हिंदुस्तान के दक्षिण और पूर्वीय प्रांत, अंतरवेद और राजपूताना आदि अनेक प्रांतों में होता है। लाल फूलवाले अगस्त का वृक्ष भी कहीं कहीं वाटिकाओं में पाया जाता है, किंतु बंगाल में अधिक देखने में आता है। इसका वृक्ष दीर्घजीवी नहीं होता, प्रायः ७–८ वर्ष में सूख जाता है। वर्षा ऋतु से शीत काल तक फूल-फल लगते रहते हैं। फूलों का शाक और बजके बनते हैं।

इसके वृक्ष लगाने के लिये वर्षा ऋतु उत्तम समय है। बीज से और शाखा से गूल कलम करके पौधे तैयार किए जाते हैं। इसके लिये साधारण दुम्मट मिट्टी पर्याप्त है और खाद देने से वृक्षों का तेज बढ़ता है। लाल फूलवाला अगस्त बारहों मास फूल देता है।

गुण-दोष—यह शीतल, रूखा, वातकारक, तिक्त, कड़ुवा और शीतवीर्य है। पित्त, कफ, चातुर्थिक ज्वर और प्रतिश्याय (जुकाम) का नाश करनेवाला है। इसका फूल शीतल, स्वाद कड़ुवा, कसैला, पचने में चरपरा तथा चौथिया ज्वर, रतौंधी, पीनस, कफ, पित्त और वात का नाश करनेवाला है।

इसके पत्ते चरपरे, कड़ुवे, भारी, मधुर, किंचित् गरम तथा कृमि, कफ, कंडु, विष और रक्त-पित्तनाशक हैं।

इसकी फली सारक, बुद्धिवर्धक, हलकी, पचने में मीठी, कड़ुवी, स्मरणशक्ति को बढ़ानेवाली, त्रिदोष, शूल, कफ, पांडु-रोग, विष, राजरोग और गुल्मनाशक है।

इसकी पकी फली रूखी और बादी है। इसका फूल शीतल, स्वाद में कड़ुवा, कसैला, पचने में चरपरा तथा चौथिया ज्वर, रतौंधी, पीनस, कफ, पित्त और वात का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. इसकी जड़, छाल, पत्ते और फूल प्रयोग में आते हैं। बंबई में इसके पत्तों और फूलों का अधिक उपयोग किया

अगर पुष्प और फल

अगर

पृ० २०]

अगस्त वृक्ष

पृ० ३०]
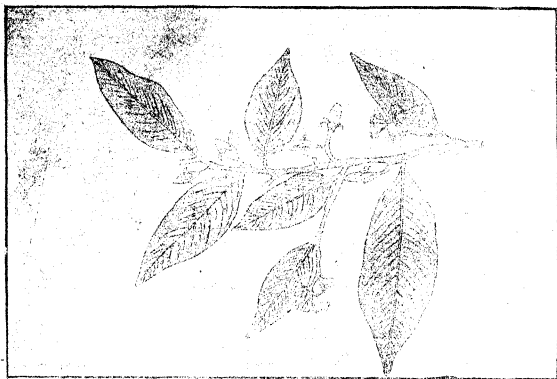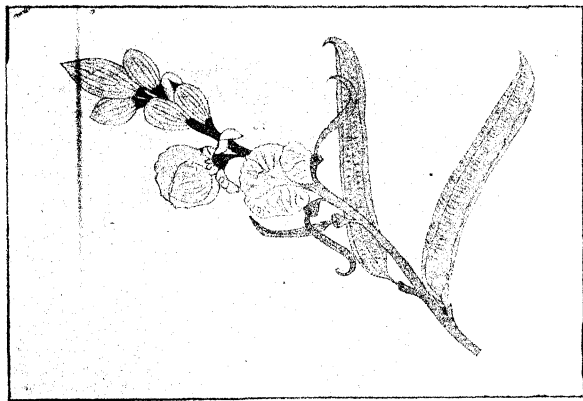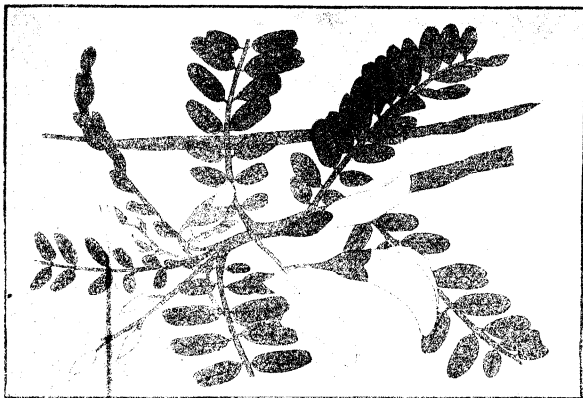
जाता है। नाक से शब्द करनेवाले प्रतिश्याय और शिरपीड़ा में इसके रस का उपयोग किया जाता है। नाक में इसको फूँक देते हैं जिससे नाक से मवाद निकलकर पीड़ा दूर हो जाती है। संधिवात पर लाल फूलवाले अगस्त की जड़ पानी में पीसकर लगाते हैं। जड़ का रस १-२ तोले की मात्रा में प्रतिश्याय में दिया जाता है।

पत्ते मृदुरेचक होते हैं। वैद्यक में छाल का हिम या फाँट दिया जाता है। छाल बहुत संकोचक और बलकारी है। मरोड़ पर पत्ते की पुल्टिस लाभदायक है। दृष्टिमांद्य पर पत्ते का रस आँख में टपकाया जाता है। बंबई में इसके फूल और फलियाँ दाल में छोड़कर अथवा तरकारी बनाकर खाते हैं। फलियों की बनाई हुई तरकारी का स्वाद अच्छा नहीं होता; तो भी स्वाद पर ध्यान न देकर लोग खूब खाते हैं। इसके कोमल पत्तों, फूलों और फलियों की तरकारी बनती है; पर इसका अधिक सेवन अतिसार उत्पन्न करनेवाला है। इसकी छाल ग्राही होती है। २. अतिसार में छाल के चूर्ण की फंकी देना लाभदायक है। ३. मसूरिका (चेचक, शीतला) में छाल का हिम या फाँट पिलाना हितकारी है। ४. प्रतिश्याय में पत्तों और फूलों का रस सूँघना चाहिए। ५. सिर की पीड़ा और उसके भारीपन में पत्तों और फूलों का रस नासिका द्वारा मस्तक में चढ़ाने से पानी गिरकर व्यथा नष्ट होती है। ६. कोष्ठ-बद्धता में पत्तों का काढ़ा देना चाहिए। ७. चोट और चोट की सूजन पर पत्तों की पुल्टिस बाँधना हितकारी है। ८. चातुर्थिक ज्वर में फूल या पत्तों का रस सूँघना चाहिए। ९. वात रोग और गठिया की सूजन पर लाल फूल के अगस्त की जड़ को पानी में पीसकर गरम करके लेप करना हितकारी है। १०. धुंध में फूलों का रस आँख में टपकाना गुणकारी है। ११. रतौंधी में फूलों का शाक खाना अच्छा है। १२. खुजली पर इसके रस का मर्दन करना चाहिए।

२. मौलसिरी। बकुल वृक्ष। मौलसरी।

अगस्तिकुसुम-[सं०], **अगस्तिद्रु**-[सं०], **अगस्तिद्रुम**-[सं०] — अगस्त। मुनिद्रुम। वक वृक्ष।

अगस्तिपुष्प-[सं०], **अगस्तिया**-[हिं०] — अगस्त। अगस्त का फूल।

अगस्त्य-[सं०], **अगस्त्याक**-[सं०] — अगस्त। वक वृक्ष। हदगा।

*अगार धूम-[सं०] झोल। गृहधूम।

अगिचे-[क०] अगस्त। वक वृक्ष।

अगिनबूटी-[मु०, द०] कुरंड। कुरंडिका।

अगिया-[हिं०], **अगिया खड़**-[हिं०], **अगिया घास**-[हिं०] — भूतृण। भूस्तृण। शरग्रान। रोहिस घास।

अगिर-[सं०] चीता। चित्रक क्षुप।

अगिवथ-[उ०] अरनी। अग्निमंथ। गनियार।

अगिशचेट्टु-[ते०] कुड़ा। कुटज वृक्ष।

अगिसे-[ते०] अगस्त। वक वृक्ष।

अगुंजा-[फा०] हींग। हिंगु।

अगुरुकाष्ठमु-[ते०] अगर। अगुरु।

अगुयाबात-[उ०] अरनी। अग्निमंथ। गनियार।

अगुर-[पं०], **अगुरु**-[सं०] — अगर। अगुरु।

अगुरु-[सं०] शीशम। शिंशपा वृक्ष।

अगुरुगंध-[सं०] हींग। हिंगु।

अगुरुशिंशपा-[सं०] शीशम काला। कपिल शिंशपा। काला शीशम।

अगुरुसार-[सं०] काली अगर। कृष्णागर। स्वादु अगर।

अगुरुसारा-[सं०] शीशम। शिंशपा।

अगूढ़-[सं०] एरंड सफेद। श्वेतैरंड। सफेद अरंड।

अगूढ़गंध-[सं०] १. हींग। हिंगु। २. प्याज। पलांडु। ३. कस्तूरी। मृगनाभि। ४. लहसुन। लशुन।

अगेथ-[हिं०], **अगेथु**-[पं०], **अगेथू**-[पं०], **अगेथूरनी**-[हिं०] — अरनी। अग्निमंथ। गनियार। गनियल।

अगोकर-[ते०] खेखसा। ककोंटकी। खेकसा। चठइल।

अग्गलिचंड-[ता०] अगर। अगुरु।

अग्नद-[बं०] पाठा। पाढ़ी।

अग्नि-[सं०] १. चीता। चित्रक। २. भिलावाँ। भल्लातक। ३. नींबू। निंबूक। ४. जठराग्नि। पित्त (पचानेवाली शक्ति) ५*. आग। आतिश।

अग्निक-[सं०] १. बीरबहूटी। इंद्रगोप कीट। २. भिलावाँ। भल्लातक। ३. चीता। चित्रक क्षुप।

अग्निकाष्ठ-[सं०] १. करील। करीर। २. अगर। अगुरु। ३. शमी। छिकुर। साइँ गाछ।

अग्निगर्भ-[सं०] १. अंबर। अग्निजार। २. आतिशी शीशा। सूर्यकांतमणि।

अग्निगर्भा-[सं०] १. शमी। छिकुर। २. मालकांगुनी बड़ी। महाज्योतिष्मती। बड़ी मालकंगनी।

अग्निचूड़-[सं०], **अग्निचूड़ा**-[सं०] — मुरगा। मुर्गा। कुक्कुट पक्षी।

अग्निज-[सं०]
अग्निजात-[सं०]
अग्निजार-[सं०]
अग्निजाल-[सं०] } अंबर। अंबर अशहब। अग्निजार। कोई कोई कहते हैं कि अग्निजार अंबर से एक भिन्न वस्तु है और इसका वृक्ष पश्चिमी समुद्र के किनारे होता है तथा अग्निजार नाम से प्रसिद्ध है। यह देखने में लोहित वर्ण का और स्वाद में कडुवा होता है।

अग्निजिह्वा-[सं०]
अग्निजिह्विका-[सं०] } कलिहारी। लांगली। करियारी।

अग्निज्वाला-[सं०] १. गजपीपल। गजपिप्पली। २. चव्य। चविका। चाब। ३. कलिहारी। लांगली। ४. जलपीपल। जलपिप्पली। ५. धातकी। धव। धवई। ६. धतूरा सफेद। श्वेतधुस्तूर।

अग्निदग्ध-[सं०] आग से जलना। इसकी गणना आगंतुक रोगों में है। यह रोग दो प्रकार का होता है—एक तेल आदि से जलना; दूसरा तप्त, लोहे आदि और अग्नि से दग्ध होना। दोनों प्रकार के अग्निदग्ध के चार भेद होते हैं—१. प्लुष्टदग्ध-जिसमें शरीर का वर्ण बदल जाय। २. दुर्दग्ध-जिसमें दाह, पीड़ा और फोड़े हो जायँ तथा जो बहुत दिनों में मिटे। ३. सम्यक् दग्ध—जिसमें अंग का वर्ण ताँबे के समान हो, दाह और पीड़ा हो तथा फैले नहीं; और ४. अतिदग्ध, जिसमें त्वचा और मांस सब दग्ध होकर शरीर से पृथक् हो जायँ, नसें, स्नायु, हड्डी, संधि इत्यादि दग्ध हो जायँ, इनमें अत्यंत पीड़ा और दाह हो तथा ज्वर, तृषा, मूर्च्छा हो और जिसमें अंकुर देर से निकले।

साधारणतः यह रोग तीन भागों में विभक्त हो सकता है; जैसे—१. साधारण दग्ध-जिसमें जला हुआ स्थान प्रायः लाल होकर फूल जाय या उसमें थोड़ी देर तक अत्यंत जलन मालूम हो तथा तत्काल छाले या फफोले पड़ जायँ। २. गंभीर दग्ध—जिसमें जले हुए अंग का थोड़ा या बहुत सा चमड़ा जलकर खराब हो जाय, उसमें कहीं कहीं ऊपर को उभरे हुए, नरम, मोटे, धूसर या बादामी रंग के दाग या चकत्ते से पड़ जायँ तथा इन चकत्तों के चारों ओर छोटे छोटे फफोले पड़ें या लाली हो जाय। और ३. सांघातिक दग्ध—जिसमें शरीर का एक स्थान या कई स्थान बहुत देर तक अत्यंत तीक्ष्ण अग्नि से जलते रहें।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अनार नं० ३१। आम नं० १६। आलू नं० २। इमली नं० ३४। कपास नं० ५, २८। कपास के बीज नं० ५, १३। करंड नं० १। करेला नं० २४। कायफल नं० ६। केला नं० ८। केश नं० १। कहरुवा नं० ४। कोयला नं० ३। खैरसार नं० १२। गाजर नं० ४। गिलोय नं० ६। गेहूँ नं० १३। गोरखपान नं० ६। घीकुँआर नं० २३, ६५। चूना नं० २५, ३१, ४१, ४३। चौलाई नं० २७। जौ नं० १०, २१। जामुन नं० ४०। झरबेर नं० २। तिल नं० ७। तीसी नं० १८। तीसी का तेल नं० ८। धातकी नं० १०। नारियल नं० ४। नील नं० ६। परवल कडुवा नं० ३। पाढ़र नं० ४। पीपल नं० १६। बड़ नं० ३१। बथुआ नं० ८। बादाम जंगली नं० ५। बिहीदाना नं० ८। बेर नं० २५। मधु नं० ४०। मुलेठी नं० ५। मेथी का साग नं० ३। मेंहदी नं० ५। राल नं० १०। लोणा बड़ी नं० ७। सफेदा नं० १। सरिवन नं० ४। सिरका नं० १४। हरीतकी नं० १०। हींग नं० ८।

अग्निदमनक-[सं०]
अग्निदमना-[हिं०]
अग्निदमनी-[सं०]
अग्निदवना-[हिं०] } अग्निदमनी। [हिं०] आगदवन। आगदमन। [म०] आगीदवण। [क०] चितरटे।

अग्निदमनी क्षुप जाति की वनौषधि धमासे का भेद है। कुछ वैद्य इसको दौने का भेद मानते हैं। इसका चित्र शालिग्राम निघंटुभूषण से उद्धृत है।

गुण-दोष—चरपरी, गरम, रूखी, वात और कफनाशक, रुचिकारी, अग्नि-प्रदीपक, हृदय को हितकारी तथा वात, कफ, गुल्म, वायगोला और प्लीहा का नाश करनेवाली है।

अग्निदीपन-[सं०] वरुन। वरुण वृक्ष।

अग्निदीप्ता-[सं०] मालकंगनी बड़ी। महाज्योतिष्मती लता। बड़ी मालकांगुनी।

अग्निधमन-[सं०] बकायन। महानिंब। घोड़ा निंब।

अग्निनिर्यास-[सं०]
अग्निनिर्य्यास-[सं०] } अंबर। अग्निजार।

अग्निपर्णी-[सं०] भूतृण। भूस्तृण। अगिया। रोहिस घास।

अग्निपाली-[सं०] चीता। चित्रक।

अग्निफला-[सं०] मालकंगनी बड़ी। महाज्योतिष्मती लता।

अग्निबीज-[सं०] १. सोना। स्वर्णधातु। २. अरनी। अग्निमंथ। गनियार।

अग्निभ-[सं०] सोना। स्वर्ण।

अग्निभा-[सं०] मालकंगनी बड़ी। महाज्योतिष्मती लता।

अग्निभु-[सं०] १. सोना। स्वर्ण। २. जल। पानी।

अग्निमंथ-[सं०] अरनी। गणिकारिका।

अग्निमणि-[सं०] आतशी शीशा। सूर्यकांतमणि।

अग्निमथन-[सं०] अरनी। गणिकारिका।

अग्निमय-[सं०] विधारा। वृद्धदारु।

अग्निमांद्य-[सं०] मंदाग्नि। [अ०] जोफ-इश्तहा-मेअदा।

जिसमें थोड़ा भी किया हुआ भोजन भली भाँति नहीं पचता उसको "मंदाग्नि" कहते हैं। मनुष्य को कफ की अधिकता से मंदाग्नि होती है, और मंदाग्नि से "कफज रोग" उत्पन्न होते हैं।

अगस्त सफेद

पृ० २२]

आजकल पढ़े-लिखे भारतवासियों में अधिकांश ऐसे हैं जो इस रोग के शिकार हो रहे हैं। उनका आमाशय या कोष्ठ ठीक-ठीक काम नहीं करता। वे लोग इसको मामूली बात समझते हैं, परंतु पीछे इसी से अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इस रोग का बीज प्रायः विद्याभ्यास काल में ही उत्पन्न होता है; और यह ऐसा दुष्ट रोग है कि एक बार इसका आक्रमण हो जाने पर जीवन-पर्यंत कुछ न कुछ बना ही रहता है। जो लोग अधिकतर मस्तिष्क का काम करते हैं और व्यायाम तथा अंग-संचालन का जिनको कम अवसर मिलता है एवं जिनके भोजन और विश्राम का प्रबंध उपयुक्त नहीं होता, जिन्हें स्नान के उपरांत तुरंत भोजन की आदत होती है और जो चाय तथा कहवे का अधिक व्यवहार करते हैं, वे इस रोग से अधिक पीड़ित होते हैं। ज्यों-ज्यों अवस्था अधिक होती जाती है, त्यों-त्यों कष्ट भी बढ़ता जाता है।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अकरकरा नं० १६। अगर नं० ८। अजमोदा नं० ७। अजवायन नं० ४, ५, १२। अजवायन का तेल नं० १। अतीस नं० १२। अदरक नं० १६, १७। अनंतमूल काली नं० ३। अफीम नं० २८। अबरक नं० ५। आँबा हलदी नं० ५। आमड़ा नं० २। अरनी नं० ५। आक लाल नं० १, २६। आँवला नं० ३, ४। इमली नं० २२। इलायची बड़ी नं० ७। ऊँट कटीरा नं० ३। कंटकारी नं० २८। कचनार लाल नं० ७। कटभी नं० ७। कन्ना नीबू नं० ७। करंज नं० २१। कलपनाथ। कलिहारी नं० १४। काकड़ासिंगी नं० ५। कुचला नं० १०। कुटकी नं० ८। कुलंजन नं० ४। कुलंजन बड़ा नं० ५, १०। कूट नं० १२। केला नं० १४। कौड़ी नं० ५। गंधक नं० ५, ३८। गिलोय नं० २०, ३०। गिलोय का सत नं० २६। गुड़ नं० ३। गूगल नं० ८। गेहूँ नं० १६। गोरखी नं० ५। घीकुँवार नं० ८, ३६। घीकुँवार क्षार नं० ८। घृत नं० ६, १८। चना नं० २०। चना खार नं० ६। चांगेरी नं० २। चिरायता नं० १२। चूका नं० ४। जौ नं० १५। जस्ता नं० ४। जायफल नं० १३। जीरा सफेद नं० २०, २४। ढाक नं० ७, २१। तुंबरु नं० २। तुलसी नं० ३३। तूत मीठा नं० ५। दंती बड़ी नं० १०। धनिया नं० २२, ३८। नमक नं० ६। नाड़ी हिंगु नं० १०। नारंगी नं० १३, १६। नारियल नं० ६। नारियल दरियाई नं० ७। नासपाती नं० ६। पपीता नं० ६, १४। पाठा नं० ११। पाताल गारुड़ी नं० ४। पारा नं० १४। पाषाणभेद नं० ४। पिंड खजूर नं० १०। प्याज नं० १४। पीपल (वृक्ष) नं० ३३। पीपल नं० १४, २६, ३१, ४२। पुनर्नवा रक्त नं० २५। पेठा नं० ४। बबूर नं० ५०। बरुन नं० ६। बहेड़ा नं० ८। बाय विडंग नं० ५। बेर नं० २। बेल नं० ३८। बोल नं० ११। भाँग नं० ४, १४। मँगरेला नं० २। मकोय नं० ३। मिर्च नं० १६। मानकंद नं० ३। मुंडी नं० ५८। मुसब्बर नं० २। राँगा नं० १४। राई नं० ५। राई काली नं० ६, १२। राल नं० ७। लाल मिर्च नं० १२, १५। लोहा नं० १०। लौंग नं० २, १२। शिलाजीत नं० ३४। सतिवन नं० ५। सत्यानाशी की जड़ नं० ५। सनाय नं० ८। सरफोंका नं० ३। सहिजन नं० १२, १७। सिंगरफ नं० ५, ६। सुहागा नं० ७। सेंधा नमक नं० २। सोंठ नं० १३। सोआ के बीज नं० ३। सोना पाठा भेद नं० २। सोनामक्खी नं० ५। हड़जोड़ी नं० २। हरिताल नं० २२। हरीतकी नं० ६। हीरा नं० ५। हुरहुर नं० १०।

अग्निमाली–[सं०] चीता। चित्रक।

अग्निमुख–[सं०] १. भिलावाँ। भल्लातक। २. चीता। चित्रक। ३. कसूम के फूल। कुसुंभ पुष्प।

अग्निमुखी–[सं०] १. भिलावाँ। भल्लातक। २. कलिहारी। लांगली। ३. गिलोय। गुडुच। गुरुच।

अग्निरजा–[सं०]
अग्निरज्जु–[सं०] } बीर बहूटी। इंद्रगोप कीट।

अग्निरुहा–[सं०]
अग्निरोहिणी–[सं०] } मांस रोहिणी। रोहिनी। मांस रोहिनी।

अग्निवक्त्र–[सं०] भिलावाँ। भल्लातक।

अग्निवती–[सं०] भूतृण। भूस्तृण।

अग्नि वल्लभ–[सं०] १. शाल। सालू वृक्ष। सखुआ। २. राल। सर्ज्ज निर्यास।

अग्निवीर्य–[सं०]
अग्निवीर्य्य–[सं०] } सोना। स्वर्ण धातु।

अग्नि वेंड़ पाकु–[ते०]
अग्नि वेंद्पाकु–[ते०] } कुरंड। कांडिका।

अग्निशिख–[सं०] १. कसूम। कुसुंभ। बरें। २. केसर। जाफरान। ३. सोना। सुवर्ण धातु। ४. कलिहारी। लांगली। ५. पूतिकरंज। दुर्गंध करंज। नाटा करंज। ६. जमींकंद। ओल।

अग्निशिखा–[सं०] १. कलिहारी। लांगली कलिकारी। २. चौलाई। तंडुलीय शाक। ३. चीता। चित्रक। ४. [ते०] कसूम। कुसुंभ।

अग्निशेखर–[सं०] १. केसर। कुंकुम। जाफरान। २. कुसुम। कुसुंभ वृक्ष। ३. कलिहारी। लांगली। ४. विशल्यकरणी।

अग्निष्टोम–[सं०] सोम लता। सोमवल्ली।

अग्निसंभव–[सं०] १. कुसुम। कुसुंभ। २. आरण्य कुसुंभ। बनकुसुम।

अग्निसंस्पर्शा–[सं०] पपरी। पर्पटी।

अग्निसहाय–[सं०] १. कबूतर । बन पारावत । जंगली कबूतर । २. उल्लू । उल्लूक पक्षी । ३. वायु । पवन । हवा ।
अग्निसार–[सं०] रसौत । रसवत । रसांजन ।
अग्निस्फुलिंग–[ते०] मूँज । रामसर ।
अग्र–[सं०] पल परिमाण, ४ तोला ।
अग्रज–[सं०] नीलकंठ । भास पक्षी ।
अग्रधान्य–[सं०] बाजरा । साजक ।
अग्रपर्णी–[सं०] कौंछ । किवाँछ । कपिकच्छु ।
अग्रपुष्प–[सं०] बेंत । वेतस ।
अग्रमांस–[सं०] हृदय । दिल । कलेजा ।
अग्रलोड्य–[सं०] कसेरू छोटा । चिंचोटक क्षुप । छोटा कसेरू ।
अग्रलोहिता–[सं०] बथुआ । वास्तूक शाक ।
अग्रधा–[सं०] } त्रिफला । फलत्रिक । (हरीतकी, बहेड़ा
अग्रा–[सं०] } और आँवला)
अग्रिमा–[सं०] १. शरीफा । आतृप्य । सीताफल । २. रामफल । एनोना ।
अघविर्णी–[व०] मंडूकपर्णी । मंडुक पानी ।
अघाड़–[मु०, मरा०] } ओंगा । अपामार्ग । चिचड़ा ।
अघाड़ा–[मरा०] }
अघेड़ी–[गु०] १. ओंगा । अपामार्ग । २. काकजंघा । मसी ।
अघेड़ो–[गु०] ओंगा । अपामार्ग ।
अचरणा–[सं०] योनिरोग भेद ।
अचार–१. [हिं०] संधान । अँचार । [म०, प्र०] चिरौंजी । पयाल वृक्ष ।
अचिंत्यज–[सं०] पारा । पारद ।
अचिरपल्लव–[सं०] सतिवन । सप्तपर्ण वृक्ष । छतिवन ।
अची–[ता०] सोना पाठा । स्योनाक वृक्ष ।
अच्छ–[सं०] १. गोंद पटेर । गुंद वृक्ष । २. रीछ । भल्लुक । भालू । ३. बिल्लौर । स्फटिक ।
अच्छभल्ल–[सं०] } रीछ । भालू । भल्लूक ।
अच्छभल्लूक–[सं०] }
अच्छिन्नपत्र–[सं०] सिहोरा । शाखोट वृक्ष । सिहोर ।
अच्छुक–[सं०] १. तिनिश । जारुल वृक्ष । २. आच्छुक । रंजनद्रुम ।
अच्युतावास–[सं०] पीपल । अश्वत्थ वृक्ष ।
अजंभ–[सं०] मेढ़क । भेक । बेंग ।
अज–[सं०] १. बकरा । छाग । खसी । २. सोनामाखी । स्वर्णमाक्षिक धातु ।
अजक–[सं०] १. बर्बरी नं० २ । अर्जक । २. तुलसी । सुरसा ।
अजकर्ण–[सं०] १. बिजैसार । असन वृक्ष । २. शाल बड़ा । शाल भेद । बड़ा शाल ।
अजकर्णक–[सं०] १. बिजैसार । असन वृक्ष । २. शाल बड़ा । अजकर्ण ।
अजकूलंग–[ता०] असगंध । अश्वगंधा ।
अजकेशी–[सं०] नील । नीली वृक्ष ।
अजक्षीर–[सं०] बकरी का दूध । छाग-दुग्ध ।
अजक्षीरनाश–[सं०] सिहोरा । शाखोट वृक्ष । सिहोर ।
अजखर–[अ०] } १. जरांकुश । इजखारी जटा । २. रोहिस
अजखर मक्की–[अ०] } घास । अगिया ।
अजगंधा–[सं०] १. अजमोदा । अजमोद । २. तिलवन । अजगंधिका । ३. बर्बरी । बनतुलसी ।
अजगंधि–[म०] नीलाम्ली । काली पिठोली ।
अजगंधिका–[सं०] १. अजमोदा । अजमोद । २. तिलवन । अजगंधा । ३. बर्बरी । बनतुलसी । बबुई तुलसी ।
अजगंधिनी–[सं०] मेढ़ा सिंगी । मेषशृंगी वृक्ष ।
अजगर–[सं०] बहुत बड़ा साँप । सर्प ।
अजगल्लिका–[सं०] १. बर्बरी । बनतुलसी । २. क्षुद्ररोग भेद । फुंसी । बालकों के शरीर के समान वर्णवाली चिकनी, पीड़ारहित, मूँग के समान जो पीड़िका उत्पन्न होती है, उसको "अजगल्लिका" कहते हैं ।
अजगल्ली–[सं०] बर्बरी । बनतुलसी ।
अज़गार–[फा०] सज्जी । स्वर्जिक्षार ।
अर्जजिसनय–[फा०] सेंठा । कसब ।
अजटा–[सं०] भुइँ आँवला । भूम्यामलकी । पाताल आँवला ।
अजड़ा–[सं०] १. भुइँ आँवला । भूम्यामलकी । २. कौंछ । कपिकच्छु । ३. लाल मिर्च । कटुवीरा ।
अजडाफल–[सं०] कौंछ । किवाछ । शुकशिंबी ।
अजथ्या–[सं०] जूही पीली । स्वर्णयूथिका । पीली जूही ।
अजदंडि–[सं०] } ब्रह्मदंडी । कंटपत्रफला ।
अजदंडी–[सं०] }
अजदा–[फा०] } अंबरवेद । यह एक प्रकार की घास है ।
अजदाकबीर–[फा०] } इसका फूल सफेद रंग का जरदी लिए हुए होता है ।
अजनामक–[सं०] १. सोनामाखी । स्वर्णमाक्षिक धातु । २. रूपामाखी । तारमाक्षिक धातु ।
अजनी–[सं०] हथजोड़ी । हस्तजोड़ि ।
अजपाड़–[सं०] कपूरवल्ली । पँजीरी का पात ।
अजप्रिया–[सं०] बेर छोटा । लघुबदरी ।
अजफारुतिब–[अ०] } नख । नखी नाम गंध-द्रव्य ।
अजफारुत्तीब–[अ०] }
अजवला–[सं०] १. तुलसी । कृष्णातुलसी । २. बर्बरी । बनतुलसी ।
अजवह–[अ०] माई छोटी । मायगर । छोटी माई ।
अजभक्ष–[सं०] बबूल । कीकर ।
अजभक्षा–[सं०] धमासा छोटा । क्षुद्र दुरालभा । हिंगुआ ।

अग्निदमनी
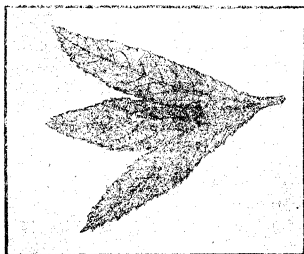
अजमोदा

अजमक-[सं०] गेहूँ । गोधूम ।

अजमा-[गु०] १. अजवायन । यवानी । २. कर्पूरवल्ली । पँजीरी का पात ।

अजमान-[हिं०] अजवायन । यवानी ।

अजमानु पत्र-[गु०] } कर्पूरवल्ली । कपूरबेल ।
अजमानु पात्रं-[गु०] }

अजमायन-[हिं०] अजवायन । यवानी । जवाइन ।

अजमायन खुरासानी-[यू०] खुरासानी अजवायन । पारसीक यवानी ।

अजमायन देशी-[यू०] अजवायन । यवानी ।

अजमुद-[मु०] करप्स कोही । अजमोदा पहाड़ी ।

अजमुदा-[द०] अजमोदा । अजमोद ।

अजमूद-[हिं०, मु०] करप्स कोही । अजमोदा पहाड़ी ।

अजमूदा-[हिं०] अजमोदा । अजमोद ।

अजमेद-[सिं०] कुई । कपूर मधुरा ।

अजमो-[गु०] अजवायन । यवानी ।

अजमोत-[हिं०] } अजमोदा । वन-यमानी ।
अजमोद-[हिं०] }

अजमोद कोही-[यू०] करप्स कोही । अजमोद पहाड़ी ।

अजमोद खुरासानी-[हिं०] खुरासानी अजमोद । पारसीक अजमोदा ।

अजमोद पहाड़ी-[हिं०] करप्स कोही । करप्स पहाड़ी ।

अजमोदा-[सं०] १. अजमोदा । खराश्वा । मायूरी । दीप्यक । ब्रह्मकुशा । कारवी । लोचमस्तका इत्यादि । [हिं०] अजमोत । अजमोद । अजमोदा । अजमूदा । [बं०] अजमूद । रांधुनी । चनु । वनयमानी । [द्रा०] आशामदा । [द०] अजमुदा । आजमुदा । अजवाँ । [म० प्र०] रांधुनी । [ता०] अशमटागम। तागम । अशमता ओमान । [ते०] अजमोदा । वोमा । अशमदागा वोमा । अजमोदा वोमरु । [क०] वोमा । [गु०] बोडी अजमोद । वोडी अजमो । [म०] अजमोदा वोवा । केरंजा । [खा०] अजमोदा वोमा । [फा०] करप्स । [अ०] बज़्रुल-करप्स । [लै०] Carum Roxburghianum. Syn: Opium involucratum, Ptychotes Roxburghiana.

भारतवर्ष के कई प्रांतों में इसकी खेती की जाती है तथा खेतों में यह आप ही आप भी उगती है ।

यह क्षुप जाति की वनस्पति वर्षजीवी होती है । इसके क्षुप कार्तिक, अगहन में उत्पन्न होते हैं और गर्मी में सूखकर चौमासे में नष्ट हो जाते हैं । पत्ते अनेक भागों में विभक्त रहते हैं । प्रत्येक भाग अनीदार, कँगूरेदार या कटे हुए किनारेवाले होते हैं । फूल और फल छत्ते के रूप में अजवायन के फूल-फल के समान लगते हैं ।

अनेक वैद्य और अत्तार भ्रमवश जंगली अजवायन को अजमोदा मानकर व्यवहार में लाते हैं और दो एक निघंटुकारों ने इसका लैटिन नाम "सेसिली इंडिकम" Sesili Indicum लिखा है । परंतु वास्तव में यह नाम जंगली अजवायन का है जिसको बिहार प्रांत में "घोड़ जवाइन" या "घोर अजवायन" कहते हैं और अजमोदे की जगह व्यवहार में लाते भी हैं । इसका पूर्ण परिचय "अजवायन जंगली" के अंतर्गत दिया गया है ।

अजवायन जंगली का क्षुप ४ से १२ इंच तक ऊँचा और अजमोदे का १ से ३ फ़ुट तक ऊँचा होता है ।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष-कड़ुवी, चरपरी, तीक्ष्ण, अग्निदीपन, गरम, उष्णवीर्य्य, दाहकारी, वृष्य, बलकारी, हलकी, कफ और वात के रोगों को दूर करनेवाली एवं कृमि, वमन, हिचकी और वस्ति रोग का नाश करनेवाली है ।

इसका अर्क वात और कफ-नाशक तथा वस्ति-शोधक है ।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, श्वास, रूक्ष कास और आंतरिक अवयव के शीत को गुणकारी, वायु और अफरा को नाश करनेवाली, यकृत्, प्लीहा और पथरी को दूर करनेवाली, मूत्र लानेवाली तथा क्षुधा और ओज का चालन करनेवाली है ।

इसकी जड़, बीज की अपेक्षा बलवान्, संपूर्ण कफज रोगों और जलोदर में गुणकारी तथा आहार पचानेवाली है । बीज परिमाणु (वाष्प) और मृगी उत्पन्न करवाले और जड़ फेफड़े के लिये हानिकारक है ।

दर्पनाशक—अनीसून, काहू के फूल और मस्तगी ।

प्रतिनिधि—खुरासानी अजवायन, सौंफ और अजमोद पहाड़ी ।

मात्रा—२ से ४ माशे तक ।

प्रयोग—१. प्रायः बीज ही औषध-प्रयोग में आता है । यह हिक्का, छर्दि और वस्ति की पीड़ा में लाभकारी है तथा अग्निमांद्य में व्यवहृत होता है । २. शूल रोग में इसके चूर्ण की फंकी काले नमक के साथ देनी चाहिए । ३. अफरे में इसके चूर्ण को गुड़ में गोली बनाकर सेवन करना हितकारी है । ४. वात-शूल में इसको गुड़ के साथ औटाकर पिलाना अच्छा है । ५. पसली, शूल और अंग की वातज पीड़ा में इसको गरम करके बिस्तर पर दर्द की जगह के नीचे रखना चाहिए । ६. मूत्राशय की वातज पीड़ा में इसको नमक के साथ कपड़े में बाँधकर नलों पर सेंक करना लाभदायक है । ७. भूख बढ़ाने के लिये इसके चूर्ण में नमक और पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करना हितकारी है । ८. भोजन के बाद हिचकी उत्पन्न होने पर इसको चूसकर रस निगलना उत्तम है । ९. दाँतों की पीड़ा में इसकी धूनी देना गुणकारी है । १०. बालक की

गुदा के छोटे छोटे सफेद कीड़े नष्ट करने के लिये इसकी धूनी देना उपकारी है। ११. घाव पकाने के लिए इसको गुड़ के साथ तेल में पकाकर दिन में कई बार बाँधने से फायदा होता है। १२. वमन में लौंग की टोपी या फल और अजमोदे को मधु के साथ चाटने से लाभ होता है। १३. सूखी खाँसी में पान में रखकर सेवन करना चाहिए। १४. वातरोग में इसको तेल में पकाकर उस तेल की मालिश करनी चाहिए। १५. शूल में एक माशे सोंठ के चूर्ण में इसका तेल १० बूँद छोड़कर गर्म किए हुए सौंफ के अर्क के साथ सेवन करना चाहिए। १६. उदर रोग में इसको गुड़ के साथ ७ दिन तक सेवन करने से लाभ होता है। १७. पथरी में इसके दो माशे चूर्ण को एक तोला मूली के रस के साथ सेवन करना हितकारी है।

[सं०] २. खुरासानी अजवायन। पारसीक यवानी। ३. अजवायन। यवानी।

अजमोदा श्रोमा–[तै०] अजमोदा। अजमोदिका। अजमोद।

अजमोदाख्या–[सं०] १. अजमोदा। अजमोद। २. अजवायन। यवानी।

अजमोदा वोमरु–[तै०]
अजमोदा वोमा–[खा०]
अजमोदा वोवा–[मरा०]
} अजमोदा। अजमोदिका। अजमोद।

अजमोदिका–[सं०] १. अजमोदा। अजमोद। २. अजवायन। यवानी।

अजया–[सं०] भाँग। विजया। भंग।

अजर–[सं०] सोना। स्वर्ण धातु।

अजरा–[सं०] १. विधारा भेद। जीर्ण फंजी लता। काला विधारा। २. कौंछ। किवाँच। कपिकच्छु। ३. घीकुँवार। घृतकुमारी। ४. छिपकली। गृहगोधा।

अजलोमा–[सं०]
अजलोमी–[सं०]
} कौंछ। किवाँच। आत्मगुप्ता।

अजवल्ली–[सं०] मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।

अजवाँ–[हिं०, मु०] अजवायन। यवानी।

अजवाइन–[हिं०]
अजवाण–[मा०]
अजवान–[हिं०]
} अजवायन। यवानी। जवाइन।

अजवान का पत्ता–[द०] कपूरवल्ली। कपूरबेल।

अजवान के पत्ते–[कच्छ०] करप्स कोही। अजमोद पहाड़ी।

अजवायन–[हिं०] अजवायन। अजवाँ। अजोवाँ। अजमायन। जवायन। [सं०] यवानी। यवानिका। उग्रगंधा। ब्रह्मदर्भा। अजमोदिका। यवसाह्वया। दीप्या। दीप्यका इत्यादि। [बँ०] यमानी। योवान। [मरा०] श्रोवा। [गु०] अजमा। अजमो। [क०] उंडु। [तै०] वामु। श्रोममी। श्रोममु। [मरा०] ऊँवा। [ता०] श्रमन। श्रोमम। [कच्छ०] चोहरा। [काश०] जाविंद। [खा०] श्रोमा। श्रोमु। [मा०] अजवाण। [फा०] जीनान। नानख्वाह। [अ०] अमूने मुलूकी। [बँ०] यवयान। [मु०] अजवा। श्रोवा। [फा०] नानुखा। [अ०] कमुन। [लै०] Carum capticum. Syn: Lingusticum Ajowan Ptychotis Ajowan. [अं०] The Bishop's weed Lowage Bishop's weed. Ajwa seeds.

भारतवर्ष में अजवायन की खेती अधिकता से की जाती है। उत्तर में पंजाब और बंगाल से लेकर दक्षिण तक इसकी खेती होती है।

इसका क्षुप वर्षजीवी और १ से ३ फुट तक ऊँचा होता है। पत्ते डालियों पर दूर दूर लगते हैं और धनिए के पत्ते के समान कटे हुए होते हैं। फूल छत्ते की तरह सफेद और बीजकोष बारीक होते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—पाचक, रुचिकारक, तीक्ष्ण, हलकी, अग्नि-प्रदीपक, पित्तकारक, स्वाद में चरपरी और कड़ुवी तथा शुक्र, शूल, वात, कफ, उदर-कृमि, अफरा, गुल्म और प्लीहा को नाश करनेवाली है।

इसका **अर्क**-पाचक, रुचिकारी, दीपन तथा शूल, अतिसार तथा शुक्र का नाश करनेवाला है। विशूचिका के आरंभ में इसका सेवन करना गुणकारी है।

पत्ते का साग—अग्निकारक, रुचिकारक, गरम, चरपरा, कड़वा, दीपन, पित्तकारी तथा वात, कफ और शूल का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—तीसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, पाचक, क्षुधा-वर्द्धक, रोध-उद्घाटक, मूत्र और आर्तव-प्रवर्तक तथा कफ-विकार, वायु-विकार, जलोदर और विशेषकर पथरी (अश्मरी) का नाश करनेवाली, गरम मिजाजवाले को हानिकारक, सिर में पीड़ाकारी और स्तनों का दूध सुखानेवाली है।

दर्पनाशक—उन्नाव, धनिया और खांड़।

प्रतिनिधि—मँगरैला और काला जीरा।

मात्रा—२ से ६ माशे तक।

प्रयोग—१. इसके बीज औषध-प्रयोग में आते हैं। यह स्निग्ध, उत्तेजक, बलकारी, अपान वायु निस्सारक तथा मंदाग्नि, अतिसार और विशूचिका में लाभकारी है। यह प्रायः हींग, हरीतकी और सेंधा नमक के साथ व्यवहार में आती है। बाजार में अजवायन का अर्क मिलता है, जिसको अँगरेजी में ओमम वाटर (Omum water) कहते हैं। अजवायन का सत्त और तेल भी बिकता है। ये चीजें मध्य भारत में उज्जैन और दूसरी जगह बनती हैं। २. प्रतिश्याय में इसको आग पर गरम करके पतले कपड़े में पोटली बाँधकर सूँघना चाहिए।

अजवायन

पृ० ३६

अजवायन के कपड़छान चूर्ण का नस्य लेने से सिर दर्द, नज़ला, सर्दी से उत्पन्न हुआ ज़ुकाम दूर होता है और दिमाग के कृमि नष्ट होते हैं। ३. अफरा में ६ माशे अजवायन के चूर्ण में १॥ माशे काला नमक मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। इसके चूर्ण की ३ माशे की मात्रा दोनों समय गरम पानी के साथ सेवन करने से वायु गोला का नाश होता है और पेट का फूलना बंद होता है। ४. मंदाग्नि में अजवायन और सोंठ को पानी में ४ प्रहर भिगोकर पीसे और छानकर गरम करे, फिर उसको नमक मिलाकर पीए तो लाभ होता है। ५. शूल, अफरा और मंदाग्नि में अजवायन, काली मिर्च और नमक के चूर्ण को गरम जल से प्रातःकाल सेवन करने से लाभ होता है। इंद्रायन के पके ताजे फलों में अजवायन भर कर रख दे, जब सूख जाय तब अजवायन को निकाल बारीक पीस उचित मात्रा में काला नमक मिलाकर रख छोड़े। एक तोले की मात्रा गरम जल के साथ देने से शूल, अफरा, पेट का दर्द आराम होता है। ६. बालक की छर्दि और अतिसार में माँ के दूध के साथ इसको देना हितकारी है। ७. आलस्य में इसके चूर्ण का सेवन करना हितकारी है। ८. कामोन्माद और मादक पदार्थों के सेवन का व्यसन छुड़ाने के लिये इसका व्यवहार करना उत्तम है। ९. सूखी खाँसी में पान के साथ इसका सेवन करना चाहिए। १०. अतिसार में इसका चूर्ण, हिम, फाँट या काढ़े का सेवन करना हितकारी है। ११. कोयले या मिट्टी खाने के व्यसन में इसके चूर्ण की फंकी देना हितकारी है। १२. क्षुधा और पाचन-शक्ति की वृद्धि के लिये घी, खाँड़ या पुराने गुड़ के साथ इसका लड्डू बनाकर खाना चाहिए। १३. कोष्ठबद्धता पर ६-६ माशे हरें, पीपल, सफेद, मिर्च और सेंधा नमक का चूर्ण, ३ माशे लौंग का चूर्ण, एक तोला साबूत अजवायन, सबको ७ दिन तक जँबीरी नींबू के रस में भिगोकर तथा छाया में सुखाकर सेवन करना चाहिए। १४. इनफ्लुएंजा (कफज्वर) में एक छटाँक अजवायन की ढीली पोटली को सवा सेर पानी में पकाकर १० छटाँक शेष रहने पर उतारकर शीतल कर पिलाने से लाभ होता है। १५. अजवायन को पानी में गाढ़ा पीस दिन में दो बार लेप करने से दाद, चंबल, कृमि-जनित चर्म्म रोग, कृमि पड़े हुए व्रण, अग्निदग्ध स्थान आदि में लाभ होता है। १६. अजवायन का चूर्ण तीन माशे की मात्रा से दिन में दो बार गरम दूध के साथ सेवन करने से स्त्रियों का रुका हुआ रज खुल कर आने लगता है। १७. इसके पके हुए पौधों के पंचांग का क्षार तैयार कर के उसकी एक रत्ती की मात्रा पान में रख कर खाने से कफज कास, श्वास रोग, बदहज़मी, उदर शूल, अफरा आदि आराम होते हैं। १८. इसके चूर्ण की ४ माशे की मात्रा दोनों समय छाछ के साथ सेवन करने से पेट के कृमियों का नाश होता है। १९. जले हुए अजवायन के कपड़छान चूर्ण में सम भाग सेंधा नमक मिला कर सात दिन सुरमे की तरह खरल कर दोनों समय सलाई से आँखों में लगाने से आँखों की फूली कट जाती है, दाँतों पर मलने से दाँत साफ होते हैं और मसूड़ों पर मलने से मसूढ़ों का फूलना और दर्द आराम होता है। २०. सम-भाग अजवायन और फिटकरी को छाछ के साथ पीस कर सिर पर मलने से जूँएँ मर जाती हैं। २१. सम-भाग अजवायन और नौसादर के चूर्ण को ३ माशे की मात्रा से दोनों समय सेवन करने से प्लीहा रोग आराम होता है। २२. वातज अर्श में इसके चूर्ण की ३ माशे की मात्रा कुछ घी मिले हुए गरम दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता है। २३. अजवायन, सोंठ और सेंधा नमक प्रत्येक के एक एक सेर चूर्ण में तीन छटाँक गंधक का तेज़ाब भली भाँति मिला कर ५-६ दिन के बाद सेवन करे। मात्रा १ माशा, अनुपान गरम जल। इससे सब प्रकार के उदर विकार नष्ट होते हैं।

अजवायन का तेल—देग-भभके द्वारा अर्क खींचने पर अर्क के ऊपर इसका तेल तैरता है। इसी अर्क में कई बार अजवायन और पानी डालकर अर्क खींचने से तेल अधिक प्राप्त होता है। तेल के ऊपर एक पदार्थ जम जाता है जिसको अजवायन का फूल कहते हैं। आजकल अजवायन का सत्त अँगरेजी दवाखानों में अधिक मिलता है।

प्रयोग—१. मंदाग्नि के लिए पान में दो बूँद तेल डालकर खाना हितकारी है। २. शूल में एक माशे दारचीनी के चूर्ण में २-३ बूँद छोड़कर सेवन करना चाहिए। ३. अजीर्ण में २-३ बूँद तेल लहसुन के साथ सेवन करना हितकारी है। ४. अफरा में इसका फूल सौंफ के अर्क के साथ देना हितकारी है। ५. शूल में इसी में ५ बूँद सौंफ का तेल मिलाकर पीने से लाभ होता है। ६. बाइटे में इसका तेल और सत मिलाकर मर्दन करना गुणकारी है। ७. कंठ, गले की नाली तथा गले के दाह, नासिका का पुराना व्रण, दुर्गंधदायक व्रण आदि पर तेल लगाने से लाभ होता है। ८. अजवायन का सत्व, शुद्ध कपूर और पुदीने का सत्व (पिपरमेंट) तीनों सम-भाग ले एक शीशी में एक एक कर डाल कर मज़बूत काग लगा हिलाकर धूप में रख देने से थोड़ी देर में तैलवत् द्रव पदार्थ बन जाता है। इसमें से १०-१५ बूँद की मात्रा सौंफ के अर्क अथवा पानी में देने से उदर शूल, बदहज़मी, अफरा, अजीर्ण, विशूचिका, मितली आदि में विशेष उपकार होता है।

अजवायन जंगली–[हिं०] १. अजवायन जंगली नं० १। २. अजवायन जंगली नं० २। वन यवानी। बन अजवायन।

अजवायन जंगली नं० १–[हिं०] बन अजवायन। बन

जवाइन। [सं०] वन यवानी। वन यवानिका। [बं०] बन योवान। [मरा०] किरमानी अजवा। [लै०] Seseli Indicum. Syn: Ligusticum Diffusum.

यह भारतवर्ष के खेतों में सिवालिक की तराई से आसाम और कारोमंडल तक तथा बिहार और बंगाल में अधिक पाई जाती है।

इसका क्षुप वर्षजीवी होता है। शाखाएँ ४ से १२ इंच तक लंबी, अनेक प्रशाखाओं के कारण सघन, सीधी अथवा फैली हुई रहती हैं। पत्ते प्रायः ३ भागों में विभक्त होते हैं। प्रत्येक भाग कटा हुआ, नुकीला और अनीदार होता है। फूल छत्ते के रूप में सफेदी लिए गुलाबी रंग के, फल गोल, बारीक, किंचित् लंबे और फीके पीले रंग के होते हैं।

कतिपय वैद्य इसको अजमोदा मानकर व्यवहार में लाते हैं। इसको 'घोड़ जवाइन' कहते हैं।

इसके बीज प्रायः चौपायों के लिये ओषधि-प्रयोग में आते हैं। यह उत्तेजक, शूलनाशक, आँतों को हितकारी तथा गोल कीड़े का नाशक है। चूर्ण की मात्रा २० ग्रेन से १ ड्राम तक।

अजवायन जंगली नं० २-[हिं०] बन अजवायन। बन जवाइन। [पं०] माशो। रांगस्बुर। मरिजहा। [लै०] Thymus Serpyllum.

यह हिमालय के गरम प्रांतों में काश्मीर से कुमाऊँ तक पाई जाती है।

यह क्षुप जाति की वनस्पति अनेक शाखाओं के कारण सघन, किंचित् रोमयुक्त, ६ से १२ इंच तक ऊँची और बहुत सुगंधित होती है। पत्ते छोटे छोटे इंच के अष्टमांश भाग से चतुर्थांश भाग तक के घेरे में किंचित् अंडाकार होते हैं। फूल लाल रंग के गुच्छों में आते हैं। फल बारीक और चिकने होते हैं।

पंजाब में इसका बीज कृमिघ्न के समान व्यवहृत होता है। हकीम लोग दृष्टिमांद्य, आँत की पीड़ा, वृक्क रोग, मूत्र की रुकावट आदि पर इसको व्यवहार में लाते हैं।

दंत-पीड़ा पर कभी कभी इसका तेल लगाया जाता है। फ्रांस में इसके पंचांग का काढ़ा, खुजली और अन्य चर्मरोगों पर व्यवहार में लाया जाता है। यह नशे और शिरपीड़ा में लाभकारी है।

अजशृंगिका-[सं०] १. मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी। २. काकड़ासिंगी। कर्कटशृंगी।

अजशृंगी-[सं०] }
अजशृंगीक-[सं०] } मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।

अजश्री-[सं०] फिटकिरी। फटकारिका। फिटकरी।

अजहा-[सं०] कौंछ। किवाँच। शूकशिंबी।

अजहिंजी-[ता०] ढेरा। अंकोट।

अजांत्री-[सं०] वचांत्री। विधारा भेद। फंजी।

अजा-[सं०] बकरी। छागी।

अजाक्षी-[सं०] कठूमर। काकोदुंबरिका। कोठा डुंबर।

अजाक्षीर-[सं०] बकरी का दूध। अजादुग्ध। अजापय।

अजागर-[सं०] १. भँगरा। भृंगराज। २. साँप। सर्प। अजगर।

अजाजि-[सं०] १. जीरा। श्वेत जीरक। २. काला जीरा। कृष्ण जीरक। ३. कठूमर। काकोदुंबरिका। कोठा डुंबर।

अजाजिक-[सं०] }
अजाजिका-[सं०] } जीरा। पीत जीरक। सफेद जीरा। शुक्ल जीरक।
अजाजी-[सं०] }

अजातक्र-[सं०] बकरी का मठा। छागी-तक्र।

अजाद दरख्त-[अ०] नीम। निंब वृक्ष।

अजादनी-[सं०] धमासा छोटा। क्षुद्र दुरालभा। छोटा धमासा।

अजादुग्ध-[सं०] बकरी का दूध। छागी-दुग्ध। छागी-क्षीर।

अजापय-[सं०] बकरी का दूध। अजाक्षीर। अजादुग्ध।

अजाप्रिय-[सं०] झरबेर। भूबदरी।

अजाप्रिया-[सं०] बेर। बदरी। बैर।

अजामांस-[सं०] बकरी का मांस। छागमांस।

अजाशृंगी-[सं०] काकड़ासिंगी। कर्कटशृंगी।

अजास-[अ०] आलू बुखारा। आरुक।

अजास येजाब-[अ०] सिवार। शैवाल।

अजाह्वा-कौंछ। किंवाच। आत्मगुप्ता।

अजिन-[सं०] हिरन का चमड़ा। मृगचर्म्म। मृगछाला।

अजिनपत्रा-[सं०] चमगादड़। चर्म्मचट्या। चिमगादर। बादुर।

अजिनपत्रिका-[सं०] १. चमगादड़। चर्मचट्या। २. उल्लू। उलूक।

अजिनपत्री-[सं०] चमगादड़। चर्म्मपत्री। बादुर।

अजिनयोनि-[सं०] हिरन। मृग।

अजिर-[सं०] }
अजिह्म-[सं०] } मेढ़क। दर्दुर। दादुर। बेंग।

अजीगर्त-[सं०] साँप। सर्प।

अजीरन-[हिं०] }
अजीर्ण-[हिं०] } अपच। अनपच। [फा०] तुख्मा। [यू०] बदहजमी। कब्जियत। [अं०] Dyspepsia, Indigestion.

जिस रोग में किया हुआ भोजन अच्छी तरह नहीं पचता तथा कभी पतला दस्त और कभी कब्ज होता है, उसको अजीर्ण कहते हैं। पराए धन-धान्यादि को देखकर जलना, डरना और अत्यंत क्रोध करना, शोक, दीनता, दूसरे के शुभ काम को बुरा समझना इत्यादि कारण होने पर किया हुआ

अजवायन जंगली नं० १

पृ० २८ ।
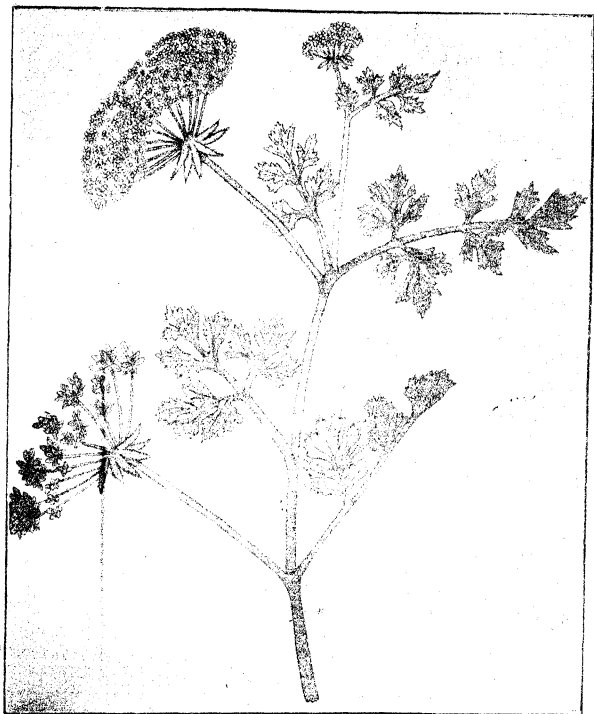
भोजन अच्छी तरह नहीं पचता तथा रोटी, पूरी, फल इत्यादि भोजन के पदार्थों को खूब चबाकर न खाने से, आवश्यकता से अधिक खाने से, अधिक जल पीने से, विषम भोजन करने से, मल-मूत्रादि के वेग को रोकने से, दिन में सोने से, रात्रि में जागने से, प्रकृति के विपरीत शीतल पदार्थ सेवन करने से, बिना क्षुधा के भोजन करने से, किसी प्रकार का परिश्रम न करने से, भोजन करके तत्काल सो जाने से, जठराग्नि की दुर्बलता से एवं पाचक रस के अच्छी तरह से उत्पन्न न होने से भोजन किया हुआ पदार्थ न पचकर मन में ग्लानि, शरीर में भारीपन, पेट में अफरा और चित्त में भ्रम उत्पन्न करता है तथा बार बार पतले दस्त आते हैं। यह "अजीर्ण रोग" कहा जाता है। कफ, पित्त और वात इन तीनों दोषों के प्रकोप से तीन प्रकार का अजीर्ण होता है। जैसे कफ के प्रकोप से 'आमाजीर्ण', पित्त के प्रकोप से 'विदग्धाजीर्ण' और वायु के प्रकोप से 'विष्टब्धाजीर्ण' होता है। इनके सिवा "रसशेषाजीर्ण", "दिन-पाकी अजीर्ण" और "प्राकृताजीर्ण" ये तीन प्रकार के अजीर्ण भी आयुर्वेद-शास्त्र में कहे गए हैं।

इस रोग की नाशक ओषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अजवायन का तेल नं० ३। अदरक नं० ५। अफीम नं० १७, १८। एरंड नं० ३५। कपास बागी नं० १। कटेली नं० ७। कुचला नं० १०, २५। केसर नं० २६। गंधक नं० २२। गुड़ नं० १५। घीकुँवार नं० १८। चनाखार नं० २, ६। चिरायता नं० ३। चीता लाल नं० २। चूना नं० ८, ४४। जौ नं० ३। जामुन नं० ३२। दही नं० २। धनिया नं० १८। पिस्ता नं० ३। पीपल नं० १७, ३१। पुदीना नं० १३। बच नं० ३। बेल नं० ४३। मँगरेला नं० २। राँगा नं० ७, १७। रोहिस घास नं० ५। लता करंज नं० ११। लौंग नं० १६। सत्यानाशी की जड़ नं० ५। समुद्रफल नं० ७, ४८। सोआ के बीज नं० ३। हड़जोड़ी नं० २। हींग नं० ६।

अजीर्णअरण–[सं०] कचूर। कर्चूर।

अजीलाडा–[सं०] ओंगा। अपामार्ग।

अजुटा–[सं०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला।

अजेपाल–[सं०] जमालगोटा। जैपाल।

अजेय–[सं०] अर्जुन। ककुभ वृक्ष।

अजैपालयो–[सं०] जमालगोटा। जैपाल।

अजोवाँ–[हिं०] अजवायन। यवानी।

अट–[संथा०] अनंतमूल भेद।

अटकीर–[संथा०] चोबचीनी। द्वीपांतर वचा। तोपचीनी।

अटकुरा–[संथा०] कुड़ा भेद।

अटकूमाह–[अ०] ओंगा। अपामार्ग।

अटमट्टी–[म०] कचनार लाल। रक्त कांचनार वृक्ष। लाल कचनार।

अटरुष–[सं०]
अटरूष–[सं०]
अटरूषक–[सं०] } अडूसा। वासक। आटरूष। अरुस। वाकस।

अटवि–[क०] वन, कानन, जंगल।

****अटवी लता**–[सं०] कुम्हार वृक्ष। कुंभाडुया।

अटसट–[पं०] पुनर्नवा। गदहपूरना।

अटि–[सं०] शरारी। टिटिहरी पक्षी।

अटिका–[सं०] वंशपत्री। वेणुपत्री।

****अटिसार**–[सं०] परियारा पक्षी। पयरिया चिड़िया।

अटुपलइ–[ता०] भेद। पानीजमा। लैला।

अटोसंग–[संता०] बराहीकंद। गेंठी।

अट्टंडकस–[ता०] किंकिणी भेद। उलटकाँटा।

अट्टकामञ्जो–[मला०] मुंडी। मुंडितिका।

अट्टहास–[सं०]
अट्टहासक–[सं०] } कुंद। कुंदपुष्प-वृक्ष।

अट्टि–[ता०] गूलर। उदुंबर वृक्ष।

अडंग–[सं०] गेहूँ। गोधूम।

अडंबोई–[मला०] तिनिश नं० १। जरूल।

अड–[उ०] खिसोड़ा। बहुवारक। लभेरा।

अडक विदाम–[ता०] बादाम जंगली। वनबादाम। जंगली बादाम।

अड़ड–[पं०] अरहर। आढ़की। रहरी।

अड़द–[गु०] उड़द। माष। उरद।

अड़द वेल्य–[गु०] १. सेम चमरिया। दधिपुष्पी। २. मषवन। माषपर्णी।

अड़दवोल–[गु०] मषवन। माषपर्णी।

अडर–[बं०] अरहर। आढ़की। रहर।

अडवा उअड़दवेल–[गु०] मषवन। माषपर्णी।

अडवा उबोर्डी–[गु०] झाबेर। भू-बदरी।

अडवा उमगवेल्य–[गु०] बनमूँग। मुद्गपर्णी।

अडवाड–[गु०] मषवन। माषपर्णी।

अडवाड मगवेल्य–[गु०] बनमूँग। मुद्गपर्णी।

अडविअ्रति–[ता०] कठूमर। काकोदुंबरिका।

अडविश्रोल्लि–[को०] भँवरछल्ली। भ्रमरछल्ली।

अडविकोडि–[तै०] बनमुरगा। वनकुक्कुट।

अडविजिलकर्र–[तै०] काली जीरी। वनजीरक।

अडविपसुधु–[तै०]
अडविपसुपु–[तै०] } बनहलदी। वनहरिद्रा।

अडविपोटला–[तै०] परवल। पटोल।

अडविमल्लै तीगे–[तै०] अस्फोता। हापरमाली। अस्फोटा लता।

अडवी आमुदम–[तै०] दंती। दातूणी।

अडवी इप्पेचेट्टु–[ते०] महुआ। मधूक।

अडवीइरुल्लि–[क०] १. कोलकंद। चमार आलू। २. [ता०] बनप्याज। वनपलांडु। जंगली प्याज।

अडवी पजुलकुर–[ते०] बकुची नं० २। सोमराज। वापची।

अडवीनाभी–[ते०] कलिहारी। लांगली।

अडवीपच्चा–[ते०] १. इंद्रायन। विषलंभी। २. इंद्रायन जंगली। विषलोंबी।

अडवीपोटला–[ते०] परवल कडुवा। कटु पटोल। कडुवा परवल।

अडवी प्रट्टी–[ते०]
अडवी प्रत्ती–[ते०] } बनकपास। आरण्य कार्पासी।

अडवी मुलंगी–[ते०] कुकुरौंधा नं० १। कुकुरदु। कुकरोंदा।

अडवीयेलकाय–[ते०] इलायची बड़ी। स्थूलैला। बड़ी इलायची।

अडवी लवंगलता–[ते०] दालचीनी जंगली। जंगली दालचीनी।

अडसर–[ते०] अडूसा। वासक। बाकस।

अड़हर–[हिं०] अरहर। आढ़की। रहरी।

अडहु–[सं०] बड़हर। लकुच वृक्ष।

अडादोड़े–[द्रा०] अडूसा। आटरूप। बाकस।

अडिआइ–[गारो०] आमड़ा। आम्रातक।

अडिकमामिडि–[ते०] पुनर्नवा रक्त। रक्त पुनर्नवा। लाल गदहपूरना।

अडिके–[क०, ता०] सुपारी। गुवाक। पूग।

अडिविमो मामिडि–[ते०] आमड़ा। आम्रातक। अमड़ा।

अडिविषका–[म०] बनहलदी। वनहरिद्रा।

अडिवेकडेले–[क०] रुद्रवंती। रुदंती।

अडुलसा–[म०] १. अडूसा। आटरूप। २. सोनापाठा भेद। अरलू।

अडुलसो–[मु०] अडूसा। वासक।

अडुस–[हिं०]
अडुसरपु–[ते०] } अडूसा। आटरूप।

अडुसा–[हिं०] १. अडूसा। वासक। २. [म०] सोनापाठा भेद। अरलू।

अडूलसा–[म०, मु०] अडूसा। वासक, अरुस।

अडूसा–[हिं०] वासक। वाशिका। वासा। सिंहिका। सिंहास्य। वाजिदंता। आटरूष। आटरूषक। वृषनामा। सिंहपर्ण। अरुष्क। रूप। सिंहमुखी। सिंहपर्णी आदि। [हिं०] अरुश। बाकस। अरुस। अरुसा। विसोंटा। रूसा। [बं०] बाकस। वासक। [मु०] अडुलसा। अडुलसो। [मरा०] अडुलसा। [मा०] अडुसे। [द्रा०] आड़ा दोड़े। [गु०] अरडुसी। [क०] आडसोगे। आडुसोगे। [ते०] अडसर। आड़ासार। अडुसरमु। अदसर। [ता०] आधडोड़े। [पं०] बासा। [मद्रा०] अतलोटकम्। [हिमा०] भेकर। वसुती। तोरबुजा। वाशंग अरुस। [फा०] बंश। [अ०] हूकारिन् फूल। [लै०] Adhatoda Vasica. Syn: Justicia Adhatoda.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में पंजाब और आसाम से लंका और सिंगापुर तक पाया जाता है। यह क्षुप जाति की वनौषधि है। इसका क्षुप ४ से ८ फुट तक ऊँचा होता है और कहीं कहीं इससे भी बड़ा देखने में आता है। कुछ लोग कहते हैं कि यह क्षुप १० फुट से अधिक ऊँचा नहीं होता। इसके पत्ते आम के पत्तों के समान ४ से ८ इंच तक लंबे, नुकीले और कोमल होते हैं। फूल पीलापन लिए सफेद रंग के दो लाल रेखाओं से युक्त नलिकाकार और ओष्ठयुक्त होते हैं। बीजकोष पौन से एक इंच तक लंबा, आगे से आधी दूर तक एक समान मोटा और पीछे से चढ़ी-उतार कुछ चिपटा होता है। इसमें ४ बीज होते हैं जो इंच के पंचमांश हिस्से के घेरे में आते हैं।

यह सफेद और काले फूलों के भेद से दो प्रकार का होता है; पर कोई कोई ग्रंथकार सफेद और लाल फूल का अडूसा भी लिखते हैं। इनमें सफेद फूलवाला बहुत पाया जाता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—तीता, कडुवा, कसैला, शीतल, लघुग्राही, वातकारक, स्वर को उत्तम करनेवाला, हृदय को हितकारी एवं कफ, पित्त, तृष्णारोग, श्वास, काश, ज्वर, वमन, प्रमेह, कोढ़ और क्षय रोग का नाश करनेवाला है।

इसका **अर्क** ज्वर, वमन, प्रमेह, कोढ़ और क्षयरोग को हरनेवाला है।

काले फूल का अडूसा बहुत उत्कृष्ट होता है, इसलिये १० वर्ष से कम उमरवाले बालक को नहीं देना चाहिए।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—गरम और रूक्ष है। इसका फूल पहले दर्जे में ठंढा, राजयक्ष्मा और पित्त में हितकारी, रुधिर की गर्मी और मूत्र की जलन को शांत करनेवाला है। इसकी जड़ श्वास, काश, कफ-ज्वर, शुक्रमेह, पांडु, मिचली, कोढ़ और प्रमेह में लाभकारी है।

मात्रा—४ माशे।

प्रयोग—१. इसकी जड़ और पत्ते अदरक के साथ सेवन करने से सब प्रकार की खाँसी को दूर करनेवाले और राजयक्ष्मा में गुणकारी हैं। इसके ताजे रस या काढ़े में मधु या पीपल का चूर्ण मिलाकर खाँसी में देते हैं। गले के पुराने रोगों और श्वास रोग में लाभकारी है।

इसके फूल और फल कडुवे, मसालेदार और स्निग्ध होते हैं तथा प्रतिश्याय, खाँसी, श्वास, राजयक्ष्मा और गलरोग-नाशक हैं।

अजवायन जंगली नं० २

पृ० ३०]

अड़ूसा
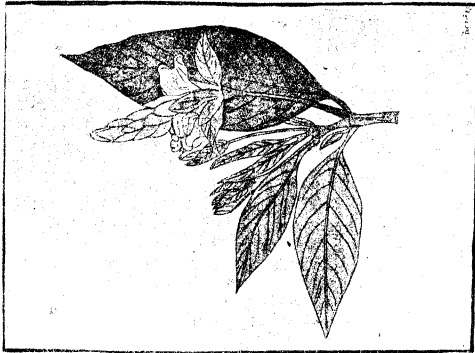
अभिष्यंद रोग (आँख दुखना) पर इसके ताजे फूल आँख पर बाँधे जाते हैं। सूखे पत्तों की बनी हुई बीड़ी अथवा सिगरेट का धूम्रपान करने से श्वास-रोग में लाभ होता है। इसका रस अतिसार और आम-रक्तातिसार में गुणकारी है। मैसूर में मलेरिया ज्वर पर इसकी जड़ के चूर्ण का प्रयोग किया जाता है।

पत्ते और जड़ को सोंठ के साथ औटाकर, स्वरस में मधु डालकर तथा पत्ते और काली मिर्च के काढ़े में मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए। इसका अवलेह बनाकर व्यवहार में लाते हैं। स्वरस में मिस्री मिलाकर देना चाहिए। अड़ूसा, मुनक्का और मिस्री का काढ़ा दिया जाता है। २. श्वास रोग में नवीन क्षुप के पंचांग को छाया में सुखाकर चूर्ण करके एक तोले की मात्रा में देना चाहिए। इसके पत्तों और पुहकर-मूल का काढ़ा भी हितकारी है। पत्ते को सुखाकर चिलम पर रखकर धूम्रपान करने से भी लाभ होता है। ३. नेत्रों की सूजन में ताजे फूलों को गरम कर आँख पर बाँधने से फायदा होता है। ४. बाइँटे में फूल और सोंठ का काढ़ा देना गुणकारी है। ५. वात रोग में जड़, पत्तों और फूलों का काढ़ा या अवलेह देना अच्छा है। ६. हाथ और पाँव की ऐंठन पर फूलों और फलों को तेल में पकाकर मालिश करनी चाहिए। ७. प्रतिश्याय में पत्तों का काढ़ा लाभदायक है। ८. गठिया में पत्तों के काढ़े का बफारा देना चाहिए। ९. रगों (स्नायु) की पीड़ा में अड़ूसे और एरंड के पत्तों को एरंड के तेल और पानी में औटाकर बफारा देने से लाभ होता है। १०. सूजन में भी प्रयोग नं० ९ गुणकारी है। ११. मौसिमी बुखार में जड़ के चूर्ण का सेवन लाभप्रद है। १२. पांडु रोग पर इसके रस में कलमी शोरा मिलाकर पिलाने से लाभ होता है। १३. जलोदर में इसका स्वरस उपकारी है। १४. ज्वर की तृषा में पत्तों का फांट अथवा पत्तों को मिस्री के साथ औटाकर पिलाना चाहिए। १५. सूजाक में पत्तों के काढ़े में ३० बूँद चंदन का तेल मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। १६. रक्तातिसार में इसके पत्तों का, धनिया और सौंफ के साथ बना हुआ काढ़ा देना चाहिए। १७. रक्तार्श में पत्तों, चंदन और हीरा-दक्खन के चूर्ण की फंकी देना अच्छा है। १८. रक्तपित्त और रक्तातिसार में पत्तों का स्वरस लाभकारी है। १९. नेत्र-पीड़ा में पत्तों को पीसकर टिकिया बनाकर आँख पर बाँधने से फायदा होता है। २०. भगंदर की सूजन में पत्तों को पीस-कर नमक मिलाकर बाँधने से लाभ होता है। २१. शरीर की दुर्गंधि मिटाने के लिए पत्तों के स्वरस में शंख का चूर्ण मिला-कर लेप करना चाहिए। २२. पामा और खुजली के लिये कोमल पत्ते और हलदी को गोमूत्र में पीसकर लेप करना उत्तम है। २३. रक्तप्रदर में पत्तों के स्वरस में मधु मिलाकर पिलाना हितकारी है। २४. श्वेत प्रदर में नीम की गिलोय और इसके पत्तों के स्वरस में मधु मिलाकर पिलाना चाहिए। २५. रक्तपित्त में इसके रस में मधु मिलाकर सेवन करना हित-कारी है। २६. रुधिर के वमन में पत्तों के स्वरस में मिस्री और मधु मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। २७. स्वर-भंग में इसके स्वरस में तालीशपत्र का चूर्ण और मधु मिला-कर सेवन करने से लाभ होता है। २८. सुगमता से बालक उत्पन्न होने के लिये गर्भवती स्त्री की नाभि, नल और योनि पर पत्तों को पीसकर लेप करना चाहिए। २९. कामला रोग पर इसके पंचांग के रस में मिस्री और मधु मिलाकर पिलाना गुणकारी है। ३०. पित्तज कास और ज्वर में पत्तों का पुट-पाक कर रस निकालकर मधु मिलाकर पिलाने से फायदा होता है। ३१. मसूड़ों की पीड़ा में पत्तों के काढ़े से कुल्ला करना चाहिए। ३२. राजयक्ष्मा में इसका यव कूटा हुआ पंचांग एक सेर ले उसको अष्ट गुण जल में चतुर्थांश काढ़ा तैयार कर उस काढ़े को मंद अग्नि पर पकावे। जब आध सेर शेष रह जाय तब उसमें आध सेर मिस्री मिला कर शहद के समान अवलेह तैयार कर सुरक्षित रख छोड़े। इसकी ३ माशे की मात्रा दिन में कई बार सेवन करने से श्वास, कास, क्षय और रक्तपित्त में लाभ होता है। ३३. रक्तपित्त पर इसकी शाखा, फूल और ढाक के काढ़े में घृत सिद्ध करके सेवन करना चाहिए। ३४. राज-यक्ष्मा, खाँसी और पांडु रोग में कूटे हुए फूल, पत्तों और जड़ के काढ़े में इसके फूलों के कल्क द्वारा यथाविधि घृत सिद्ध कर सेवन करना चाहिए। ३५. कफ-पित्तज्वर, अम्लपित्त, कामला आदि में पत्तों के स्वरस और फूल में मधु और मिस्री मिलाकर सेवन करना हितकारी है। ३६. जीर्ण ज्वर में इसके द्वारा सिद्ध किया हुआ घृत गुणकारी है। ३७. श्वेत प्रदर पर अड़ूसे का स्वरस, गिलोय का स्वरस और मधु—प्रत्येक एक एक तोला—सबको एकत्र मिलाकर पान करना चाहिए। ३८. खाँसी और श्वास पर अड़ूसे का रस आध सेर, कटेरी का रस आध सेर, मुनक्के का काढ़ा आध सेर और मिस्री आध सेर, इन सबको एकत्र मिलाकर मंद अग्नि पर अवलेह के समान चाशनी बनावे और उतारकर उसमें मुलेठी, असगंध, पीपल, भारंगी, वंसलोचन और सूखे आँवले, प्रत्येक का चूर्ण एक एक तोला तथा मधु आध सेर मिलाकर एक तोले की मात्रा में दिन में २-३ बार चाटने से श्वास, खाँसी और क्षय की खाँसी का वेग शांत होता है। ३९. मुख से रुधिर गिरने पर इसके दो तोले स्वरस में आँवले का दो तोले स्वरस मिला, किंचित् मधु डालकर सेवन करना हितकारी है। ४०. रक्त-पित्त पर पत्तों के दो तोले रस में ६ माशे मधु मिलाकर दिन में २-३ बार सेवन करने से लाभ होता है। जड़ की छाल ४ तोले, मुलेठी ३ माशे, अनंतमूल ३ माशे, दाख ३ माशे

और तेजपत्ता ३ माशे, दाख के सिवा सबको कुचलकर, दाख मिलाकर १२ तोले जल में चतुर्थांश काढ़ा बनाकर २ तोले मिस्री मिलाकर पिलाने से बहुत फायदा होता है। इसके स्वरस में पेठे के बीज पीसकर मिस्री मिलाकर पिलाने से लाभ होता है। ४१. मलेरिया पर एक सेर हरे अडूसे का तीन बोतल अर्क निकालकर ४ तोले की मात्रा में प्रातः, दोपहर और सायंकाल सेवन करना चाहिए। इसमें दूध वर्जित और हलका आहार पथ्य है। राजयक्ष्मा में भी यह लाभकारी है। इन्फ्लुएंजा में भी यह व्यवहृत होता है। छाती से रुधिर जाने में इसको पिलाने से लाभ होता है।

अडूसा काला–[हिं०] काला अडूसा। पनधारा अडुलसा। पनधारा अडूसा। [को०] काला अडुलसा। [लै०] Graptophyllum Hortense. Syn: Justicia Picta.

यह भारत और मलाया की वाटिकाओं में लगाया जाता है। इसका झाड़ बड़ा और सुहावना दिखलाई पड़ता है और बारहों मास फूलता रहता है। पत्ते समवर्ती और अनीदार होते हैं। फूल लाल रंग के, बड़े बड़े और सुहावने होते हैं।

इसी को कोई काला अडूसा और कोई लाल अडूसा मानते हैं। इसका चित्र प्राप्त नहीं हो सका।

कोंकण में अडूसे की भाँति यह औषधि के रूप में व्यवहार में आता है। इसको नारियल के दूध में पीसकर सूजन पर लगाते हैं। पत्ते कोमलताकारक और प्रमादी हैं तथा दूध की रुकावट से उत्पन्न छाती की दाह में इसकी पुल्टिस लगाना लाभकारी है।

प्रयोग—१. काला अडूसा श्रेष्ठ गुणवाला कहा गया है। ज्वर और कफ को खूबी के साथ नष्ट करता है, पेशाब लाता है तथा पुरानी खाँसी में इसका बहुत अच्छा उपयोग होता है। २. इसके ताजे पत्तों को खूब पोंछकर उन पर थोड़ा नमक छिड़ककर और उन्हें केले के पत्ते में गोलाकार लपेट और कुचलकर बिना पानी डाले स्वरस निचोड़ ले। युवा मनुष्य के लिये एक तोले रस में २॥ रत्ती छोटी पीपल का चूर्ण और कुछ मधु मिलाकर दिन में दो बार पिलाने से पुरानी खाँसी दूर होती है। इसका गुण अँगरेजी की "सिनेगा" औषधि के समान है।

अडूसो–[मा०] अडूसा। वासक। बाकस।

अडोंड–[ते०] १. किंकिणी। व्याघ्रघंटी। २. किंकिणी भेद। उलटकाँटा। हिंस।

अडुले–[ता०] दंती बड़ी नं० १। बागबरेंडा।

अड्डा–[ते०] कचनार सफेद। श्वेत कांचन।

अड्डुतिनपल्लि–[ता०] कीटमारी। कीड़ामारी।

अड्उल–[हिं०] ओड़हुल। जपापुष्प।

अड़केय सरनु–[क०]
अड़केय हेसरु–[क०] } सुपारी। पूगीफल। गुवाक। सोपारी।

अढ़हर–[हिं०] अरहर। आढ़की।

अढ़हुल–[हिं०] ओड़हुल। जपापुष्प।

अणिले–[क०]
अणिलेय–[क०] } हरीतकी। हर। हर्रे।

अणु–[सं०] चीना। चीनक।

अणुमुष्टी–[सं०] बकायन। महानिंब।

अणुरेवती–[सं०] दंती। दन्त्यूणी।

अणुव्रीहि–[सं०] चीना। चीनक।

अणुसें–[गु०] अडूसा। वासक।

अतंडे–[ता०] किंकिणीभेद। उलटकाँटा।

अतंद्रा–[सं०]
अतंद्री–[सं०] } काफी। कहवा।

अत–[संथा०] अनंतमूल भेद। तरली।

अतक पल्ली–[बं०] पाढ़र नं० २। पाडर।

अतकमह–[अ०] ओंगा। अपामार्ग।

अतडिम्मत–[सिंह०] गंभारी। गम्हार।

अतत मामिडि–[ते०] पुनर्नवा रक्त। रक्त पुनर्नवा। गदहपूरना।

अतराफ अनुबुस् अलब–[अ०] मकोय सब्ज। काकमाची शाक। हरी मकोय।

अतरुणद्वार–[सं०]
अतरुणदारक–[सं०]
अतरुणदारु–[सं०] } विधारा। वृद्धदारक। बिधायरा।

अतलसनीकली–[गु०] अतीस। अतिविषा।

अतलस्पृक्–[सं०] जल। पानी।

अतलोटकम–[मद्रा०] अडूसा। वासक।

अतवस–[गु०] अतीस। अतिविषा।

अतस–[अ०] क्षवथु। छींक।

अतसी–[सं०, ते०] तीसी। अलसी।

अता–[बं०, आसा०] शरीफा। आतृप्य।

अति–[क०] गूलर। उदुंबर।

अतिकंट–[सं०] १. गोखरू छोटा। क्षुद्र गोक्षुर। छोटा गोखरू। २. धमासा। दुरालभा। हिंगुआ।

अतिकंटक–[सं०] १. गोखरू छोटा। क्षुद्र गोक्षुर। २. धमासा। दुरालभा।

अतिकंद–[सं०]
अतिकंदक–[सं०] } हाथीकंद। पेंड़ारु। हस्तिकंद नाम महाकंद शाक।

अतिकटु–[सं०] बिंबादि द्रव्य।

अतिकम् मेदि–[ते०] पुनर्नवा श्वेत। श्वेत पुनर्नवा। सफेद साँठ।

अतिकामानूदी–[ते०] पुनर्नवा रक्त। रक्त पुनर्नवा। लाल साँठ। गदहपूरना।

अतिकुसुमा–[सं०] सौंफ। मिश्रेया।

अतिकेशर–[सं०] } कूजा । कुब्जक वृक्ष । सदागुलाब ।
अतिकेसर–[सं०] }
अतिखिरटीपाला–[पं०] कंघी । ककही । अतिबला ।
अतिगंध–[सं०] १. भूतृण । भूस्तृण । २. चंपा । चंपक पुष्प वृक्ष । ३. मोतिया । मल्लिका भेद । ४. गंधक । गंधपाषाण ।
अतिगंधक–[सं०] हस्तिकर्ण पलाश । हाथीकान पलाश ।
अतिगंधा–[सं०] } पुत्रदात्री । पुत्रदायी लता ।
अतिगंधालु–[सं०] }
अतिगंधिका–[सं०] पुत्रदात्री । पुत्रदायी ।
अतिगुहा–[सं०] १. पिठवन । पृश्निपर्णी । २. सरिवन । शालपर्णी । ३. बर्बरी । बनतुलसी । बबुई तुलसी ।
अतिचर–[सं०] }
अतिचरा–[सं०] } स्थलकमल । स्थलपद्म । बेटतामर ।
अतिचला–[सं०] }
अतिच्छत्र–[सं०] १. भूतृण । भूस्तृण । २. ताल मखाना (लाल) । रक्त कोकिलाक्ष ।
अतिच्छत्रक–[सं०] १. भूतृण । भूस्तृण । २. सतिवन । सप्तपर्ण । छतिवन ।
अतिच्छत्रा–[सं०] } १. सौंफ । मधुरिका । २. सोआ । मिश्रेया ।
अतिच्छत्रिका–[सं०] }
अतिजागर–[सं०] कौंछ । किवाँच (नीले रंग का) । कपिकच्छु ।
अतितपस्विनी–[सं०] मुंडी बड़ी । महामुंडी । गोरखमुंडी ।
अतितिप्पली–[ता०] } गजपीपल । गजपिप्पली ।
अतितिप्पिली–[मला०] }
अतितीक्ष्ण–[सं०] १. काली मिर्च । २. सहिंजन । शोभांजन । ३. अजमोदा । अजमोद ।
अतितीव्रा–[सं०] गाँडर दूब । गंडदूर्वा ।
अतितेजनी–[सं०] सरिवन । शालपर्णी ।
अतिदीप्त–[सं०] तुलसी सफेद । श्वेत सुरसा । सफेद तुलसी ।
अतिदीप्य–[सं०] } चीता लाल । रक्त चित्रक । लाल चीता ।
अतिदीप्यक–[सं०] }
अतिदुष्ट–[सं०] गोखरू । गोक्षुर ।
अतिनख नी कली–[गु०] अतीस । अतिविषा ।
अतिपत्र–[सं०] } १. हाथीकंद । पेड़ारु । हस्तिकंद नामक महाकंद शाक । २. सागोन । शाल वृक्ष । सागवान ।
अतिपत्रक–[सं०] }
अतिपत्रा–[सं०] बरियार । बला ।
अतिपत्रिका–[सं०] बिछुआ घास । वृश्चिका । बिच्छू ।
अतिपरिश्रम–[जाम०, न०] मालकंगनी । ज्योतिष्मती । मालकाँगुनी ।
अतिपिच्छ–[सं०] रताल (श्वेत) । शकरकंद । अलुआ ।
अतिपिच्छला–[सं०] घीकुँवार । घृतकुमारी । ग्वारपाठा ।
अतिबसे–[क०] अतीस । अतिविषा ।
अतिबलचेट्टु–[ता०] बरियार सफेद नं० १ । श्वेत बला ।
अतिबला–[सं०] १. कंघी । ककही । कंकतिका । २. सहदेई । महाबला ।
अतिबलिका–[सं०] } बरियार । बला । खिरैंटी ।
अतिबली–[सं०] }
अतिभारग–[सं०] खच्चर । अश्वतर ।
अतिमंगल्य–[सं०] बेल । बिल्व वृक्ष ।
अतिमंजुला–[सं०] सेवती । शतपत्री ।
अतिमंथ–[सं०] } अरनी । अग्निमंथ । गनियार ।
अतिमंथक–[सं०] }
अतिमधुर–[द्रा०] } मुलेठी । यष्टि मधु ।
अतिमधुरा–[क०] }
अतिमुक्त–[सं०] १. तिनिश । तिरिच्छ । २. तेंदू । तिंदुक । गाभ । ३. बेला । रायबेल ।
अतिमुक्तक–[सं०] १. माधवी लता । माधवी । २. तिनिश । तिरिच्छ । ३. तेंदू । तिंदुक । गाभ । ४. बेला (पुष्प वृक्ष) । रायबेल ।
अतिमुक्तका–[सं०] १. तिनिश । जारुल । २. तेंदू । तिंदुक । ३. बेला । रायबेल (पुष्प वृक्ष) ।
अतिमुक्ता–[सं०] माधवी लता । अतिमुक्तक ।
अतिमोदा–[सं०] नेवारी । नवमल्लिका ।
अतिमोदनी–[सं०] नेवारी । नवमल्लिका पुष्प वृक्ष ।
अतिमोदा–[सं०] १. नेवारी । नवमल्लिका । २. गणिकारी । मदनमादनी नामक पुष्प वृक्ष ।
अतिमोदिनी–[सं०] नेवारी । नवमल्लिका पुष्प वृक्ष ।
अतियव–[सं०] जौ बिना सूई के । निःशूक यव ।
अतिरक्त–[सं०] शिंगरफ । हिंगुल ।
अतिरक्ता–[सं०] अड़हुल । जवापुष्प वृक्ष । गुड़हल ।
अतिरस–[सं०] पुंडेरी । प्रपौंडरीक ।
अतिरसा–[सं०] १. मूर्वा । चूरनहार । मरोड़फली । २. मुलेठी । यष्टि मधु । ३. रासन । रास्ना । रायसन । ४. मूसली । तालमूली ।
अतिरुद्ध–[सं०] कँगनी, कोदों आदि धान्य ।
अतिरुहा–[सं०] मांसरोहिणी । रोहिणी ।
अतिरेचक–[सं०] काकोली । काउली ।
अतिरोग–[सं०] राजयक्ष्मा । क्षय रोग ।
अतिरोमश–[सं०] १. बकरी जंगली । वनछाग । जंगली बकरी । २. भेड़ा । मेष ।
अतिरोमशा–[सं०] वस्तांत्री । नीलबोना । नीलबुन्हा ।
अतिलंबी–[सं०] सौंफ । शताह्वा ।

अतिलोमशा-[सं०] वस्तांत्री । नीलशोना । नीलबुन्हा ।

अतिलोहित गंध-[सं०] दौना । दमनक ।

अतिवख-[गु०]
अतिवदयम-[ता०] } अतीस । अतिविषा ।

अतिवर्त्तुल-[सं०] मटर । केराव । कलाय ।

अतिवल्लभ-[सं०] मानिक । चुन्नी ।

अतिवल्लभा-[सं०] पाढ़र । पाटला ।

अतिवस-[ते०]
अतिवस चेट्टु-[ते०] } अतीस । अतिविषा ।

अतिवासा-[सं०]
अतिविश नी काली-[गु०]
अतिविष-[सं०, म०, गु०]
अतिविषा-[सं०] } अतीस । अतिविषा ।

अतिवीज-[सं०] बबूल वृक्ष ।

अतिवृहत्फल-[सं०] कटहल । पनस ।

अतिशारिवा-[सं०] अनंतमूल । शारिवा । सालसा ।

अतिशुपर्ण-[सं०] बनमूँग । मुद्गपर्णी । मुगवन ।

अतिशूक-[सं०] जौ । यव ।

अतिशूकज-[सं०] गेहूँ । गोधूम ।

अतिशोष-[सं०] राजयक्ष्मा । क्षय रोग । तपेदिक ।

अतिषजे-[क०] अतीस । अतिविषा ।

अतिसख्या-[सं०] जलमुलेठी । वल्लीयष्टि मधु ।

अतिसांद्र-[सं०] राजमाष । लोबिया । बोरो ।

अतिसाम्या-[सं०] १. मुलेठी । यष्टिमधु । २. गुंजा लाल । रक्त गुंजा । लाल गुंजा ।

अतिसार-[सं०] १. पित्तपापड़ा । पर्पट । २. अतिसार रोग । दस्त । [फा०] इसहाल । [अं०] Diarrhœa.

गरिष्ठ, अत्यंत चिकनी, अत्यंत रूखी, अत्यंत गरम, अत्यंत शीतल, अत्यंत कठिन, विरुद्ध (संयोग-विरुद्ध, देश-विरुद्ध, समय-विरुद्ध, मात्रा-विरुद्ध) पदार्थ खाने से, भोजन कर चुकने पर फिर भोजन करने से, अजीर्ण से, विषम भोजन (कभी कम, कभी अधिक) करने से तथा स्नेह, स्वेद, वमन, विरेचनादि के अतियोग से, विष-भक्षण करने से, भय या शोक करने से, दूषित जल पीने से, अतिशय मद्यपान या अतिशय जलक्रीड़ा करने से, मल, मूत्रादि का वेग रोकने से एवं कृमिदोष आदि कारणों से शरीर में धातु (रस, जल, मूत्र, स्वेद, मेद, कफ, पित्त रक्तादि जलरूप धातु) अत्यंत बढ़कर अग्नि को मंद कर देती हैं। वही जल-रूप धातु जल में मिलकर वायु से प्रेरित होकर गुदा के मार्ग से बार बार नीचे को अधिकतर निकलती है। इसी को "अतिसार रोग" कहते हैं।

वातज, पित्तज, कफज, सान्निपातज, शोकज और आमज इन भेदों से यह छः प्रकार का होता है।

इसके उत्पन्न होने के पहले हृदय, नाभि, गुदा, पेट और कोख में सूई चुभने की सी पीड़ा होती है, हड्डियों और जोड़ों में दर्द होता है, अधोवायु और मल का अवरोध होता है, पेट फूलता है और अन्न नहीं पचता।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अखरोट नं० १६। अगर नं० २। अगस्त नं० २। अजवायन नं० १०। अतीस नं० ७। अत्यम्लपर्णी नं० ५। अनंतमूल सफेद नं० ११। अनार का छिलका नं० १। अफीम नं० १६, १७, २१। अबरक नं० १२। अमरूद नं० २। आँबा हलदी नं० ९। अरनी छोटी नं० ४। आक लाल नं० ३५। आल्छुक नं० ८। आम नं० १२, १५, १९, २४, २६, ३०, ३५, ३६। आँवला नं० ५४। इंद्रजव नं० ७। इमली नं० २३। इलायची बड़ी नं० ६। ईशबगोल नं० ४, २४। एकबीर नं० ३। कँगनी नं० ६। कंघी नं० ६। कचनार लाल नं० १३। कटभी नं० २। कटहल नं० ३। कपास नं० २, १४, २१। कपास के बीज नं० ४। कमरकस नं० १। कमल के पत्ते नं० ३। करंज नं० २१। करौंदा नं० ४। कलपनाथ। कांडोल नं० २। काकड़ासिंगी नं० २। कायफल नं० ७, १६। कुकरौंधा नं० २३। कुचला नं० १३, १६। कुलथी नं० ८। कुड़ा नं० २, ३, ४, ६। केला नं० ११, १३। कैथ नं० १६, १८, २०। कोयला नं० ६। खैरसार नं० १९, ३१। चव्य नं० ४। गाँजा नं० २। गुलाब का अर्क नं० ६। गूलर नं० ३, १२, २६। गोरख पान नं० ५। गोरखी नं० २, १२। गोराणी नं० २। चंपा नं० १५। चनसुर नं० ५, १०, १४। चनाखार नं० ३। चंदन नं० २३। चिरायता नं० ९। चेर नं० १। चालमोगरा नं० १३। जयंती नं० ३। जामुन नं० ९, २०, २२, २५, २८। जायफल नं० ४, ९, १०, १३, १६, २७। जायफल जंगली नं० २। जावित्री नं० २। जीरा सफेद नं० १८। झाऊ नं० २। ढाक नं० ६। ढाक के पत्ते नं० ४। ढाक के बीज नं० ६। ढेरा नं० १९। नरवड नं० ४। ताल मखाना नं० ४। तालीशपत्र नं० ५, १५। तिनिश नं० १। तीसी नं० ८। तुंबरु नं० ३। तूतिया नं० ५। तेंदू नं० ४, ६। थूहर नं० १४। दंती बड़ी नं० १०। दही नं० ३। दारु हलदी नं० ६। दालचीनी नं० १०। दुर्गंध खैर नं० २। दुद्धी नं० ३। धनियाँ नं० ३, २१। धतकी नं० ३। धान नं० ६, १९। धौ नं० ३। नागरमोथा नं० २। नारंगी नं० ६। नारियल नं० ८। नारियल का तेल नं० ५। नाही नं० ७। निर्मली नं० ५। नीम नं० ४२। पतंग नं० ५। पपीता नं० १०। परवल कडुवा नं० २०। पाठा नं० १२। पाताल गारुड़ी नं० ११। पानी आँवला नं० २। पारा नं० १३, २५। पिंड खजूर नं० ८। पुदीना नं० ३। पेऊ नं० ५। पोस्त नं० ५। प्याज

अतीस

अत्यम्लपर्णी
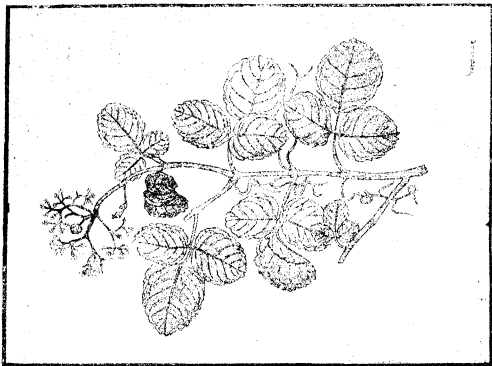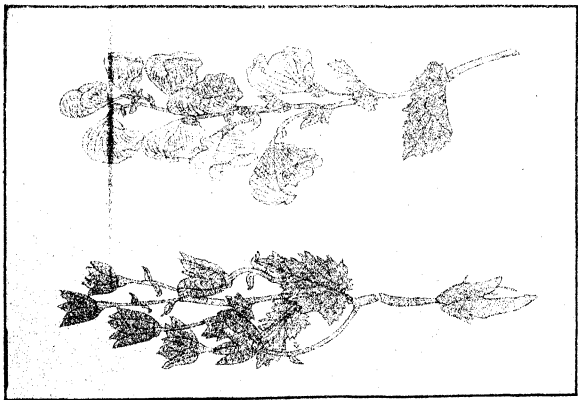
नं० ४७। फिटकिरी नं० १३। बकायन नं० ६। बड़ नं० २३, ३६। बबूल नं० ३, ११, २१, ४१, ४२। बबूल का गोंद नं० ४, ६। बरियारा नं० ४, १३। बरियारे के बीज नं० ४। बर्बरी नं० ४, १३। बहेड़ा नं० १०। बाँस नं० ३। बिजैसार नं० ७। बिहीदाना नं० ५। बेर नं० ७, ११, १६, २३, २६। बेल नं० १०, ११, १४, १५, १६, २०, ३३। बेलगिरी नं० ४, ५, ६, ७, १२। भाँग नं० ४। भिंडी नं० ७। भुइँकदंब नं० ७। मखाना नं० ३। मांसरोहिणी नं० २। मुंडी नं० ५२। मूँग नं० ६। मैनफल नं० १२, १४। मोचरस नं० ५। मोथा नं० ११। मोरशिखा नं० २। रंगलता नं० ६। रीठा नं० ८। लिसोड़ा नं० १७। लोणा बड़ी नं० ८। वत्सनाभ विष नं० १४। विषांबिल नं० ३, ५। शमी नं० ३, ५। शाल बड़ा नं० ५। शिंगरफ नं० ६। शीतलचीनी नं० १०। सतिवन नं० ३। सत्यानाशी की जड़ नं० ५। समुद्रफल नं० १, १०। सरफोंका नं० ५, १३। सरहटी नं० ५। सातला नं० ६। सिंघाड़ा नं० १। सिरस के बीज नं० ३। सुपारी नं० ५। सेमल सफेद नं० २, ५। सेव नं० ४। सोनापाठा नं० २, ३। सोनापाठा भेद नं० ८। सोनामक्खी नं० ६। सौंफ नं० २। हड़जोड़ी नं० ४। हरताल नं० २२। हरीतकी नं० ७, ३५। हुलहुल नं० ६।

अतिसारकी–[सं०] अतिसार-रोगिणी।

अतिसारघ्न–[सं०] पित्तपापड़ा। पर्पट।

अतिसारघ्नी–[सं०] अतीस। अतिविषा।

अतिसारभेषज–[सं०] लोध। लोध्र।

अतिसारभे–[सं०] आम। आम्र वृक्ष।

अतिसारस्या–[सं०] रासन। रास्ना।

अतिसौम्या–[सं०] जलमुलेठी। वल्लियष्टिमधु।

अतिसौरभ–[सं०] आम। आम्र।

अतिस्कंधा–[सं०] कुलथी। कुलत्थ।

अतिस्रवा–[सं०] मयूरवल्ली। [बं०] मुग्वा।

अतीस–[हिं०, सं०] अतिविषा। विषा। प्रतिविषा। शृंगी। विश्वा। अरुणा। शुक्लकंदा। उपविषा। भंगुरा। घुणवल्लभा आदि। [बं०] आतइच। [मरा०] अतिविष। [मा०] अतीस। पतीस। [पं०] अतीस। पतिस। सखीहरी। सुखीहरी। चितिजरी। पत्रिस। बोंगा। [तै०] अतिवस। [ता०] अतिवदयम। [द्रा०] अतिविष। [कं०] अतिखजे। [फ़ा०] मोहंद-इ-गज सफेद। हेंग-इ-सफेद। [मि०] अइस। आइस। [गु०] अतिविश नी काली। अतिविष। अतिवख। [लै०] Aconitum Heterophyllum. Syn: Aconitum bordatum.

अतीस क्षुप जाति की वनौषधि है और सिंध से कुमाऊँ और हिसारा तक, शिमला और इसके आसपास में, चंबा प्रांत एवं हिमालय पहाड़ में ६००० फुट से १५००० फुट तक, नीची-ऊँची चोटियों पर अधिकता से पाई जाती है तथा केदारनाथ के पहाड़ पर और हिंदुस्तान के पहाड़ी प्रांतों में भी देखने में आती है।

इसका क्षुप ३ फुट तक ऊँचा होता है। डंडी सीधी और पत्तों से घिरी हुई होती है और डंडी की जड़ से शाखाएँ निकलती हैं। पत्ते २ से ४ इंच तक चौड़े, कुछ मोटे, चमकीले, ऊपर से हरे और नीचे से पीले तथा नोकदार होते हैं। फूल १-१॥ इंच लंबे, चमकीले, हरापन लिए नीले, पीले, बैंगनी धारीवाले और सघन लगते हैं। बीज चिकने छिलकेवाले और नोकदार होते हैं।

इस पौधे की जड़ को अतीस कहते हैं। यह प्रायः छोटी उँगली के समान या आध इंच मोटी, किंचित् गावदुम, हाथी की सूँड़ के आकारवाली, ऊपर को मोटी और नीचे की ओर पतली होती हुई जमीन के अंदर घुसी रहती है। यह १ से १॥ इंच तक या इससे भी अधिक २ इंच तक लंबी होती है। यह जड़ ऊपर से हलकी खाकी या किंचित् बादामी रंग की, और तोड़ने पर अंदर से दूधिया सफेद दिखाई पड़ती है। इसका स्वाद कड़वा और कसैला होता है।

यह काले और सफेद रंगों के भेद से दो प्रकार की होती है; किंतु, कोई कोई आचार्य्य लाल रंग की अतीस भी मानते हैं। सफेद अतीस को संस्कृत में अतिविषा, शुक्लकंद, विष और प्रतिविष तथा काली को श्यामकंद, सितशृंगी, भंगुरा और उपविषाविका कहते हैं। इसकी जड़ ही औषधप्रयोग में आती है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—गरम, चरपरी, कड़वी, पाचक, जठराग्नि-प्रदीपक तथा जीर्ण ज्वर, कफ, पित्त, अतिसार, आमदोष, विष, खाँसी, वमन और कृमिरोग को दूर करनेवाली एवं विषम ज्वर में गुणकारी है।

उपर्युक्त तीनों प्रकार की अतीस रस, वीर्य्य और विपाक में बराबर है; परंतु गुणों में सफेद उत्तम है।

इसका **अर्क** जठराग्नि का प्रदीपक तथा कफ, पित्त और अतिसार का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, पाचक, अतिसारवर्द्धक, कफ और वातनाशक, ओज को बढ़ानेवाली तथा अर्श और जलोदर में गुणकारी है। मात्रा ६ रत्ती से १॥ माशे तक।

प्रयोग—१. ज्वर, मंदाग्नि, अतिसार, खाँसी आदि पर लाभकारी है। बालकों के ज्वर में दी जाती है। प्रत्येक जड़ तोड़कर देख लेनी चाहिए। यदि वह भीतर से सफेद न निकले या स्वाद में कुछ अंतर हो अथवा चबाने से जीभ में सुन्नपन या खुजली मालूम हो तो उसे काम में नहीं लाना चाहिए।

सामयिक ज्वर को रोकने के लिये यह अच्छी ओषधि है। जब ज्वर न चढ़ा हो तब अथवा ज्वर आने के पूर्व ही तीन तीन या चार चार घंटे पर २० से ३० ग्रेन की मात्रा में देनी चाहिए; और ज्वर के बाद की निर्बलता अथवा और किसी रोग के कारण उत्पन्न हुई निर्बलता पर ५ ग्रेन से १० ग्रेन की मात्रा में देने से बहुत लाभ होता है। २. ज्वर रोग में इसके चूर्ण की फंकी ३–४ बार २–४ घंटे के अंतर पर सेवन करने से पसीना आकर ज्वर उतर जाता है। ५ रत्ती चूर्ण और १॥ रत्ती कसीस दोनों को मिलाकर देने से लाभ होता है। ३. विषम ज्वर, जूड़ी बुखार और पारी के बुखार आदि में इसके चूर्ण में छोटी इलायची और वंशलोचन का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। एक माशे चूर्ण में आधी रत्ती कुनैन मिलाकर ज्वर के पूर्व २–३ मात्रा देने से फायदा होता है। एक तोले चूर्ण में १॥ रत्ती शुद्ध संखिया मिलाकर २ रत्ती की मात्रा से ज्वर के पूर्व २-३ बार सेवन करने से भी लाभ होता है। ४. मलेरिया ज्वर में इसका चूर्ण ५ रत्ती की मात्रा में देने से फायदा होता है। ५. ज्वर की निर्बलता पर इसको सोंठ और लौह-भस्म के साथ देना चाहिए। ६. निर्बलता में शक्कर और दूध के साथ इसका सेवन करना अच्छा है। ७. अतिसार और आमातिसार में २ माशे चूर्ण की फंकी देकर आठ पहर भींगी हुई २ माशे सोंठ को पीसकर पिलाना चाहिए। २ माशे चूर्ण हरें के मुरब्बे के साथ सेवन करने से उक्त रोग का नाश होता है। इसका और कुड़े का चूर्ण मधु के साथ सेवन करने से भी फायदा होता है। चूर्ण को पानी में पीसकर देने से लाभ होता है। ८. रक्तपित्त में इसका और कुड़े का चूर्ण मधु के साथ सेवन करना हितकारी है। ९. इसके चूर्ण में वायबिड़ंग का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से कृमिरोग का नाश होता है। १०. खाँसी में इसको मधु के साथ सेवन करना गुणकारी है। ११. श्वास में इसका और पुहकरमूल का चूर्ण मधु के साथ सेवन करना चाहिए। १२. अग्निमांद्य में और पाचन शक्ति की वृद्धि के लिये इसको सोंठ या पीपल के साथ मधु में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। १३. चर्मरोग और फोड़े-फुंसियों पर चिरायते के अर्क के साथ इसका सेवन करना हितकारी है। १४. वमन में नागकेसर के साथ सेवन करना चाहिए।

अतीसार–[सं०] अतिसार रोग।

अतुतिनाप्पाल–[मला०] कीटमारी। कीड़ामारी।

अतुल–[सं०] १. तिलक। तिलपुष्पी। २. कफ। श्लेष्मा। बलगम।

अतौआ–[हिं०] आक। अर्क वृक्ष।

अत्कम–[अ०]
अत्कुमाह–[अ०] } ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा। लटजीरा।

अत्ति–[क०, म०] गूलर। उदुंबर।

अत्ती–[ता०, तै०] गूलर। उदुंबर।

अत्यंतपद्मा–[सं०] कमलिनी। पद्मिनी। कमल का पंचांग।

अत्यंत सुकुमार–[सं०] कँगनी। कङ्गुधान्य। कौनी।

अत्यम्ल–[सं०] १. विषांबिल। वृक्षाम्ल। गहादा। २. इमली। तिंतड़ी। ३. बिजौरा नींबू। बीजपूर। ४. बिजौरा नींबू जंगली। वन बीजपूर। जंगली बिजौरा। ५. अत्यंत खट्टा रस। अत्यंताम्लरसयुक्त।

अत्यम्लपर्णी–[सं०] १. अत्यम्लपर्णी। तीक्ष्णा। कंडूरा। वल्लिसूरणा। करवड वल्ली। वनस्था। अरण्यवासिनी। [हिं०] रामचना। खट्टुआ। अमलबेल। अम्लवेल। अमर्ती। इमिर्ती। गिदाड़दाक। करसर। [बं०] कडवड वेलि। अंदल। तुंदल। अमललता। सोनकेसुर। [मरा०] आंबटबेल। कडमड वल्लि। आंधी। अंबट बेल। [मा०] रामचिणा। [तै०] मंडलमारी। कुरुदिन्ने। काडेय तिगे। कनपटिगे। मंडुलमारी तिगे। मेकमेत्तनिचेट्टु। खाट खट्टुब वेल्य। [क०] हेग्गोलि। [पहा०] जारिललरा। [लि०] तकब्लिरिक। [आसा०] मैमटी। [प०] कारिक। आमलवेल। गिदरदाक। द्रिकी। वल्लुर। [गु०] खाट खटंबो। तामान्य। [सिंह०] बलरत्त दियलबु। [लै०] Vitis Trifolia. Syn: Vitis Carnosa. Vitis Pentaphylla.

यह लता जाति की वनौषधि है जो प्रायः सभी प्रांतों में और विशेष कर उष्ण प्रदेशों में हिमालय पहाड़ तक तथा सीलोन के जंगलों तथा झाड़ियों के वृक्षों आदि पर अधिकता से पाई जाती है। वर्षा ऋतु में इसकी हरी-भरी बेल जंगलों, झाड़ियों तथा थूहर के वृक्षों पर खूब फैली हुई देखने में आती है। डाक्टरों ने इसकी गणना अंगूर वर्ग में की है। इसका डंठल पतला, अनेक शाखा-प्रशाखाओं से युक्त और त्रिकोणाकार होता है। पत्ते की डंडी की दूसरी ओर अनियमित तागे के समान बाल होते हैं, जो झाड़ी आदि से लिपट जाया करते हैं। प्रत्येक सींके पर तीन तीन पत्ते लगते हैं जिनमें से बीच का पत्ता बड़ा होता है। पत्ते डंडी की ओर से गोलाकार होकर बीच के भाग में अनीदार होते हैं। फूल किंचित् हरापन लिए सफेद रंग के झुमकों में आते हैं और फल भी झुमकों ही में मटर के समान गोल होते हैं और कच्चे रहने की दशा में हरे, और पकने पर नीले रंग के तीन-चार बीजवाले और रस से भरे हुए होते हैं। बीज त्रिकोणाकार और नुकीले होते हैं।

इस लता के नीचे लगभग ६ इंच का एक कंद बैठता है। इस कंद से तंतु निकलकर जमीन के अंदर अंदर फैलता है और एक दो हाथ की दूरी पर वैसे ही एक एक कंद बैठता है। इस प्रकार जगह जगह आठ दस कंद होते हैं।

अदरक (पत्तियाँ)

पृ० २६]

अदरक (जड़)
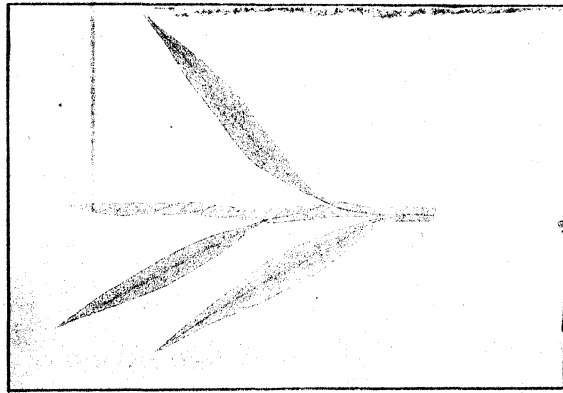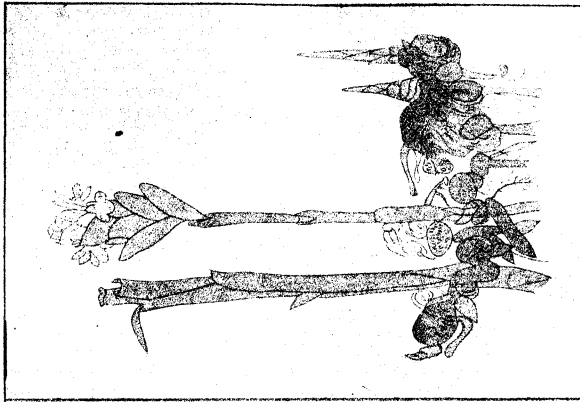
गुण-दोष—तीक्ष्ण, खट्टी, अग्नि-प्रदीपक, रुचिकारी तथा वात, प्लीहा, गुल्म, क्षय रोग और कफ को हरनेवाली है।

प्रयोग—१. इसकी जड़ और बीज औषध-प्रयोग में आते हैं। इसकी जड़ को कामराज कहते हैं, जिसका लोशन बनाया जाता है। हल की रगड़ से बैलों के कंधों पर जो घाव होते हैं, उन पर पत्तों की पुल्टिस लगाई जाती है। इसकी जड़ काली मिर्च के साथ पीसकर फोड़े पर लगाने से लाभ होता है। २. बिच्छू के काटे हुए स्थान पर इसका कंद घिसकर लगाने से लाभ होता है। ३. सूजन और फोड़े पर कंद की पुल्टिस बाँधनी चाहिए। ४. फुंसियों पर पत्तों को काली मिर्च के साथ पीसकर लगाने से फायदा होता है। ५. अतिसार में फलों की तरकारी खाना लाभकारी है। ६. हल की रगड़ से बैलों की गर्दन में घाव उत्पन्न होने पर पत्तों की पुल्टिस बाँधनी चाहिए।

२. अमलोनी। चांगेरी। अम्ललोणा।

अत्यम्ला–[सं०] १. बिजौरा नींबू। मातुलुंग वृक्ष। २. बिजौरा नींबू जंगली। वन-बीजपूर। जंगली बिजौरा। ३. इमली। तिंतड़ी वृक्ष।

अत्यर्क–[सं०] आक सफेद। श्वेतार्क। मदार।

अत्यानंदा–[सं०] योनिरोग विशेष।

अत्यारक्ता–[सं०] अड़हुल। जपापुष्प।

अत्याल–[सं०] चीता लाल। रक्त चित्रक।

अत्युग्र–[सं०] हींग। हिंगु।

अत्युग्रगंधा–[सं०] १. मूर्वा काली। कृष्ण गोकर्णी। काली मरोड़फली। २. अपराजिता नीली। कृष्णापराजिता। नीले फूल की अपराजिता। ३. अजमोदा। अजमोद।

अत्यूह–[सं०] १. मोर। कालकंठ पक्षी। २. तोता। ३. दात्यूह पक्षी।

अत्यूहा–[सं०] १. नील। नीलिका। २. निर्गुंडी। शेफालिका। नीले फूल की मेवड़ी।

अत्यः–[सं०] घोड़ा। अश्व।

अत्रपल–[मला०] वेद। लैला। पानीजमा।

अत्रिलाल–[पं०] काकजंघा नं० १। मसी।

अत्रुशबुखुमरम–[जैन०] झाऊ नं० १। झावुक। झउआ।

अत्रेलाल–[पं०] काकजंघा। मसी।

अदंश–[सं०] मूली बड़ी। महामूलक।

अद–[पं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

अदक–[ते०] कुंदुरु। गुंद बरोसा।

अदकर–[पं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

अदज–[अ०] मुर्गाबी। जलकुक्कुट।

अदमरम–[मला०] बादाम देशी। देशी बादाम। वाताद भेद।

अदरक–[हिं०] अदरख। आदी। [सं०] आर्द्रक। शृंगवेर। कटुभद्र। आर्द्रिका इत्यादि। [बँ०] आदा। [मरा०] आले। [गु०] आदु। [क०] अल्ल। हसि शोंठि। [खा०] हसी सुंठी। [मा०] आदो। [पं०] अदकर। अद। अद्रक। आद्रा। [ते०] अल्ल। अल्लम। [ता०] इंजी। [द्रा०] इंजि। [मला०] इंची। [बर०] ख्येनसेंग। गिनसिन। [सिंह०] अमु इंगुरू। [फा०] जग विलतर। जंजबील रतब। जजबीलं रतब। [लै०] Zingiber Officinale. [अं०] Ginger.

भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में अदरक की खेती की जाती है। इसका गुल्म प्रायः एक हाथ ऊँचा होता है। इसके पत्ते बाँस के पत्तों के समान परंतु उनसे कुछ छोटे होते हैं। इसकी जड़ में जो कंद होता है, उसी को अदरक कहते हैं। यह रेतीली भूमि में, गोबर की खाद डाली हुई दुमट मिट्टी में अथवा परती जमीन में अधिक उत्पन्न होता है। बैसाख के महीने में अदरक से आँख-वाले छोटे छोटे अंशों को तोड़कर भली भाँति जोते हुए खेत की क्यारियों में डेढ़ डेढ़ फुट के अंतर पर रोपकर, उनके ऊपर पत्ते आदि फैलाकर, उचित समय पर सींचा करते हैं और कातिक, अगहन में खोदकर निकालते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—भेदक, भारी, तेज, गरम, अग्नि-प्रदीपक, चरपरा, पाक में मधुर, रूखा तथा वात और कफ-नाशक, मंदाग्नि, गले, मस्तक, छाती के रोग, अर्श, उदर्द, गठिया और जलोदर आदि अनेक रोगों में हितकर है। जो गुण सोंठ में हैं, वे ही अदरक में भी हैं। भोजन के पहले सेंधा नमक के साथ अदरक खाने से अग्नि तेज होती है, रुचि बढ़ती है तथा जीभ और कंठ शुद्ध होते हैं।

कोढ़, पांडु, रक्तपित्त, सूजाक, घाव, ज्वर और दाह के रोगी को तथा गरमी और शरद् ऋतु में अदरक खाना वर्जित है।

काँजी और सेंधा नमक के साथ यह पाचक, अग्निप्रदीपक, तथा मलबंध और आमवात का नाशक है। जँबीरी नींबू और सेंधा नमक के साथ मुख को शुद्ध करता है तथा ग्रीष्म-ऋतु में सूजाक, पांडु रोग, रक्तपित्त, व्रण, मूत्ररोग, पथरी, ज्वर, दाह और पित्त को शांत करता है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—तीसरे दर्जे में गरम और पहले में रूक्ष, पाचक, आध्मान और वायु का नाशक, क्षुधा-वर्द्धक, पक्वाशय के कफ और स्निग्धता का नाश करनेवाला, पक्वाशय और यकृत तथा पाचन-शक्ति को बलप्रद है। इसका मुरब्बा कफज होता है तथा शीत प्रकृतिवाले को अत्यंत गुण-कारी है। उष्ण प्रकृतिवालों को यह हानिकारक है।

दर्पनाशक—बादाम रोगन, कपूर और मधु।

प्रतिनिधि—सोंठ और काली मिर्च।

मात्रा—दो माशे से १ तोले तक।

प्रयोग—१. सूखे अदरक को सोंठ कहते हैं। अदरक यूनानी, आयुर्वेदीय और डाक्टरी तीनों प्रकार की चिकित्सा में व्यवहृत होता है। इसका सेवन करने से मंदाग्नि, अरुचि,

कफ, खाँसी, श्वास, हृदय रोग, बवासीर, उदरशूल और वात-विबंधादि अनेक रोग दूर होते हैं। भोजन करने के पहले इसको सेंधा नमक के साथ खाना हितकारी है। यह अरुचि और मुख की विरसता को दूर करता है और जिह्वा तथा कंठ को शुद्ध करता है। इसका रस अनेक औषधों के साथ विविध रोगों में अनुपान रूप से व्यवहार में आता है। इसका मुरब्बा और हलुआ आदि बनता है और वह गुणों में अदरक के समान होता है। २. इसके रस में मधु मिलाकर सेवन करने से कफ और खाँसी, श्वास, हृदय रोग आदि नष्ट होते हैं। ३. इसके रस को कुछ गरम कर उसमें मिस्री मिलाकर सेवन करने से प्रतिश्याय दूर होता है। ४. अदरक को घी में भूनकर किंचित् नमक मिलाकर खाने से वायु का विबंध और अफरा नष्ट होता है। ५. इसको जँबीरी नींबू के रस में डालकर नमक मिलाकर खाने से अजीर्ण और अरुचि दूर होती है। ६. इसको चाय के समान पानी में पकाकर पान करने से सरदी, खाँसी, प्रतिश्याय आदि का नाश होता है तथा हृदय में बल की वृद्धि होती है। ७. इसके रस में पुराना गुड़ मिलाकर सेवन करने से सर्वांग शोथ का नाश होता है। ८. इसके टुकड़े डाढ़ के नीचे दबाने से डाढ़ की पीड़ा शांत होती है। ९. कर्णशूल पर इसका रस गरम करके कान में डालना चाहिए। १०. वात और कफ-संबंधी नेत्र-पीड़ा पर इसके रस की २-३ बूँदें आँखों में डालना हितकारी है। ११. कामला पर इसके रस में त्रिफला की भावना देकर सेवन करना गुणकारी है। १२. उदर की पीड़ा पर अजवायन में इसके रस की भावना देकर उसे सुखाकर गरम जल के साथ सेवन करना चाहिए। १३. संधिवात की पीड़ा पर इसके रस के साथ तिल के तेल को सिद्ध कर मालिश करने से लाभ होता है। १४. अरुचि में भोजन के पहले इसको सेंधा नमक के साथ खाना हितकारी है। १५. शिरपीड़ा में इसका रस और दूध एक में मिलाकर सूँघने से लाभ होता है। १६. मंदाग्नि, प्रतिश्याय और खाँसी में इसके रस में मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए। सरदी और खाँसी में इसके रस में शक्कर मिलाकर गरम कर के पिलाना हितकारी है। १७. पित्तज मंदाग्नि में इसके रस में नींबू का रस मिलाकर पान करने से फायदा होता है। १८. वमन में इसका रस, तुलसी का रस, मधु और मोरपंख की चंद्रिका की भस्म सबको एक में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। १९. नेत्रपीड़ा में २-३ बूँद रस आँख में टपकाना चाहिए। २०. ज्वर में होनेवाली मूर्च्छा में इसके रस की नास देना गुणकारी है। २१. सिंदूर के उपद्रव में इसको मुख में रखना, रोटी के साथ खाना अथवा नमक के साथ खाना चाहिए। २२. सर्दी की दंत-पीड़ा में इसके टुकड़े को नमक में लपेटकर दाँतों के बीच में दबाने से लाभ होता है। २३. वातज अंड-वृद्धि में इसका रस मधु के साथ पीना चाहिए। २४. कामला रोग में अदरक, त्रिफला और गुड़ का सेवन करना लाभदायक है। २५. कास, श्वास, प्रतिश्याय और कफ में इसका रस मधु मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। २६. वातज पीड़ा में इसके रस में अजवायन पीसकर मलना चाहिए। २७. सर्वांग शोथ पर इसके स्वरस में पुराना गुड़ मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। किंतु पथ्य केवल बकरी का दूध होना चाहिए। २८. कर्णशूल में इसके रस को गुनगुना करके कान में डालने से पीड़ा शांत होती है; अथवा इसका रस, मधु, सेंधा नमक और तेल गरम करके कान में डालना चाहिए। २९. जोड़ों की वातज पीड़ा में इसके एक सेर स्वरस में आध सेर तिल का तेल सिद्ध करके मालिश करने से फायदा होता है।

अदरख–[हिं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

अदल–[सं०] १. समुद्रफल। हिज्जल। २. घृत। घी।

अदला–[सं०] घीकुँवार। घृतकुमारी।

अदस–[अ०] मसूर। मसुरी।

अदसर–[ते०] अड़ूसा। आटरूष।

अदारिका–[सं०] ऋतुमती। उलटकंबल।

अदित्यलु–[ते०] चनसुर। चंद्रशूर।

अदित्यालु–[ते०] चनसुर। चंद्रशूर।

अदिविमुल्ली–[ते०] नेवारी। नवमल्लिका।

अदीठ–[हिं०] अर्बुद। रिसौली।

अदुमट्टड–[खा०, क०] आंतमूल। आंतामूल।

अदेविमल्लो–[ते०] आस्फोता। हापरमाली। आस्फोता लता।

अदोमा–[गाभ्रा०] खिरनी। खीरी। क्षीरिणी।

अद्भुतसार–[सं०] खैरसार। खदिरसार।

अद्रक–[सं०] १. बकायन। महानिंब। २. अदरक। आर्द्रक। आदी। [पं०] अदरक। आदी।

अद्रका–[सं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

अद्रिकर्णी–[सं०] अपराजिता। कोयल।

अद्रिका–[सं०] १. बकायन। महानिंब। २. धनिया। धान्यक।

अद्रिज–[सं०] १. तुंबरु। तुंबुरु। २. गेरू। गैरिक। गेरमाटी। ३. शिलाजीत।

अद्रिजतु–[सं०] शिलाजीत। शिलाजतु।

अद्रिजा–[सं०] सिंहली पीपल। सैंहली पिप्पली।

अद्रितरु–[सं०] शिलाजीत। शिलाजतु।

अद्रिभू–[सं०] मूसाकानी। आखुकर्णी लता। मूसाकनी।

अद्रिमाषा–[सं०] मषवन। माषपर्णी।

अद्रिसानुजा–[सं०] त्रायमान। त्रायमाणा लता।

अद्रिसार–[सं०] १. लोहा। लौह। २. ताँबा। ताम्र धातु।

अद्रेष्क–[सं०], **अद्रेष्का**–[सं०] } बकायन। महानिंब वृक्ष।

अनन्तमूल काली

अनन्तमूल भेद

अधकपारी–[हिं०] सूर्य्यावर्त्त रोग। आधाशीशी। अर्धावभेदक।

अधडोडे–[ता०] अडूसा। वासक।

अधःपुट–[सं०] चिरौंजी। पयाल।

अधःपुष्पी–[सं०] १. अंधाहुली। अंधपुष्पी। २. गोभी। गोजिह्वा।

अधःशल्य–[सं०]
अधःशाल्य–[सं०]
अधःशेखर–[सं०] } ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा। लटजीरा। ओंगा सफेद। श्वेतापामार्ग।

अधम–[सं०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अधर–[सं०] १. होंठ। ओष्ठ। २. स्त्रीयोनि। भग।

अधरकंटक–[सं०] धमासा। दुरालभा। हिंगुआ।

अधरकंटिका–[सं०] सतावर। शतावरी।

अधविरनी–[बँ०] ब्राह्मी।

अधविर्णी–[बँ०] मंडुकपानी। मंडूकपर्णी। ब्रह्म-मंडूकी।

अधसरित की जरी–[पं०] हंसराज नं० ३। मयूरशिखा। परस्यांवशा।

अधामार्ग–[सं०]
अधामार्गव–[सं०] } ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

अधिकं–[सं०] रोहिस घास। कतृण।

अधिकंटक–[सं०] धमासा। दुरालभा।

अधिक्किका–[सं०] सीप। मुक्तागृह।

अधिजिह्व–[सं०] मुखरोग-विशेष। रक्त मिले हुए कफ से जीभ की नोक के समान जो शोथ जीभ के ऊपर उत्पन्न होता है, उसको अधिजिह्व कहते हैं। पकने पर यह असाध्य कहा गया है।

अधिमंथ–[सं०] नेत्ररोग-विशेष। इसमें आँख और आधा सिर बहुत ही फटा सा जाता है अथवा उसमें मथने की सी पीड़ा होती है। व्याधि के प्रभाव से इस रोग में आधे सिर में पीड़ा होती है; इसलिये इसे अधिमंथ कहते हैं। इसके लक्षण वातज अभिष्यंद के समान होते हैं।

अधिमांसक–[सं०] दंतरोग-विशेष।

अधिमुक्तक–[सं०] माधवी लता। अतिमुक्त।

अधोघंटा–[सं०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

अधोमुख पाताल यन्त्र–[सं०] यंत्र-विशेष। कपड़-मिट्टी की हुई आतशी शीशी में द्रव्य भरकर उसका मुख सींकों से बंद कर दे जिसमें उन सींकों के द्वारा पिघला हुआ तेल इत्यादि नीचे को गिरे और एक नांद में छेद करके उसी छेद की राह से शीशी की नली को निकाले। फिर उस नांद सहित शीशी को चूल्हे पर इस प्रकार रखे जिसमें शीशी की नली उस चूल्हे के भीतर लटकती रहे और नांद सहित शीशी चूल्हे पर रहे। शीशी की नली के नीचे कोई पात्र रख दे और शीशी के ऊपर नांद में कंडों की अग्नि दे। इस प्रकार करने से तेल इत्यादि नली की राह से नीचे के पात्र में गिरता है।

अधोमुखा–[सं०] १. गोभी। गोजिह्वा। गोजिया। २. अंधाहुली। अधःपुष्पी।

अधोवायु–[सं०] अपान वायु। पाद।

अधोरेचन–[सं०] अमलतास। आरग्वध।

अध्यंडा–[सं०] १. कौंछ। किंवाच। कपिकच्छु लता। २. भुइँ आंवला। भूम्यामलकी। ३. ताल मखाना। कोकिलाक्ष।

अध्यरड़–[सं०] १. खिरनी। क्षीरिका वृक्ष। २. आक सफेद। श्वेतार्क। मदार।

अध्वग–[सं०] ऊँट। उष्ट्र।

अध्वगक्षमी–[सं०] पक्षी। चिड़िया।

अध्वगभोग्य–[सं०]
अध्वगभोज्य–[सं०] } आमड़ा। आम्रातक वृक्ष। अमड़ा।

अध्वगवृक्ष–[सं०] आमड़ा। आम्रातक।

अध्वजा–[सं०] सोनुली। स्वर्णुली।

अध्वरा–[सं०] मेदा। मेदोभवा।

अध्वशल्य–[सं०] ओंगा। चिचड़ा। अपामार्ग।

अध्वसिद्धक–[सं०] निर्गुंडी। सिंदुवार।

अध्वांडशात्रव–[सं०] सोनापाठा। श्योणाक वृक्ष। अरलु।

अनंत–[सं०] १. निर्गुंडी। सिंदुवार। मेवड़ी। २. धमासा। दुरालभा। हिंगुआ। ३. अबरक। अभ्रक।

अनंतक–[सं०] १. मूली। मूलक। २. नरसल। नलतृण। नरकट।

अनंतमूल–[हिं०] अनंतमूल। सारिवा। सालसा। [सं०] सारिवा। शारिवा। अनंता। गोपा। भद्रवल्ली। नागजिह्वा इत्यादि। [मरा०] उपलसरी। [कों०] उपटसुली। [बँ०] श्यामा लता। [गु०] कपरी। कपुरी। खनेडी। [ते०] नीलनीत। [उ०] गुयामान मूल। गुयामान मूल। [कोल०] शेवबेल। [अं०] Hemidesmus Root.

अनंतमूल लता जाति की वनौषधि पथरीली और कंकरीली भूमि में अधिक उत्पन्न होती है और प्रायः सभी प्रांतों में पाई जाती है; विशेषकर उत्तर हिंदुस्तान में, बंगाल, बिहार, हिमालय पहाड़ के प्रदेशों में, बांदा से अवध और शिकम तक और दक्षिण में ट्रावनकोर से सीलोन तक, बंबई और कारोमंडल के किनारे अधिक पाई जाती है। इसकी लता वृक्षों का सहारा पाकर उन पर लिपटती हुई चढ़ती है अथवा जमीन पर दूर तक फैल जाती है। इसकी जड़ को खोदकर निकाल लेते हैं; परंतु कुछ अंश रहने देने से समय पाकर फिर उससे लता उत्पन्न होकर फैलती है। इसको रोपने और बढ़ाने में विशेष नियम की आवश्यकता नहीं होती।

अनंतमूल की बेल मोटाई में कलम से लेकर उँगली के समान और लंबाई में अनेक प्रकार की होती है। इसकी जड़ औषध-

प्रयोग में आती है। यह जड़ कम या अधिक बल खाई हुई, ६ इंच से १२ इंच तक लंबी होती है और सीधे बल में इस पर नालियाँ भी होती हैं। इसकी छाल पतली और पीलापन लिए भूरी होती है जिसको नीचे की ओर से सहज में उतार सकते हैं। नीचे की छाल प्रायः छल्लों में फटी हुई और सुगंधित होती है और इसका स्वाद मिठास लिए हुए कुछ खराशदार होता है।

विशेष—एक जंगल में घूमते हुए मैंने यह लता एक गूलर के वृक्ष पर बहुत दूर तक फैली हुई देखी। भूमि के पास इसकी जड़ की मोटाई प्रायः दो इंच थी और ऊपर की ओर घटती हुई शाखा-प्रशाखाओं के रूप में खूब फैली हुई थी। वृक्ष की शाखाओं पर इसके पत्ते नहीं थे, इसलिये पहचानने में पहले कुछ कठिनाई हुई। किंतु ऊपर की ओर उस वृक्ष की डालियों पर इसके पत्ते देखने से सहज में पहचान हो गई। यह लता वर्षों की पुरानी होने के कारण बहुत मोटी हो गई थी, इससे अनुमान कर सकते हैं कि इसकी जड़ कितनी मोटी और लंबी होगी।

एक बार इसको रोपण कर देने से एक ही लता से कुछ दिनों में अनेक लताएँ हो जाती हैं। अनुभव से सिद्ध हुआ है कि इसकी जड़ को खोदकर निकाल लेने से उसकी जो सोर भूमि में बच जाती है, उससे कुछ दिनों में नई लताएँ फिर उत्पन्न होती हैं।

काली और सफेद इन भेदों से यह लता दो प्रकार की होती है; किंतु कहीं कहीं एक और ही लता को "अनंतमूल" कहते हैं। इसलिये इस तीसरी लता का नाम मैंने "अनंत-मूल भेद" रखा है। पहले द्विविध अनंतमूलों के गुण-दोष लिखकर फिर यथाक्रम अनंतमूल काली, अनंतमूल भेद और अनंतमूल सफेद का सचित्र वर्णन किया जायगा।

गुण दोष–दोनों अनंतमूल स्वादु, स्निग्ध, भारी, विपघ्न, त्रिदोषनाशक, वीर्य्यवर्द्धक, बलकारी, वृष्य, रसायन, पसीना और मूत्र लानेवाली तथा अग्निमांद्य, अरुचि, श्वास, कास, आम-जनित रोग, विषदोष, रक्तप्रदर, ज्वरातिसार, उपदंश-विकार, सब प्रकार के त्वचा-रोग, आमवात, वातरक्त और पारा खाने से उत्पन्न रोगों का नाश करनेवाली एवं अत्यंत रक्त-शोधक है।

इसका अर्क मंदाग्नि और खाँसी में गुणकारी होता है।

प्रयोग—१. निर्बलता, फिरंग रोग या आतशक के कारण उत्पन्न शरीर के पुराने चर्म्मरोग में या और किसी कारण से उत्पन्न चर्म्मरोग में, कठिन गठिया और आतशक से उत्पन्न रोगों में इसका प्रयोग बहुत लाभकारी है। उशबा मगरबी की जगह इसको व्यवहार में ला सकते हैं, बल्कि किसी किसी डाक्टर और हकीम की सम्मति में यह उशबे से भी अच्छी औषध है। यह रुधिर को साफ करता है और पाचन-शक्ति को बढ़ा-कर भूख लगाती है। दो औंस अनंतमूल कुचलकर आध सेर खौलते हुए पानी में दो घंटे तक भिगो और निचोड़कर २ औंस से ५ औंस की मात्रा में पिलाना चाहिए। २. व्रण पर इसकी जड़ पीसकर बाँधने से लाभ होता है। ३. विस्फोटक, गलित कुष्ठ, खुजली अरुचि, गर्मी और श्वेत प्रदर में सकी जड़ों का काढ़ा मोथे के चूर्ण के साथ सेवन करना चाहिए। ४. बालकों के मूत्र में रेत आने पर जड़ का चूर्ण दूध तथा मिस्री के साथ देना हितकारी है। ५. आँख की फूली पर पत्तों का रस टपकाना गुणकारी है। ६. रुक रुककर जलन के साथ मूत्र आने पर जड़ों को पुटपाक कर जीरे और मिस्री के साथ सेवन करना लाभदायक है। ७. वमन में इसकी जड़ पानी में पीस-कर हींग और घी मिलाकर सेवन करना चाहिए। ८. शूल पर समभाग इसके बीज और जीरा पीसकर गुड़ के साथ सेवन करना लाभदायक है। ९. दंतरोग पर समभाग इसके पत्ते और बरियारे के पत्ते पीसकर दाँतों के बीच रखना हितकारी है। १०. पित्तज्वर में इसकी जड़ और असौंड के काढ़े में मिस्री मिलाकर पिलाना गुणकारी है। ११. विष पर इसकी जड़ पानी में पीसकर पिलाना चाहिए। १२. शिरपीड़ा में इसकी जड़ पानी में पीसकर लेप करने से लाभ होता है। १३. पेट के दर्द में इसकी जड़ पानी में पीसकर गरम करके पिलाना चाहिए।

१. अनंतमूल काली। कृष्ण शारिवा। करिअवा साउ। २. अनंतमूल भेद। तरली। कुदरी। ३. अनंतमूल सफेद। श्वेत शारिवा। सफेद अनंतमूल।

अनंतमूल काली–[हिं०] काली अनंतमूल। कालीसर। करि-अवासा ऊ। [सं०] कलघंटिका। श्यामा। गोपी। गोपवधू इत्यादि। [बँ०] श्यामा लता। श्याम लता। [यू०] काली-सुर। [को०] उपरसुली। [मरा०] काली उपरसरी। काली कावली। [मा०] कालीसर। कृष्णसखा। [गु०] काली उपलसरी। काडियाँ कुडेर। [क०] नीलतिग। [पं०] करियासाउ। [सहा०] कालीदुधी, बेलकमु। [गोरख०] बामर। [ते०] नलतिग [म०, प्र०] भेरी। [खा०] गौरवी वल्ली। [लै०] Ichnocarpus Frutescens.

पश्चिमी हिमालय, में सिरमौर से नेपाल तक, पश्चिम की ओर गंगा नदी के आस पास, देहली से बंगाल तक, आसाम, सिलहट, चटगाँव और दक्खिन में पाई जाती है।

यह झाड़दार लता जाति की वनौषधि अनेक शाखाओं के कारण सघन और वृक्षों पर दूर तक चढ़नेवाली होती है। इसकी शाखाएँ लंबी, पतली और सफेद रंग की होती हैं। यह बेल बारहों मास हरी भरी दिखाई पड़ती है। पत्ते जामुन के पत्तों के समान २-३ इंच लंबे, पौन से १॥ इंच तक चौड़े, अनीदार, कालापन लिए हरे रंग के, सफेद रेशेवाले और सम-वर्त्ती होते हैं। फूल छोटे-छोटे हरापन लिए सफेद अथवा पीलापन

अनन्तमूल सफेद

अनन्नास
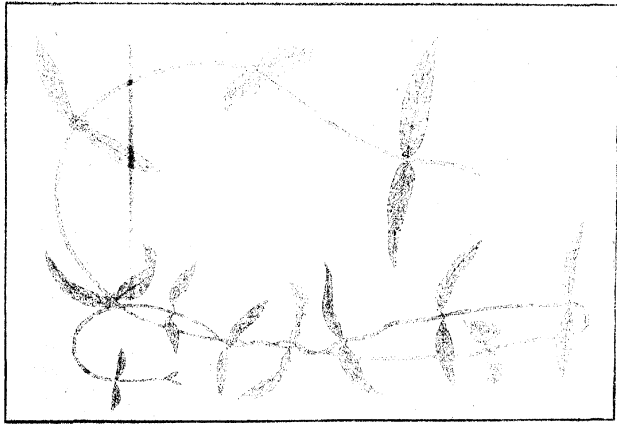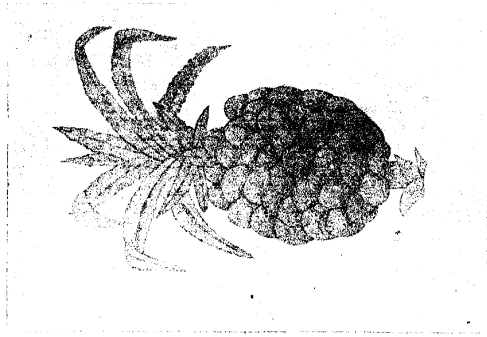
लिए सफेद किंचित् सुगंधित अथवा गंधहीन होते हैं। फलियाँ २ से ५ इंच तक लंबी और बीज आध इंच तक लंबा होता है।

प्रयोग—१. प्रायः इसकी जड़ औषध-प्रयोग में आती है। यह रक्त-शोधक, बलवर्द्धक और सारसा परिला के समान गुणकारी होती है। २. ज्वर में डंडी और पत्तों का काढ़ा दिया जाता है। ३. मन्दाग्नि में ५ तोले जड़ के काढ़े में पीपल का चूर्ण मिला कर पिलाना हितकारी है। ४. त्वचा-रोग पर इसके काढ़े में मधु डालकर पीना लाभकारी है। ५. उपदंश में इसकी जड़ और चोबचीनी का काढ़ा हितकारी है। ६. नेत्र के शुक्र रोग में इसके काढ़े में मधु मिलाकर पिलाना चाहिए।

अनंतमूल भेद—[हिं०] अनंतमूल नरली। [बँ०] कुदरी। [मु०] गोमेट्ट। गोमेट्टी। [तै०] तिडर्डाटा। [संथा०] अत अट। [कोल०] गुल कुकरु। गलले। कुकरी। कुललाकाँ। [पं०] चंबा। बनककरा। [लै०] Zelmeria Umbellata. Syn: Momordica Umbellata.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में अधिकता से पाई जाती है और रत्नगिरि की वाटिकाओं में आप ही आप जंगली उत्पन्न होती है। यह लता जाति की वनस्पति है। इसके पत्ते करेले के पत्तों के समान होते हैं और फल परवल के समान लगते हैं।

प्रयोग—कोंकण में शुक्र-प्रमेह पर इसकी जड़ का रस, सफेद जीरे और मिस्री के साथ ठंढे दूध में मिलाकर पीते हैं। भिलावें के रस से उत्पन्न हुए छाले पर इसके पत्तों का रस लगाया जाता है।

यह पुष्टिकर और स्थूलकारक ओषधि है। इसके लिये इसकी जड़, पकाए हुए प्याज, जीरे, मिस्री और घृत का सेवन किया जाता है अथवा इसकी जड़ को दूध और मिस्री के साथ सेवन करते हैं।

अनंतमूल सफेद—[हिं०] सफेद अनंतमूल। श्वेत सारिवा। गोरीसर। गौरीसर। गौरिया साऊ। कपुरी। मगरबु। जंगली। चानवेल्ली। हिंदी सालसा। [सं०] नागजिह्वा। गोपी। गोपकन्या। गोपवल्ली। सारिवा। उत्पल शारिवा। भद्रवल्ली। अनंता। सुगंधा। गोपीमूलम्। शारिवा आदि। [बँ०] शुक्ल सारिवा। अनंतमूल। [मरा०] उपलसरी। [तै०] पलाश गंधी। मामेन। गदि सुगंधि। पाल चुकनि वेरु। सुगंधि पाल। तेल्ला सुगंधि पाल। पाल सुगंधि। मुत्ता पुलगम। [ता०] नान्नरी। नन्नारि। [क०] करिवंट। [खा०] साग दहेरु। सुगंध पालद गिदा। [गो०] दुदवाली। [गु०] धोली उपलसरी। [द०] सुगंधि पाला। नन्नारि। नाटका औषवह। [मु०] उपलसार। [लै०] Hemidesmus Indicus Syn: Asclepias Pseudo-sarsa. [अं०] Indian Sarsaprilla.

यह उत्तर हिंदुस्तान में बाँदा से अवध तक, सिक्कम और दक्षिण में ट्रावनकोर तक पाई जाती है।

यह लता पतली शाखाओंवाले वृक्षों की डालियों से खूब लिपटी हुई चढ़ती है। इसके पत्ते रोमयुक्त, प्रायः अनार के पत्तों के समान परंतु उनसे लंबे, नुकीले कनेर के पत्तों के समान समवर्ती लगते हैं। लंबाई चौड़ाई में इसके आकार अनेक प्रकार के होते हैं। छोटे पत्ते १-१॥ इंच लंबे तथा उतने ही चौड़े होते हैं और दूसरे ४ इंच तक लंबे और चौथाई इंच चौड़े होते हैं। इनके रेशे सफेद से दिखाई देते हैं। प्रायः नई शाखा के पत्तों के बीच का हिस्सा जड़ से फुनगी तक सफेद सा होता है। फूल बारीक, बैंगनी रंग के, लंबे और फलियाँ तिकोनी हरे रंग की ४-५ इंच लंबी होती हैं। इनमें छोटे छोटे बीज होते हैं और रूई निकलती है। इसकी जड़ से कपूर कचरी के समान गंध आती है और लता से सफेद रंग का दूध निकलता है।

गुण-दोष—मीठी, स्निग्धता-कारक, स्वेदक, संशोधक, स्वास्थ्यदायक, बलकारी तथा क्षुधा-मांद्य, भोजन में अनिच्छा या अरुचि, ज्वर, चर्म्मरोग, गर्मी और प्रदर रोग में हितकारी है।

प्रयोग—१. इसकी जड़ और रस औषध-प्रयोग में आता है। जड़ सारसा परिला के समान गुणकारी, रक्तशोधक और बलवर्द्धक है। २. पथरी और पीड़ा सहित मूत्र होने पर इसका चूर्ण गाय के दूध के साथ सेवन करना चाहिए। मूत्र-नाली की दाह और गर्मी पर इसकी जड़ केले के पत्तों में लपेट कर, भूभल में पकाकर जीरे और चीनी के साथ पीसकर उसमें घी मिलाकर सेवन करने से फायदा होता है। ३. रुधिर शुद्ध करने के लिए और पित्त की अधिकता में इसकी जड़ और सफेद जीरे का काढ़ा देना चाहिए। ४. फोड़े, फुंसी, गंडमाला और उपदंश-संबंधी रोगों में ७॥ से १० तोले तक का काढ़ा दिन में तीन बार सेवन करने से लाभ होता है। ५. बालकों के मुख के सफेद छाले पर इसकी जड़ को मधु में पीसकर लगाना चाहिए अथवा सूखी छाल के बारीक चूर्ण को मक्खन में तलकर दिन रात में १ से ४ माशे तक सेवन करने से लाभ होता है। ६. आँख की फुंसियों पर इसका दूध या रस लगाना गुणकारी है। कोंकण प्रांत में अभिष्यंद रोग पर इसका दुधिया रस आँखों में टपकाया जाता है। पहले यह कुछ तीक्ष्ण-सा लगता है, परंतु फिर शीतलता उत्पन्न करता है। ७. वीर्य्य और मूत्र रोग पर जड़ को केले के पत्ते में लपेट कर पुटपाक करके जीरे और मिस्री के साथ पीसकर घी में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। ८. सूजन पर जड़ को पीसकर लेप करने से फायदा होता है। शोथ रोग में जड़ का उपयोग किया जाता है। इसका शर्बत बनाकर काम में लाते हैं। ९. पुरानी खाँसी में इसका और कंटकारी

का काढ़ा देना चाहिए। १०. बालक का रुधिर शुद्ध करने और निर्बलता मिटाने के लिए दूध और शक्कर के साथ औटा कर पिलाने से लाभ होता है। ११. अतिसार में इसके काढ़े के साथ अतीस का चूर्ण सेवन करना चाहिए। १२. वमन पर चूर्ण के साथ हींग का सेवन करना लाभदायक है। १३. दाँतों के कीड़े पर पत्तों को पीसकर दाँतों के नीचे दबाने से फायदा होता है।

अनंतमूली–[सं०] धमासा। दुरालभा।

अनंतवात–[सं०] आसेब। आवेश रोग। वायु की बीमारी।

जिसमें वात, पित्त और कफ तीनों दोष कुपित होकर गरदन की नसों को अत्यंत पीड़ित कर नेत्र, भौंह और कनपटी में अत्यंत पीड़ा उत्पन्न करते हैं तथा गंडस्थल और पसलियों में कंप उत्पन्न करते हैं, ठोढ़ी को जकड़ देते हैं और नेत्रों में रोग उत्पन्न करते हैं, उस त्रिदोषोद्भव शिरोरोग को अनंत वात कहते हैं।

औषध-प्रयोग—कासालु नं० ५।

अनंता–[सं०] १. अनंतमूल। सारिवा। २. कलिहारी। अग्निशिखा। ३. दूब। दूर्वा। ४. धमासा। दुरालभा। हिंगुआ। ५. पीपल। पिप्पली। ६. हरीतकी। हर्रे। ७. आँवला। आमलकी। ८. गिलोय। गुडूची। गुरुच। ९. अरनी। अग्निमंथ। गनियारी। १०. सत्यानाशी। स्वर्णक्षीरी। घमोय।

अनंदर–[पं०] धूप सरल। सरलकाष्ठ। धूप का वृक्ष।

अनंशुमत्फला–[सं०] केला। कदली।

अनई–[फा०] सिताब। सर्पदंष्ट्रा।

अनककालिक–[सं०] वृश्चिककाली। वृश्चिकपत्री।

अनकिश्त–[फा०] कोयला। अंगार।

अनकुव–[मला०] बन हलदी। वन हरिद्रा। जंगली हलदी।

अनक्लोतन–[सं०] मुलेठी। यष्टिमधु।

अनग्ना–[सं०] कपास। कार्पास।

अनघ–[सं०]
अनघ्न–[सं०] } सरसों सफेद। गौर सर्षप। सफेद सरसों।

अनजलक–[फा०] जंगली अमरूद के बीज।

अनडुजिह्वा–[सं०]
अनडुज्जिह्वा–[सं०] } गोभी। गोजिह्वा। गोजिया।

अनध–[सं०] सरसों सफेद। गौर सर्षप।

अननस–[मरा०] अनन्नास। अन्नास।

अनन्नास–[हिं०] अन्नास। [सं०] बहुनेत्र फल। पारवती। आम। कौतुक सशंक। बहुनेत्रफल आदि। [बं०] अनानश। [मरा०] अननस। अनानस। [मा०] अनन्नास। [गु०] अननस। [तै०] अनास पंडु। [क०] अनान सुहन्नु। [ग्रा०] अमाश पशम। [लै०] Ananas Sativa. [अं०] Pine Apple.

यह एक विदेशीय फल है, जो अमेरिका से यहाँ पर लाया गया है। अब हिंदुस्तान के दक्षिण और पूरब के प्रांतों में तथा अनेक प्रदेशों में उत्पन्न होने लगा है। इसके पत्ते केवड़े के पत्तों के समान एक बालिश्त लंबे होते हैं। दोनों छोर कँटेदार होते हैं। पत्ते और जड़ के बीच में गोल और किंचित् लंबा कटहल के छोटे फल के आकार का और लंबाई लिए पीले रंग का फल होता है। फल के ऊपर शरीफे के छिलके के समान बड़ी बड़ी आँखें सी होती हैं। इसकी जड़ घीकुँवार की जड़ के समान होती है। कच्चे फल का स्वाद खट्टा और पक्के का खट्टापन लिए मीठा होता है।

सिंगापुर, पिनांग, मलाया और चीन में अनेक प्रकार के बढ़िया अनन्नास हुआ करते हैं। चीन देश का अनन्नास जैसे खूब मीठा होता है, वैसे ही उसका पौधा भी देखने में सुंदर लगता है। पुरानी जड़, डंठल और फल के ऊपर जो शाखा रूपी पेड़ियाँ निकलती हैं, उन्हें छाँटकर रोपने ही से इसके पौधे तैयार होते हैं। थोड़ी छायावाले स्थान में पुराने गोबर की खाद अथवा उद्भिज्ज खाद मिलाकर भली भाँति जोते हुए खेत में क्यारी बनाकर रोपना चाहिए। इसकी जड़ जमीन में दूर तक नहीं जाती; इसलिये पोली मिट्टी में बोने से उत्तम फल देता है। बैसाख से भादों तक पौधे रोपते हैं। बैसाख जेठ में जो शाखाएँ फूटकर निकलती हैं, उन्हें उठाकर क्यारी में रोपते हैं। फिर आषाढ़ के अंत अथवा सावन के आरंभ में जखीरे से उठाकर १॥–२ हाथ के फासले पर लगाते हैं। वर्षा काल में निकली हुई घासों को निकाल देते हैं। कार्तिक अगहन में कुदाली से मिट्टी पोली करते हैं। माघ में फल लगना आरंभ होता है। उस समय इसको जड़ से सींचना चाहिए। फल के ऊपर जो शाखाएँ निकलती हैं, उन्हें छाँट देना अच्छा होता है।

गुण-दोष–कच्चा फल–भारी, देर में पचनेवाला, रुचिकारी, एवं अन्न में रुचि लानेवाला, हृदय को हितकारी, तथा कफपित्तकारक, तृप्तिकारी, श्रम और ग्लानि का नाश करनेवाला है। **पका फल**—स्वादिष्ट, पित्त-विकार-नाशक, भ्रम, मूर्च्छा और दाह हरण करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में ठंढा और तर, किसी के मत से पहले दर्जे में ठंढा और दूसरे में तर, मन को प्रसन्न करनेवाला, हृदय, यकृत, मस्तिष्क और पक्वाशय को बलकारी, हृदय की व्याकुलता और पित्त की गरमी शांत करनेवाला, कृश और शीत प्रकृतिवाले को बलकारी तथा कंठ के नल और श्वासिक अवयव को हानिकारक है।

दर्पनाशक—खाँड़ और सौंफ का मुरब्बा।

प्रतिनिधि—सेब।

प्रयोग—१. फल का बहुत अधिक प्रयोग करने से गर्भाशय

का बहुत संकोच होता है। इसको भूनकर खाने से इसका जहरीला असर मिट जाता है। फल के टुकड़े पर नमक अथवा चीनी मिलाकर खाना चाहिए। इसका मुरब्बा पौष्टिक और बलवर्द्धक होता है। २. दस्त लाने के लिये और कृमि रोग पर पत्तों के सफेद भाग को मिस्री के ताजे रस के साथ देना चाहिए। ३. कुसमय में बंद हुए मासिक धर्म को खोलने के लिये पत्तों का रस पिलाना अथवा पका फल लगातार खिलाना चाहिए। ४. हिचकी में पत्तों के रस में मिस्री मिलाकर पीने से फायदा होता है। ५. पित्त वृद्धि के लिये फल का रस पीना हितकारी है। ज्वर में उत्पन्न पेट का दाह मिटाने के लिये पके फल का रस पिलाना चाहिए। इससे पसीना आता है। ६. कामला रोग में पके फल का रस पीना अच्छा है। ७. पित्तोन्माद पर एक भाग रस में दो भाग मिस्री का शर्बत मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है।

अनपकै–[ते०] कद्दू। अलावु। लौकी।

अनवुस्सालब–[अ०] मकोय। काकमाची।

अनमंगु–[खा०]
अनमुंगु–[खा०] } सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष।

अनरसा–[हिं०] अँदरसा नाम की मिठाई। अनरसा। धुले हुए चावलों के आटे में घी का मोयन देकर और उसे सानकर गुड़ के पानी में उबालकर छोटी छोटी लोई बनाकर पूरी के समान बेलते और एक ओर पोस्त के दाने लगाकर घी में पका लेते हैं। इसी को अँदरसा कहते हैं।

गुण—रुचिकारी, वृष्य, स्निग्ध और शीतल तथा अतिसार-नाशक है।

दूसरी क्रिया–धुले हुए चावलों के तीन सेर आटे में एक सेर मिस्री मिलाकर दही में भली भाँति मिलाकर एक दिन रख छोड़े। दूसरे दिन उपर्युक्त प्रकार से लोई बनाकर बेलकर एक ओर सफेद तिल लगाकर घी में तले।

गुण—यह बलकारी, कफ-वात-नाशक, हृदय को बलकारी, अतिशीतल और पुष्टिदायक है।

तीसरी क्रिया—धुले हुए चावलों के आटे में समभाग मिस्री मिलाकर पानी में सानकर उक्त विधि से अँदरसे बनावे।

गुण—वृष्य, हृदय-शोधक, धातुवर्द्धक, पित्तनाशक, भारी, रुचिकारी, तृप्तिदायक तथा पुष्टि, कांति और बल देनेवाला है।

अनल–[सं०] १. चीता। चित्रक। चितउर। २. भिलावाँ। भल्लातक। भेला। ३. पित्त। अग्नि।

अनलनामा–[सं०] चीता। चित्रक। चितउर।

अनलप्रभा–[सं०] मालकंगनी। महाज्योतिष्मती। मलकाँनी।

अनलविषर्द्धिनी–[सं०]
अनलविषर्धिनी–[सं०] } ककड़ी। कर्कटिका।

अनलि–[सं०]
अनली–[सं०] } अगस्त। वक वृक्ष।

अनब–[अ०]
अनबह–[अ०] } अंगूर। अपक्व द्राक्षा।

अनशोवडी–[ता०] गोभी नं० १। गोजिह्वा। गोजिया।

अनसंद्र–[ते०] बबूल काला। कृष्ण बबूल। काला बबूर।

अनसा सुइला–[आसा०] सन। शण। सनई।

अनसीगिड–[क०] तीसी। अतसी।

अनाक्रांता–[सं०] कंटकारी। कटेरी। छोटी कटाई।

अनादिल–[अ०] बुलबुल पक्षी। हज़ारदास्ताँ।

अनानस–[मरा०]
अनानसूहराणु–[क०] } अनन्नास। बहुनेत्रफल।

अनायक–[सं०]
अनायज–[सं०] } अगर। अगुरु काष्ठ।

अनार–[हिं०] दाड़िम। धालिम। धारिंब वृक्ष। फूल–अनार का फूल। गुलनार। जुलनार। फल–अनार। दाड़िम। दारम। दामु। [सं०] दाड़िम। करक। दंतबीज। लोहित पुष्पक। इत्यादि। फल–दाड़िम। फूल–दाड़िम पुष्प। [बं०] दालिम गाछ। दाड़िम। डालिम। फूल–गुल अनार। उन्नुम। फल-अनार। आनार। दालिम। दालिंब। दारिम। दारमी। [उ०] दालिम। दालिंब। [आसा०] दालिम। [द०] अनार का झाड़। फूल–गुलेनार। फल–अनार। [गु० प्रा०] मदल। मादल। फल-अनार। दाड़िम। [पं०] अनार। फल–दारु। दारुनी। दारिऊन। दनु। दोअन। जामन। दारन। अनार। फूल–गुल अनार। दाड़िम परक। [पश्तो०] अनार। फल–अनार। अनार। नरगोश। घरनंगोई। [द०] अनार। फल–अनार। धालिम। धारिंब दारहु। छाल दारु जो कुल। [मरा०] दालिंब झाड़। फल–दालिंब। डालिंब। डालिंबे। [गु०] दादम नु झाड़। फूल–गुलअनार। फल–दारम। दाडुर। दाड़म। दाड़िम। [ता०] मडलै। मडलई। मडलम। मुगिलन। फल–मडलैप पज़हम। मदलैचे होड्डि। [ते०] दानिम्म। दाड़िम। दालिंब। दानिम्मा। दानिम्म चेट्टु। फल–दाड़िम पंडु। दालिंब पंडु। दानिम्म पंडु। फूल–पेडरी। दानिम्मा। [खा०] दालिंबे गिड। फूल–पेशी दुलिंबे। फल–दालिंबे कयी। [क०] दालिंब। [मा०] दाड़म। [द्रा०] मादल। [फा०] रुम्मान। अनार। [लै०] Punica Granatum. [अं०] Pomegranate.

यह प्रायः सभी प्रांतों की वाटिकाओं में लगाया जाता है। इसका वृक्ष मझोले कद का, झाड़दार और घनी शाखाओंवाला होता है। यह पुरुष और स्त्री जाति के भेद से दो प्रकार का होता है। जिस पर सघन दलवाले अत्यंत लाल रंग के फूल आते हैं किंतु फल नहीं लगते, वह पुरुष जाति का वृक्ष है; और

जिस पर फूल और फल दोनों लगते हैं, वह स्त्री जाति का वृक्ष है। इसकी छाल पतली और लकड़ी हलके पीले रंग की होती है। पत्ते समवर्ती १ से ३ इंच तक लंबे, आध से पौन इंच तक चौड़े, दोनों ओर पतले, अनीदार और किंचित् पीलापन तथा लाली लिये हरे रंग के होते हैं। फूल बहुत लाल और सुहावने दिखाई पड़ते हैं। फल गोल और उनका छिलका मोटा होता है। इनमें सफेदी लिए लाल अथवा गुलाबी रंग के अगणित नोकदार, रसयुक्त दाने होते हैं।

खट्टे, खटमीठे और मीठे इन स्वाद-भेदों से अनार तीन प्रकार के होते हैं। तीनों के वृक्ष एक ही समान होते हैं। इसके पौधे बीज और कलम से तैयार किये जाते हैं। साधारण वृक्षों की भाँति इसका रोपण होता है। काबुल का अनार उत्तम होता है। सब ऋतुओं में फूल लगे रहते हैं, पर चैत-बैसाख में अधिक लगते हैं और असाढ़ से भादों तक फल पकते हैं।

गुण-दोष—कसैला, खट्टा, मधुर, स्निग्ध, दीपन, गरम, हलका, अग्नि-प्रदीपक, मलरोधक, हृदय को हितकारी, रुचिकारक तथा कफ, खाँसी, श्रम, मुखरोग, कंठरोग और पित्त का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. प्रायः इसकी छाल और फल का छिलका औषध-प्रयोग में आता है। सब प्रकार के अनार मलरोधक होते हैं। इसका फूल नकसीर में (नाक से रुधिर गिरने में) हितकारी है। मीठे पके हुए अनार ज्वर के सिवा अन्य सब प्रकार के रोगों में गुणकारी होते हैं। मस्तिष्क, हृदय और जिगर के लिये पौष्टिक है और शुद्ध रुधिर उत्पन्न करता है। अनार के दाने निकाल कर साफ पतले कपड़े में उनका रस निचोड़ कर पिलाना चाहिए। यह रस शीतल और शांति-प्रद है तथा अग्निमांद्य की औषधों में डाला जाता है। इसका फल खाने में रुचिकर और शरीर को हितकारी है। इसके सेवन से बुद्धि की वृद्धि और तृषा शमन होती है। इसके रस का शरबत बनाया जाता है जिसको शरबत अनार कहते हैं। यह पित्त का शमन करनेवाला है। इसकी लकड़ी की छाल ग्राही एवं जड़ की छाल संकोचक तथा कृमि-नाशक है। २. बालकों की खाँसी पर फल के छिलके का चूर्ण अथवा फल के रस का सेवन हितकारी है। ३. बालक के अतिसार और संग्रहणी पर फल के छिलके का चूर्ण देना चाहिए। ४. कृमिरोग में इसकी लकड़ी और जड़ की छाल का काढ़ा पिलाकर कुछ रेचक औषध खिलाने से कृमि का नाश होता है। फल के छिलके के काढ़े में तिल का तेल मिलाकर तीन दिन पिलाने से लाभ होता है। ५. पित्त की उष्णता पर २ तोले शरबत अनार में उतना ही जल मिलाकर पीने से फायदा होता है। ६. आँख की गर्मी पर अनारदाने का रस आँख में टपकाना चाहिए। ७. संग्रहणी पर कच्चे अनार को पीस उसका रस निचोड़कर उसमें माजूफल, लौंग और सोंठ का चूर्ण तथा मधु मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। फल के अभाव में छाल का रस लेना चाहिए। ८. गर्मी के कारण नाक से रुधिर गिरने पर और रक्तष्ठीवी सन्निपात में इसके फूल और दूब की जड़ का रस नाक में डालने और सिर पर मलने से लाभ होता है। ९. छाती के दर्द में अनारदाने के रस में एक माशा सनाय का चूर्ण मिलाकर सेवन करना हितकारी है। १०. दुखती हुई आँख पर पत्ते को पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ११. पित्त-विकार में पके अनार के रस में मिस्री मिलाकर पिलाना चाहिए। १२. रक्तातिसार में अनार की छाल और कुड़ा की छाल का काढ़ा गुणकारी है। अतिसार में पेट की जलन पर शीतलता लाने के हेतु इसके फूलों और फलों का छिलका, मसाले यथा लौंग, इलायची, दालचीनी, धनियाँ, पीपल इत्यादि के साथ देते हैं। आमातिसार में अनार का छिलका, अफीम और लौंग का मिश्रण अचूक औषध है। १३. उपदंश के घाव पर इसका चूर्ण लगाना हितकारी है। १४. त्रिदोषज वमन में भूने हुए अनार का रस और मधु मसूर के आटे में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। कृमिरोग पर जड़ की छाल के काढ़े में लौंग का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। अथवा पाँच तोले छाल को एक सेर पानी में औटाना चाहिए। आध सेर शेष रहने पर मल और छानकर आध आध घंटे पर ३—४ तोले की मात्रा में सब काढ़ा पिलाना चाहिए। इससे वमन होती है और कभी-कभी आँत में पीड़ा भी होती है; किंतु कीड़े अवश्य नष्ट हो जाते हैं; और फिर पीड़ा भी शीघ्र ही दूर हो जाती है। १५. शूल पर अनारदाने का रस गुणकारी है। १६. रक्तातिसार में अनार को पुटपाक की रीति से पकाकर रस निचोड़कर मधु मिलाकर सेवन करना लाभकारी है। १७. रक्त-स्राव और घाव पर फूल और कली का प्रयोग करना तथा अनार खाना हितकारी है। १८. नकसीर में पत्तों का रस नाक में टपकाना गुणकारी है। १९. गले में छाले होने या गाँठ के कारण गला फट जाने पर जड़ की छाल का लेप करना चाहिए। २०. गर्भाशय में रोग होने पर उसे जड़ की छाल के काढ़े से धोना हितकारी है। २१. खाँसी में कलियों का चूर्ण २—२॥ रत्ती की मात्रा में सेवन करना चाहिए। २२. सिर की पीड़ा में इसकी जड़ पानी में पीसकर लेप करने से लाभ होता है। २३. नेत्र-पीड़ा पर पत्तों को पीसकर टिकिया बनाकर सोते समय आँख पर बाँधने से पीड़ा दूर होती है। २४. नाखून टूटने की पीड़ा पर पत्तों को पीसकर लगाना चाहिए। २५. गर्भ में मरे हुए बालक को निकालने के लिये योनि के पास छिलके की धूनी देनी चाहिए। २६. मसूड़े की पीड़ा पर अनार और गुलाब के फूलों के चूर्ण से

अनार
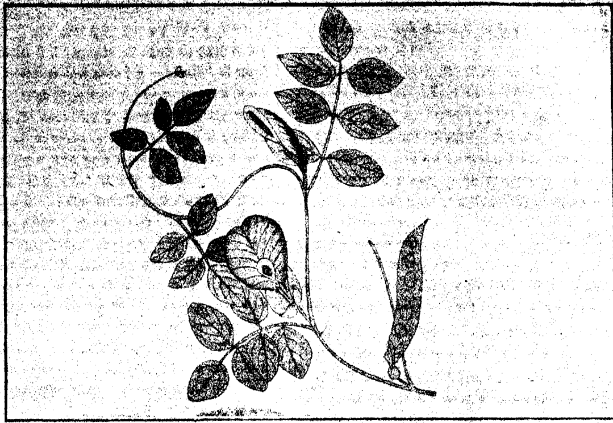
अपराजिता नीली
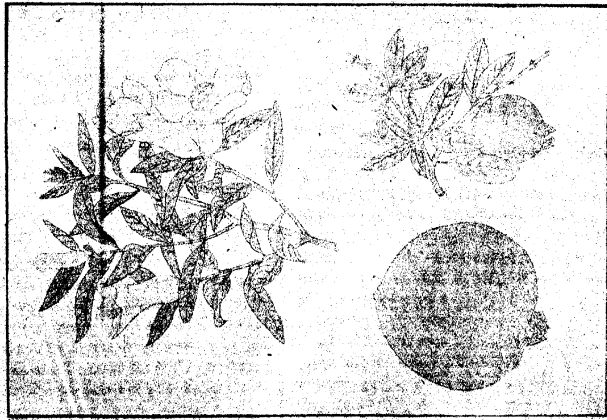
मंजन करने से लाभ होता है। २७. अर्श रोग में अनार का सेवन हितकारी है। २८. सूजन पर छिलके को छुहारे के साथ पीसकर लेप करने से लाभ होता है। २९. आँखों की खुजली मिटाने और उनकी ज्योति बढ़ाने के लिये अनार का रस निकाल कर बोतल में भरकर धूप में पकाना चाहिए और चाशनी तैयार होने पर अंजन करना चाहिए। ३०. वमन में इसके रस में मिस्री मिलाकर सेवन करना चाहिए। ३१. आग से जलने पर पत्तों को पीसकर लगाने से लाभ होता है। ३२. अरुचि में इसके रस में जीरा और मिस्री मिलाकर अथवा मधु मिलाकर पिलाना चाहिए। ३३. उपदंश की टाँकी पर इसकी छाल का चूर्ण लगाने से लाभ होता है। ३४. कान की पीड़ा में खट्टे अनार के रस में मधु मिलाकर कान में डालने से फायदा होता है। ३५. मदिरा-पान की अधिकता से जिगर जल जाने पर अनार का पानी तीन तीन घंटे पर पिलाने से लाभ होता है। ३६. कामला पर ६–७ तोले अनार का पानी और जरिश्क का सेवन गुणकारी है। ३७. छर्दि में खटमीठे अनार का पानी लाभदायक है। ३८. विशूचिका में खट्टे अनार का पानी या शर्बत और रुब्ब उत्तम औषध है। ३९. श्वेत प्रदर पर आध सेर जड़ की छाल कूटकर ३–४ सेर जल में मंद अग्नि पर पकावे। एक पाव शेष रहने पर उतारे और छानकर योनि को धोए और मलमल का टुकड़ा इसी पानी में भिगोकर योनि में रखे तो बहुत लाभ होता है।

अनार का छिलका–[हिं०] छिलका अनार। [सं०] दाड़िम फल त्वक्। [फा० यु० प्रा०] पोस्त अनार। [दे०] नसपाल। नासपाल। नसपल। चाल अनार। छाल अनार। [द०] दारु जोकुल। [अ०] कशरुल् रुम्मान।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—मलरोधक तथा रक्तातिसार और कृमिनाशक एवं खाँसी में गुणकारी है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—स्वाद में कसैला, पहले दर्जे में मीठे का छिलका ठंढा, तर और खट्टे का ठंढा और रूक्ष है। उष्ण शोथ में लाभकारी, मसूढ़े के लिये बलकारी और अतिसार, अर्श तथा गुदभ्रंश में लाभकारी है।

मात्रा—६ माशे से २ तोले तक।

प्रयोग—१. अतिसार, आमातिसार और मरोड़े में फल का छिलका, लकड़ी की छाल और लौंग का काढ़ा देना चाहिए। चावल, जौ और छिलके के हिम की वस्ति देने से लाभ होता है। ५ तोले छिलके को सवा सेर दूध में औंटाकर १५ छटाँक शेष रहने पर उतार और छानकर दिन में तीन बार पिलाने से फायदा होता है। २. संग्रहणी पर इसके काढ़े में सोंठ और चंदन का बुरादा मिलाकर पिलाना चाहिए। ३. कृमिरोग पर खट्टे अनार का छिलका और शहतूत औंटा और छानकर पिलाना चाहिए। छाल के काढ़े में तिलों का तेल मिलाकर पिलाना लाभदायक है।

अनार के बीज–[हिं०] अनारदाना। [सं०] दाड़िमबीज [द०] दारुबीज। [बं०] हबुल किलकिल। [फा०] तुख्म अनार। [अ०] हब्बुल रुम्मान।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में ठंढा और रूक्ष, वर्द्धक, ग्राहक (काबिज़) पाचक, क्षुधाप्रद, पक्वाशय को बलकारी तथा पैत्तिक वमन, अतिसार और दोनों प्रकार की खुजली में लाभकारी और ठंढी प्रकृतिवाले को हानिकारक है।

दर्पनाशक—जीरा।

प्रतिनिधि—समाक।

मात्रा—६ से ९ माशे तक।

अनार खटतुरुश–[हिं०]
अनार खटतुर्स–[हिं०] } खटतुर्श अनार। [फा०] अनार रुब्ज। [अ०] रुम्मान मैखुश।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—अग्नि-प्रदीपक, रुचिदायक, लघु और कुछ कुछ पित्त को बढ़ानेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में ठंढा और तर है। यह गुणों में मीठे अनार के समान होता है, परंतु प्रभाव में उससे बलवान् है। पक्वाशय को बलकारी तथा हिक्कानाशक है। पैत्तिक वमन, अतिसार, खाज और पांडु रोग पर छिलके सहित रस निचोड़कर खाँड़ मिलाकर सेवन करना चाहिए। यह ठंढी प्रकृतिवाले को हानिकारक है।

दर्पनाशक—सोंठ का मुरब्बा।

प्रतिनिधि—कच्चा अंगूर।

अनार खट्टा–[हिं०]
अनार तुर्श–[हिं०]
अनार तुर्स–[हिं०] } खट्टा अनार। [सं०] अम्ल दाड़िम। [फा०] अनार तुर्श। [अ०] रुम्मान हामिज़।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—वात-कफ-नाशक तथा पित्तवर्द्धक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—ठंढा और तर, वक्षस्थल की दाह तथा पक्वाशय और यकृत की उष्णता को शमन करनेवाला, रुधिर-प्रकोप, पित्तज वमन और अतिसार, पांडु और खुजली में लाभकारी एवं मद और हृदय की व्याकुलता में गुणकारी है। शीत प्रकृतिवाले को और यकृत तथा ओज की कर्षक-शक्ति को हानिकारक है।

दर्पनाशक—मीठा अनार।

प्रतिनिधि—मीठा अनार।

अनारदाना–[हिं०] अनार के बीज।

अनारदाना दस्ती–[अ०] कुलकुल। क्षार चिकना।

अनार मीठा–[हिं०] मीठा अनार। [सं०] स्वादु दाड़िम। [फा०] अनार शीरीं। [अ०] रुम्मान हलव।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—त्रिदोषनाशक, तृप्तिकारक, वीर्य्यवर्द्धक, हलका, कुछ कुछ कसैला, धारक, स्निग्ध, स्मरणशक्ति-वर्द्धक, मेधाजनक, बलकारक तथा प्यास, दाह, ज्वर, हृदय रोग, कंठ और मुख रोग का नाश करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में ठंढा और रूक्ष (पर कुछ लोग मातदिल भी कहते हैं), रुधिर उत्पन्नकारक, आध्मान और अफरा करनेवाला, स्वच्छताप्रद, उदर को मृदु करनेवाला, मूत्रप्रवर्तक, तृषानाशक, ओजकारक, संपूर्ण उत्तमांग को बलकारी तथा आमाशय और ज्वर के रोगी को हानिकारक है।

दर्पनाशक—खट्टा अनार; और ठंढे मिज़ाजवाले के लिये सोंठ का मुरब्बा।

प्रतिनिधि—खट्टा अनार।

अनार रब्ज़—[फा०] अनार खटतुरुश।

अनारशीरीं—[फा०] अनार मीठा। स्वादु दाड़िम।

अनारस–[हिं०] अनन्नास। बहुनेत्र फल।

अनार्य्यक–[सं०] १. अगर। अगुरु। २. काष्ठागर। काष्ठागुरु।

अनार्य्यज–[सं०] अगर। अगुरु।

अनार्य्यतिक्त–[सं०] } चिरायता। भूनिंब। किरात।
अनार्य्यतिक्तका–[सं०] } चिरायता।

अनावर्त्त जल—[सं०] कु-ऋतु का जल (पौष महीने से चैत तक की वर्षा का पानी)।

गुण—वात, पित्त और कफ का नाश करनेवाला है।

अनाशप्पशम–[द्रा०] } अनन्नास। बहुनेत्र फल।
अनासपंडु–[ते०] }

अनाह–[हिं०] आनाह रोग।

अनिक्षु–[सं०] बल्वज। उलूक तृण। खगड़ा। (चटाई की घास।)

अनिगंदुमनि–[ता०] रक्तचंदन नं० २। कुचंदन। कंभोजी।

अनिद्रा–[सं०] निद्रानाश। अस्वप्न।

अनिर्मल्या–[सं०] } स्पृक्का। असबरग। पिंडी शाक।
अनिर्माल्या–[सं०] } पुटी।

अनिर्वाण–[सं०] कफ। श्लेष्मा।

अनिल–[सं०] १. सागौन। शाल वृक्ष। सागवान। २. वायु। हवा। पवन।

अनिलघ्न–[सं०] } बहेड़ा। विभीतक वृक्ष।
अनिलघ्नक–[सं०] }

अनिलनिर्य्यास–[सं०] चिरौंजी। पयाल वृक्ष।

अनिलभुक्–[सं०] साँप। सर्प।

अनिलरिपु–[सं०] एरंड। अंडी। रेंड।

अनिलहर–[सं०] काली अगर। कृष्णागुरु। स्वादु अगर। अगरसार।

अनिलांतक–[सं०] हिंगोट। इंगुदी।

अनिला–[सं०] अपराजिता। विष्णुक्रांता। कोयल लता।

अनिलाटिका–[सं०] पुनर्नवा रक्त। रक्त पुनर्नवा। साँठ। गदपूरना।

अनिलापहा–[सं०] कुलथी। रक्तकुलत्थ। कुर्थी।

अनिलामय–[सं०] वातरोग। वायु रोग।

अनिलोचित–[सं०] उड़द। नीलमाष।

अनिष्टा–[सं०] } गँगेरन। नागबला। गुलसकरी।
अनिष्ठा–[सं०] }

अनिःसारा–[सं०] केला। कदली।

अनिसून–[अ०] हिंदी जंदनी। बादियान रूमी।

अनीरा–[अ०] एक प्रकार की यूनानी दवा जिसको फारसी में संदज कहते हैं। यह एक वृक्ष का फल है जो उन्नाव के बराबर होता है। इसका वृक्ष दो प्रकार का होता है, एक नर और दूसरा मादा। नर में फल नहीं होता। मादा की दो जातियाँ हैं, एक का फल उन्नाव के समान, सफेद रंग का और मीठा होता है और दूसरे का उन्नाव से बड़ा, लाल रंग का और मींगी से अलग होता है।

अनीली–[सं०] काँस। काशतृण।

अनीस कलिमरा–[ता०] ढेरा। अंकोट वृक्ष। अंकोल।

अनीसून–[अ०] हिंदी जंदनी। बादियान रूमी।

अनीसे–[ते०] अगस्त। वक वृक्ष।

अनुइट्ट्इ वेटिचल–[ता०] अम्लपर्णी। हरवल।

अनुकूलका–[सं०] }
अनुकूला–[सं०] } दंती। दंती वृक्ष। दारयूनी। दन्तुइन।
अनुकूलिनी–[सं०] }

अनुग–[सं०] सेवक। परिचारक।

अनुज–[सं०] पुंडेरी। प्रपौंडरिक।

अनुजा–[सं०] त्रायमान। त्रायमाणा।

अनुपान–[सं०] वह वस्तु जिसके साथ औषध सेवन की जाती है।

अनुपालु–[सं०] पानीआलु। पानीयालु। खोखड़ी।

अनुपुष्प–[सं०] भद्रमुंज। सरपत।

अनुबंधी–[सं०] १. हिक्का रोग। हिचकी। २. तृष्णा रोग। प्यास।

अनुभास–[सं०] कौआ। काक पक्षी।

अनुभूति–[सं०] निसोथ। त्रिवृत्त।

अनुमुलु–[ते०] बोरो। अंगुलीफला।

अनुरुहा–[सं०] नागरमोथा। नागरमुस्ता। नगरवथा।

अनुरेवती–[सं०] दंती। लघुदंती।

अनुलास–[सं०] } मोर । मयूर पक्षी ।
अनुलास्य–[सं०] }

अनुलोमन–[सं०] वह औषध जो अपक्व मल को पकावे और बँधे हुए मल को फोड़कर गुदा द्वारा नीचे को गिरावे अथवा मल-मूत्र की रुकावट को नष्ट करके अधोमार्ग से कोठे को शुद्ध कर दे। जैसे—हरीतकी ।

अनुवास–[सं०] स्नेह वस्तु । अनुवासन वस्तु ।

अनुवासन–[सं०] वस्तिक्रिया । गुदा के अंदर पिचकारी द्वारा औषध पहुँचाना ।

अनुवासनक–[सं०] } स्नेह वस्तु । अनुवास ।
अनुवासन वस्तु–[सं०] }

अनुशयी–[सं०] क्षुद्ररोग । फुंसी रोग । पाद रोग ।

अनुष्ण–[सं०] उत्पल । निशाफूल ।

अनुष्णवल्लिका–[सं०] १. उत्पल । निशाफूल । २. दूब नीली । नीली दूब ।

अनुष्णवल्ली–[सं०] दूब नीली । नीली दूबी । हरी दूब ।

अनुष्णवीज–[सं०] ईशबगोल । इशद्गोल । यशबगोल ।

अनुसार्य्यक–[सं०] छरीला । शैलेय । पत्थर का फूल ।

अनूप–[सं०] १. अनूप देश । सजल देश । २. भैंस । महिष ।

अनूपज–[सं०] अदरक । आर्द्रक । आदी ।

अनूप देश–[सं०] अनूप । सजल देश । वह देश जहाँ बहुत जल और अधिक वृक्ष हों और जहाँ के प्राणियों को वात कफ के रोग अधिक होते हों । जैसे–काश्मीर, तिब्बत, काबुल इत्यादि ।

अनूपमांस–[सं०] } अनूप देश के जीवों का मांस । जैसे–
अनूपमांस वर्ग–[सं०] } कुलेचर, प्लव, कोशस्थ, पादिन, मत्स्य, महिष आदि पशु, हंसादि पक्षी, शंखादि, मगर, घड़ियाल, मछली आदि जल-जीवों का मांस ।

अनूष्ण–[सं०] उत्पल । कमलभेद ।

अनृजु–[सं०] १. कचूर । शठी । २. तगर (फूल) । तगर-पुष्प । ३. तगर । कालानुसार्य्य ।

अनेकप–[सं०] हाथी । हस्ती ।

अनेजलंकु–[तु०] कसौंजा । कसौंदी । काशमर्द ।

अनेसू–[सं०] सौंफ । मिश्रेया ।

अनैककटरजहे–[ता०] रामबाँस । बाँस केवड़ा । रामबान ।

अनैत तिप्पिली–[मला०] गजपीपल । गजपिप्पली ।

अनोकह–[सं०] वृक्ष । पेड़ ।

अनोना–[सिंह०] कंघी । ककही । अतिबला ।

अनोर–[पश्तो०] अनार । दाड़िम ।

अन्न–[सं०] १. भात । भक्त । २. धान । धान्य ।

अन्नगंधि–[सं०] अतिसार रोग । दस्त की बीमारी ।

अन्नद्रव शूल–[सं०] } परिणामशूल रोग ।
अन्नद्रवाख्य–[सं०] }

अन्नभेदि–[द्रा०] कसीस । कासीस ।

अन्नमल–[सं०] १. विष्ठा । मैला । २. मदिरा । मद्य । दारू । शराब ।

अन्नाशय–[सं०] उदर । पेट ।

अन्नास–[हिं०] अनन्नास । बहु-नेत्रफल ।

अन्नेगलुगिड–[ता०] गोखरू भेद । खसके कबीर । फरीदबूटी ।

अन्यतोवात–[सं०] नेत्ररोग भेद ।

जब घाँटी, कान, सिर, ठोढ़ी और गरदन की नसों में अथवा अन्य स्थानों में स्थित वात भौंहों अथवा नेत्रों में पीड़ा उत्पन्न करता है, तब वह रोग अन्यतोवात कहा जाता है ।

अन्यपुष्ट–[सं०] कोयल । कोकिल पक्षी ।

अन्यभृत–[सं०] १. कौआ । काक पक्षी । २. कोयल । कोकिल पक्षी ।

अन्यलोह–[सं०] काँसा । कांस्यधातु ।

अन्या–[सं०] हरीतकी । हरड़ । हर्रे ।

अन्येद्युष–[सं०] } एकतरा ज्वर । विषम ज्वर रोग भेद ।
अन्येद्युष्क–[सं०] }

अन्वत–[सं०] १. मानिक । माणिक्य । चुन्नी । लाल । २. [अ०] अंगूर । अपक्व द्राक्षा ।

अपंग–[कोल०, सन्ता०] अर्कपुष्पी नं० २ । बनबेरी । अमरबेल ।

अपंगक–[सं०] आँगा । अपामार्ग । चिचड़ा ।

अप–[सं०] जल । पानी ।

अपक्वद्राक्षा–[सं०] अंगूर ।

अपच–[हिं०] } अजीर्ण रोग । बदहजमी ।
अपच्चर–[सं०] }

अपची–[सं०] गंडमाला भेद ।

यदि गंडमाला की गाँठ न पके या पकने पर उसमें से मवाद बहे, कोई कोई दब जाय और दूसरी नवीन उत्पन्न हो जाय तथा ऐसी पीड़ा अधिक दिनों तक रहे तो उसको अपची रोग कहते हैं । यह रोग साध्य है; किंतु यदि इसमें पीनस, पार्श्व शूल, खाँसी, ज्वर और छर्दि आदि उपद्रव हों तो असाध्य समझना चाहिए ।

इस रोग की नाशक औषधियाँ तथा उनकी प्रयोग-संख्या —असगंध नं० ७ । कलिहारी नं० ४ । बनकपास नं० १ । मधु नं० ६ । मुसब्बर नं० २० । लजालू नं० १० । सरसों नं० ७ । सहिंजन नं० ४५ ।

अपतंत्र–[सं०] } एक प्रकार की वात-व्याधि ।
अपतंत्रक–[सं०] }

अपतान–[सं०] } वातरोग भेद ।
अपतानक–[सं०] }

अपत्यजीव–[सं०] पितौंजिया । पुत्रजीव वृक्ष । जियापोता ।

अपत्यदा–[सं०] १. लक्ष्मणा । लछमना बूटी । २. पुत्रदा लता ।

अपत्यशत्रु-[सं०] **केकड़ा । कर्कट ।**

अपत्य सिञ्चिकृत-[सं०] पितौंजिया । पुत्रजीव वृक्ष । जियापोता ।

अपत्र-[सं०] करील । करीर ।

अपत्रवल्लिका-[सं०] पाताल गारुड़ी । महिषवल्ली । छिरेटा ।

अपद्रुहा-[सं०]
अपद्रोहिणी-[सं०] } बाँदा । वंदा । वंदाक ।

अपबाहुक-[सं०] वातरोग भेद ।

जिस रोग में स्कंध-स्थित वायु स्कंध देश की शिराओं को संकुचित कर दे, उसको अपबाहुक रोग कहते हैं ।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—उड़द नं० ५ । कौंछ नं० २० ।

अपमारगमु-[ते०] औंगा । अपामार्ग । चिचड़ा । लटजीरा ।

अपरस-[हिं०] क्षुद्ररोग भेद ।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—गधा नं० २ । चना नं० १७ ।

अपराजिता-१. विष्णुक्रांता । कोयल लता । २. जयंती । जैती । निर्गुंडी । शेफालिका । सिंधुआर । ३. शणपुष्पी । सनहुली । ४. शमी । छिकुर । ५. शंखिनी । यवेची । ६. हाऊ बेर । हपुषा भेद । ७. सरिवन । शालपर्णी ।

[सं०] अपराजिता । आस्फोता । गिरिकर्णी । विष्णुक्रांता । भूमिलग्ना । गवाक्षी । आदि । [हिं०] कोयल । काली जेर । विष्णु क्रांती । कावाठेठी । कौआ ठोंठी । [बं०] अपराजिता । [मु०] काजली । गोकरण । [ता०] कक्कनम । कोडी । [पं०] धनत्तर । धनंतर । [गु०] गरनी । गरानी । [ते०] गंदुना । दिनतन । दिनतान । तेल्ला । मेल्ला । तेल्ल दिनतान । निल दिनतान । [खा०] विष्णुकांती सोप्पु । किरगुस । गोकर्ण मूल । [मरा०] गोकर्णी । [क०] गिरिकर्णिके । [लै०] Clitoria Ternetea [अं०] Megerin.

लता जाति की यह वनौषधि नीले और सफेद फूलों के भेद से दो प्रकार की होती है । परंतु दोनों के लतापत्र एक समान होते हैं ।

अपराजिता नीली-[हिं०] नीली अपराजिता । कोयल । [सं०] नीलपुष्पी । महानीला । गिरिकर्णिका । विष्णुक्रांता इत्यादि । [बं०] नील अपराजिता । [मरा०] गोकर्णा काली । [गु०] गरणी । [पं०] कोयल । [ते०] छिंटेन वित्तु । नील गंटुना । [मा०] कोयली । [क०] कटने बल्लि । नीलगिरि कर्णिके । [द्रा०] करप्पुका क्ट्टान विरै । [अ०] माजरियून । [फा०] अशखीस ।

अपराजिता नीली, फूलों के भेद से दो प्रकार की होती है । एक के फूल इकहरे और दूसरी के दोहरे होते हैं । पत्ते बन-मूँग के पत्तों के समान पर उनसे कुछ बड़े और एक एक सींके पर पाँच अथवा सात रहते हैं । फूल सीप के समान आगे को गोलाकार, फैले हुए और डंठी की ओर सिकुड़े हुए नीले होते हैं । फूलों के बीच में डंठी की ओर स्त्री-योनि पुष्पाकार फूल होते हैं; इस कारण कहीं कहीं इसको "भगपुष्पी" अथवा "योनिपुष्पी" भी कहते हैं । इस पर मटर की फलियों के समान चिपटी फलियाँ लगती हैं जिनमें से उड़द के समान काले बीज निकलते हैं । इसकी लता प्रायः सभी प्रांतों में (फूलों और फलों सहित) वाटिकाओं को सुशोभित करती है । बरसात में इसकी बेल हरे भरे पत्र-पुष्पादि से युक्त दिखाई पड़ती है ।

गुण-दोष—कड़वी, स्निग्ध, शीतवीर्य्य तथा वात, पित्त, कफ, ज्वर, दाह, भ्रम, भूतबाधा, रक्तातिसार, उन्माद, मद, खाँसी, श्वास, कफ, कोढ़ और क्षय रोग का नाश करनेवाली है । इसके शेष गुण अपराजिता सफेद के समान हैं ।

इसका **अर्क**—कर्णशूल, सूजन, घाव और विषनाशक है ।

प्रयोग—१. इसकी जड़, पत्ते, रस और बीज औषधि के प्रयोग में आते हैं । जड़ रेचक और वमनकारक है; बीज ठंढे और विषघ्न होते हैं और सत्व पेट में काट तथा दस्त की शंका उत्पन्न करनेवाला है । २. प्लीहा और जलंधर पर किसी दूसरी रेचक और मूत्रजनक औषधि के साथ देना चाहिए । ३. २॥ से ५ रत्ती तक इसके सत्व का सेवन करने से दस्त होते हैं । ४. मूत्रकृच्छ्र और मूत्राशय के दाह में इसकी जड़ का प्रयोग किया जाता है । ५. आधा शीशी में बीजों का रस नाक में टपकाने से लाभ होता है । बीज और जड़ की नस्य लाभकारी है । जड़ को कान में बाँधने से भी फायदा होता है । ६. फफोले पर पत्तों का काढ़ा हितकारी है । ७. संधिवात पर जड़ का प्रयोग किया जाता है । ८. फोड़े-फुंसियों और पसीनेवाले ज्वर में पत्तों के रस में अदरक का रस मिलाकर देना चाहिए । ९. फेफड़े के रोग में ताजी जड़ या छाल के प्रयोग से लाभ होता है । इसका काढ़ा देना चाहिए । १०. कान की पीड़ा और आस पास की गाँठें मिटाने के लिये पत्तों के रस में नमक मिलाकर कान के चारों ओर लेप करने से लाभ होता है । ११. बीजों की अधिक मात्रा से कृमि रोग का नाश होता है । १२. गठिया में इसकी जड़ का काढ़ा देना चाहिए; इससे दस्त आते हैं । १३. सर्प-विष पर इसकी जड़ का प्रयोग किया जाता है । १४. परिणामशूल में जड़ के कल्क में मधु, घी और मिस्री मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है । १५. हिचकी में बीजों का चूर्ण चिलम में भरकर उसका धूम्र-पान करने से लाभ होता है । १६. अंडवृद्धि पर बीजों को महीन पीसकर गरम करके लेप करना चाहिए ।

अपराजिता सफेद-[हिं०] सफेद अपराजिता । सफेद कोयल । [सं०] श्वेतापराजिता । [मरा०] गोकर्णी सफेद । [पं०]
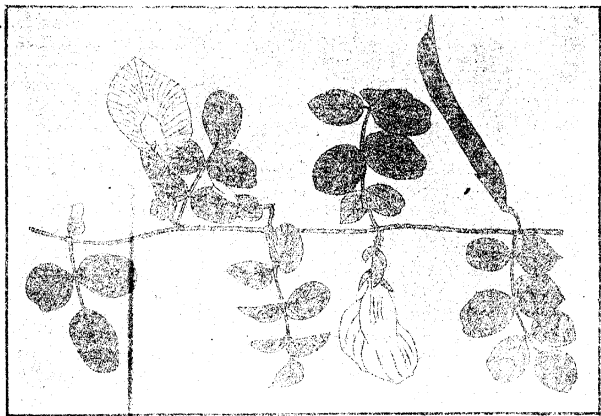
अपराजिता सफेद

सफेद कोयल। [क०] विलिय गिरि कर्णिके। [मग०] पांवरी सुपलो। [बं०] श्वेत अपराजिता।

अपराजिता सफेद की लता और पत्ते अपराजिता नीली के समान होते हैं। फलियां भी प्रायः वैसी ही होती हैं। बीज भूरे और धब्बेदार तथा स्वाद में कड़वे होते हैं। इसका फूल सफेद होता है। पुरानी लता में फूल किंचित् नीलापन लिए सफेद आते हैं।

गिरे हुए बीजों पर बरसात का पानी पड़ने से वे अंकुरित होकर लता रूप में बढ़ते हैं। इसके रोपण और रक्षा के लिये विशेष यत्न की आवश्यकता नहीं है, केवल लता के फैलने के लिये टट्टी बना देना उचित है।

गुण-दोष—शीतल, कड़वी, बुद्धि-वर्द्धक, नेत्रों को हित-कारी, कसैली, दस्तावर, विषनाशक तथा त्रिदोष, शिरशूल, दाह, कोढ़, शूल, आम, पित्तरोग, सूजन, कृमि, घाव, कफ ग्रहपीड़ा और सांप के विष का हरण करनेवाली है।

प्रयोग—१. इसकी जड़, पत्ते और रस का प्रयोग होता है। जड़ संस्रन, संशोधक तथा ज्वरादि में लाभकारी है। कोंकण में गले के रोग पर दो तोले जड़ का रस शीतल दूध में मिलाकर देते हैं। इससे वमन होता है। पीनस इत्यादि नासिका-रोगों में इसका रस नाक में फूँका जाता है।

जड़ की छाल का हिम या फांट स्निग्धकारक, संस्रन, संशो-धक तथा वस्ति और मूत्रनाली के दाह में लाभकारी है।

बीज मृदु रेचक होते हैं।

पत्तों का रस फोड़े सी पर लगाया जाता है। ज्वर में अधिक पसीना आने पर पत्तों के रस में अदरक का रस मिला-कर दिया जाता है। कर्ण पीड़ा में, विशेषकर जब कर्णमूल हो तब, इसके पत्ते के रस में नमक मिलाकर गरम करके कान के चारों ओर लेप करने से लाभ होता है। गिरता हुआ गर्भ रोकने के लिये इसको बकरी के दूध में पीस-छानकर और मधु में मिलाकर पान करने से लाभ होता है। २. स्नायु-पीड़ा पर जड़ को तेल या छाछ में पीसकर लेप करना चाहिए। ३. फोड़े पर इसको कांजी में पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ४. गलगंड रोग में जड़ को पीसकर घी के साथ सेवन करना हितकारी है। ५. कामला या कमल रोग पर जड़ का चूर्ण मठे के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ६. विषम-ज्वर (एकतरा) में पत्तों के रस का नस्य देना हितकारी है। ७. तिजारी में लाल सूत के ७ धागों से कमर में बांधने से लाभ होता है। ८. मुख की झाँई पर जड़ की भस्म को मक्खन में मिलाकर लेप करना चाहिए।

अपरिम्लान-[सं०] कटसरैया लाल। कुरवक। लाल फूल की पियावासा।

अपर्वदंड-[सं०] भद्रमुंज। सरपत।

अपविषा-[सं०] निर्विषी। निर्विष तृण।

अपशोक-[सं०] अशोक वृक्ष।

अपस्तंभिनी-[सं०] शिवलिंगी। लिंगिनी लता। पँचगुरिया।

अपस्मार-[सं०] मृगी। मिरगी। [अ०] सरआ। [अं०] Epilepsy.

जिस रोग में दुष्ट दोषों के द्वारा ज्ञान और स्मरण शक्ति का नाश हो जाता है, उसको अपस्मार कहते हैं। चिंता, शोकादि से कुपित वात, पित्त, कफ, हृदय की नसों में पहुँच कर स्मरण शक्ति का नाश कर देते हैं। हृदय कांपता, शरीर शून्य हो जाता, पसीना निकलता, ध्यान लग जाता, मूर्च्छा आती, निद्रा का अभाव और ज्ञान का नाश हो जाता है, चारों ओर अंधकार सा जान पड़ता है, हाथ, पैर तथा सब अंग कांपने लगते हैं और रोगी मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ता है और उसके मुख से झाग आता है।

यह भयंकर रोग वातज, पित्तज, कफज और सान्निपातिक इन भेदों से चार प्रकार का होता है।

इस रोग की नाशक औषधियां और उनकी प्रयोग-संख्या—अकरकरा नं० ४, ५, ३४। आक लाल नं० ७, ८। इनारू नं० २१। कंटकारी नं० १३, २२, २६। कड़ुआ नं० २, ४। कलपनाथ। कस्तूरी नं० ५। कांदर नं० १। कायफल नं० २३। केवड़ा नं० ५। गावजवां नं० ३। घीकुवार नं० ३७। जमालगोटा नं० ३। जल-नीम नं० १२। जायफल नं० २२। झिंगनी नं० १४। ढाक नं० १२। ढाक के बीज नं० ५। तेल नं० ७। धतूरा काला नं० २३। धतूरा सफेद नं० ३, १०। नकछिकनी नं० ६। नगदी सफेद नं० १। नागरमोथा नं० ६। नील नं० २। प्याज नं० ५३। प्याज के बीज नं० १। पीपल (वृक्ष) नं० ३। पीपल (ओषधि) नं० ७, १६। पेऊ नं० ६। पेठा नं० १४, २३। बच नं० ३, ३३। बनफशा नं० १। ब्राह्मी नं० १०, १५। बांझ खेखसा नं० ६। महुआ नं० १४। मुंडी नं० ५०। मुलेठी नं० १८। मूँगफली नं० ५। मूत नं० २। मूसाकानी नं० १५। मोमियाई नं० ३। रतनजोत नं० २। रांगा नं० ३०। राई नं० १०। रीठा नं० १६, १८, १६, २३। रीठा करंज नं० ४। शंख नं० ७। शिलाजीत नं० ४३। संखाहुली नं० १२। सतावर नं० १५। समुद्रफल नं० ४०, ६१, ६२। शरीफा नं० ५। सदर्देई नं० १५। सहिंजन नं० १४। हरताल नं० १०, १४। हाथी शुंडी नं० ६। हींग नं० ७।

अपांग-[बं०] [आसा०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा। [सं०] नेत्रांत। आँख का कोना।

अपांगक-[सं०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

अपांपित्त-[सं०] चीता। चित्रक।

अपाक-[सं०] १. अजीर्ण। अन्न का न पचना। अपच। २.

अपक। बिना पका हुआ।

अपाक शाक–[सं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

अपान–[सं०] १. मलद्वार। गुदा। २. गुह्य वायु। मलद्वार की हवा। पाद।

अपामां–[ने०]
अपामार्ग–[सं०] } ओंगा। चिचड़ा। लटजीरा।

अपामार्ग जटा–[सं०] ओंगे की जड़। चिचड़े की जड़।

अपामार्ग तंडुल–[सं०]
अपामार्ग बीज–[सं०] } ओंगे के बीज। चिचड़े के बीज।

अपावे–[ते०] केसर। कुंकुम। जाफरान।

अपीनस–[सं०] पीनस रोग।

अपुच्छा–[सं०] शीशम। शिंशपा वृक्ष।

अपुठ कंडा–[पं०]
अपुठ कांटा–[पं०] } ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

अपुर्ज–[बेलु०] हाऊबेर। हपुषा।

अपुष्प–[सं०] गूलर। उदुंबर।

अपुष्पफलद–[सं०] १. कटहल। पनस। २. परवल कड़वा। कटु पटोल।

अपू–[मरा०] अफीम। अहिफेन।

अपूप–[सं०] पूआ। पिष्टक।

अपूप्य–[सं०] गेहूँ। गोधूम चूर्ण। आटा। मैदा।

अपूरणी–[सं०] १. कपास। कार्पास वृक्ष। २. सेमल। शाल्मली वृक्ष।

अपेक–[सं०] धमासा। दुरालभा। हिंगुआ।

अपेत–[सं०] तुलसी। सुरसा।

अपेत राक्षसी–[सं०] तुलसी। सुरसा।

अपोक–[सं०] अफीम। अहिफेन।

अप्र–[सं०]
अप्रस–[सं०] } जल। पानी।

अप्पित–[सं०] चीता। चित्रक।

अप्पु–[ता०] पादर नं० २। पाटला।

अप्पल–[मला०] अरनी। अग्निमंथ।

अप्रकृष्ट–[सं०] कौआ। काक पक्षी।

अप्रिय–[मरा०] बेंत। वेतस।

अप्रिया–[सं०] सिंगी मछली। शृंगी मत्स्य। सिंघी मछली।

अप्रेत राक्षसी–[सं०] तुलसी। सुरसा।

अप्रोट–[सं०] लवा। भरद्वाज पक्षी।

अफकुर–[सिं०] नकछिकनी नं० १। छिकनी।

अफतिमून–[अ०] अमरबेल। आकाशवल्ली।

अफतीमून–[?] अमरबेल नं० १। आकाशबेल।

अफयून–[फा०]
अफयून तिर्याक–[फा०] } अफीम। अहिफेन।

अफल–[सं०] फाऊ। फावुक।

अफलककोड़ा–[हिं०]
अफलककोरा–[हिं०] } बांझ खेखसा। वंध्या कर्कोटकी। बनककोड़ा।

अफला–[सं०] १. भुईं आंवला। भूम्यामलकी। २. आंवला। आमलकी। ३. करेली। कारवेली। ४. घीकुवार। घृतकुमारी।

अफसंतीन–[फा०] [अ०] १. दौना नं० ३। दौना। २. [अ०] अफसंतीन। [फा०] बरंजासिफकोही। [हिं०] मरुआ। मुस्तरु। [बं०] नामुटी। [ता०] मशी पत्तिरी। [खा०] दौना। [मला०] नेलम्पल। [ते०] सवी। [लै०] Grangea Maderaspatana. Syn: Arternisia Maderaspatana.

कुछ विद्वानों की सम्मति है कि 'दौना' और 'अफसंतीन' एक ही औषधि है। दौने को 'अफसंतीन दौना' कहा जा सकता है, किंतु दोनों एक ही वस्तु नहीं हैं। दौने की अनेक जातियाँ हैं। इनमें से तीन प्रकार का दौना इस ग्रंथ में दिखलाया गया है। 'अफसंतीन' दौने का एक भेद है।

'अफसंतीन' भारतवर्ष के प्रायः सब प्रांतों में, पंजाब से पूर्वीय भारत तक, पाया जाता है। इसका क्षुप प्रायः वर्ष-जीवी होता है। यह शाखा-प्रशाखाओं से सघन होता है। इसकी शाखाएँ बीच से फैलनेवाली एवं पसरनेवाली, ६ से १२ इंच तक लंबी रोएँदार होती हैं। कलियाँ ऊनी सफेद रंग की होती हैं। पत्ते सघन, अनेक १॥ से २॥ इंच लंबे, बीच-बीच में कटे हुए, जड़ की ओर छोटे दलवाले और फुनगी की ओर बड़े दलवाले होते हैं। फूलों में घुंडी रहती है जो चिपटी गोलाकार पीले रंग की होती है।

गुण-दोष—पत्ते का हिम या फांट स्निग्ध और अग्नि-प्रदीपक है। इसका चूर्ण मधु या चीनी के साथ रुके हुए ऋतु-स्राव और योषापस्मार (हिस्टीरिया) में गुणकारी है। कभी कभी पीड़ा में इससे सेंक किया जाता है। कर्ण-पीड़ा पर पत्ते का रस कान में टपकाते हैं।

अफसंतीन-उल्-बहर–[अ०, फा०] १. खुरासानी अजमोदा। पारसीक अजमोदा। २. सीह। सरिकूँ। [गु०] परदेशी दवनो। [मरा०] दवना। [लै०] Artemesia Persica.

यह भी एक प्रकार का दौना है जो अफगानिस्तान और पश्चिमी तिब्बत में पाया जाता है।

यह क्षुप जाति की वनौषधि है। इसका क्षुप लंबा और सीधा होता है तथा वर्षों जीवित रहता है। डंठल ३-४ फुट ऊँचा और किंचित् टेढ़ा सा होता है। यह सूक्ष्म रोएँदार एवं सफेद मखमली रूई से भरा रहता है। शाखें लंबी और तिरछी होती हैं। पत्ते छोटे छोटे, किंचित् अंडाकार और
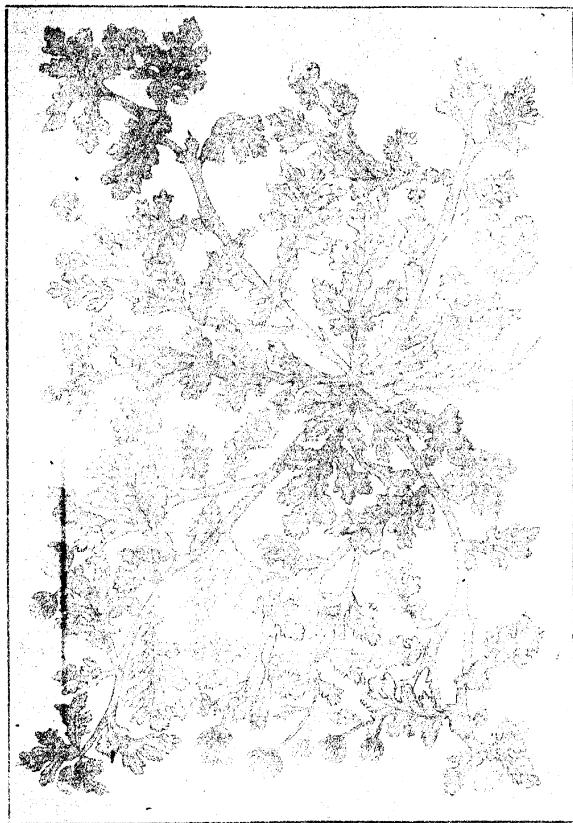
अफसतीन

कटे हुए रहते हैं। पीले फूलों की अनेक घुंडियाँ लगती हैं जो इंच के षष्ठांश के घेरे में गोलाकार होती हैं।

गुण—यह बलकारी, कृमिघ्न तथा ज्वरनाशक है।

अफसंतीन विलायती–[हिं०] [द०] विलायती अफसंतीन। [लै०] Artemesia Absinthium. Syn: Absinthium Vulgare. Absinthium Officinale. [अं०] The Absinthe Worm wood.

यह विलायती दौना काश्मीर में पाया जाता है। इसका क्षुप दीर्घजीवी, रेशमी रोएँदार और मसालेदार होता है। शाखें एक से तीन फुट तक लंबी और सीधी होती हैं। पत्ते गुलदावदी के समान कटे हुए १–२ इंच के घेरे में कई भागों में विभक्त रहते हैं। सब भाग कटे हुए अनीदार होते हैं और उन पर सूक्ष्म कोमल रोएँ होते हैं। फूलों की अनेक घुंडियाँ चौथाई से तिहाई इंच तक गोल होती हैं और फूल पीले रंग के होते हैं।

इसका पंचांग औषधि-प्रयोग में आता है। काढ़ा, हिम, फांट और पुल्टिस बनाया जाता है।

गुण—इसका समस्त क्षुप बलकारी होता है और जठराग्नि की निर्बलता को दूर करनेवाला है। यह कृमिघ्न है और विषम ज्वर में व्यवहृत होता है।

इसका असर स्नायु-जाल पर तीव्रता से पड़ता है। काश्मीर और लद्दाख में इसका सघन जंगल होता है। इन जंगलों से जानेवाले पथिकों को प्राय: शिर-पीड़ा और स्नायु-पीड़ा उत्पन्न हो जाया करती है।

भभके के द्वारा इससे तेल निकाला जाता है जो हरे या पीले रंग का होता है। क्षुप की गंध के समान इसमें तीव्र गंध आती है और इसका स्वाद चरपरा होता है। अधिक मात्रा में यह विष का काम करता है।

अफस–[अ०] माजूफल। मायाफल।

अफसुर्दह नैशकर–[फा०] ईख का रस। इक्षु रस।

अफसुर्दह मुकव्विमनेशर–[अ०] राब। फाणित। अर्द्धावर्त्तितेक्षुरस।

अफिनि–[द्रा०]
अफिमा–[बं०]
अफियून–[अ०]
अफीण–[गु०]
} अफीम। अहिफेन। अफ्यून।

अफीण ना डोडवा–[गु०] पोस्त। खसखस। पोस्तदाने का वृक्ष।

अफीम–[हिं०] अफयून। अमल। [सं०] अहिफेन। अफेन। खसखस रस। निफेन। आफूक। अहिफेनक इत्यादि। [बं०] आफू। आफिन। आफिम। [मरा०] अपू। अफु। अफू। [मला०] आफन। [मा०] अफीम। आफु अमल। [गु०] अफीण। अफीन। [पं०] इफीम। [ते०] नलमंदु। नलमंदु। [क०] अफिनि। [द्रा०] अफिनि। [फा०] अफ्यून। [अ०] लबनुल खसखास। [अं०] White Poppy Opium. [लै०] Papaver Somniferum.

जिस वृक्ष से अफीम उत्पन्न की जाती है, उसका विवरण "पोस्तदाना" के अंतर्गत लिखा गया है। डंठी के ऊपर जो फल लगता है, उसको पोस्त तथा पोस्त का डोडा कहते हैं। इसी से अफीम निकाली जाती है। प्रायः माघ के महीने में फूल लगते हैं और फूलने के दो हफ्ते बाद पोस्त के डोडे अफीम निकालने के लायक बड़े हो जाते हैं। फूल जमीन पर गिर जाते हैं। उन्हें इकट्ठा कर मिट्टी के खपड़े गरम कर उनमें इन फूलों की रोटी बनाकर अफीम बाँधने के लिये रख छोड़ते हैं। शाम को या प्रातःकाल डोडों के चौतरफा लंबी आकृति का चीरा करते हैं। चीरने के बाद उन डोडों से सफेद दूध के समान एक प्रकार का गोंद निकलकर जम जाता है। पर धूप में चीरा देने से दूध बाहर नहीं निकलता। चीरा देने के दूसरे दिन प्रातःकाल लोहे के चमचे से उस गोंद को उठा लेते हैं। इसी प्रकार तीन-चार दिन के अंतर पर चीरा करते हैं और गोंद खुरचकर निकाला करते हैं।

इस प्रकार अफीम इकट्ठी करके काँसे की थाली में रख देते हैं। कुछ देर के बाद उससे जल निकलता है। उस जल को न निकालने से अफीम खराब हो जाती है। जब एक महीने में यह गाढ़ी हो जाती है, तब मिट्टी के पात्र में रख देते हैं। अफीम गवर्नमेंट का "एकाधिकारी व्यवसाय" है, इसलिये यह सरकारी गोदाम में जमा की जाती है। वहाँ इसे "वारकोस" में डाल, गरम कर, डली बाँध उसके ऊपर फूलों की रोटी लपेट निकृष्ट अफीम से तैयार की हुई लेई लगा देते हैं।

सरकारी अफीम, जिस पर मोहर लगी होती है, तीन प्रकार की होती है। पहली वह जो बंगाल और बिहार प्रांत में होती है। उसे "पटना अफीम" कहते हैं। दूसरी युक्तप्रांतवाली को "बनारसी अफीम" और तीसरी मध्य प्रदेश और राजपूताने में उत्पन्न होनेवाली अफीम को "मालवा अफीम" कहते हैं। उपर्युक्त अफीम चीन देश में भेजी जाती है; क्योंकि वहाँ के नर, नारी, बालक, वृद्ध सभी इसके व्यसन में फँसे हुए हैं। परंतु अब वहाँ की गवर्नमेंट इस व्यसन को दूर करने की अधिक चेष्टा कर रही है; इसी से यहाँ इसकी खेती कम होने लगी है और कई सरकारी गोदाम भी तोड़ दिए गए हैं।

अफीम बहुधा मिलावटी होती है। इसका वजन बढ़ाने के लिये धूर्त लोग पोस्तदाने के पत्ते तथा अनेक वस्तुएँ मिला देते हैं जिससे औषधि के काम के लिए यह अनुपयोगी हो जाती है,

इसलिये वैद्यों को परीक्षा करके व्यवहार करना चाहिए। स्वच्छ अफ़ीम की गंध बहुत तीव्र होती है। इसका स्वाद बहुत कड़ुवा होता है। इसका टुकड़ा चीरने से भीतर का भाग चमकदार और मुलायम होता है, पानी में डालने से जल्दी पिघलकर पानी में मिल जाता है, धूप में रखने से जल्दी पिघलने लगता है, अग्नि पर डालने से जलने लगता है पर कोयला नहीं बनता। जलते समय इसकी ज्वाला स्वच्छ निकलती है, मल या धूआँ विशेष नहीं होता और बुझाने से अत्यंत तीव्र और मादक गंध निकलती है। स्वच्छ अफीम को ५-१० मिनट सूँघने से नींद आ जाती है।

कहते हैं कि अफीम भारतवर्ष की चीज नहीं है, यूनान या रूस से अरब में आई; अरब से ईरान में, ईरान से अफगानिस्तान में और वहाँ से हिंदुस्तान में आई; और अब इसकी खेती चीन में भी होने लगी है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—शोषणकारी, धारक, मदकारक, मस्तिष्क को उत्तेजक, पीड़ा-निवारक, निद्राकारक, स्वेदजनक, कफनाशक, वातवर्द्धक, पित्तकारक, आक्षेपनाशक, वीर्यवर्द्धक, स्तम्भनकारी, आनन्ददात्री तथा मूत्रातिसार, अतिसार, खाँसी, श्वास, रुधिर-स्राव, कृमि, पांडु, क्षय, प्रमेह और प्लीहा का नाश करनेवाली है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—चौथे दर्जे में ठंढी और रूक्ष, वद्धक, रुद्धक, शिथिलताकारक, निद्रा उत्पन्न करनेवाली, शोथनाशक, संपूर्ण पीड़ाओं में शांति-कारक, शीघ्र पतन को हितकारी तथा नजला, कफ, कास, कर्णपीड़ा और नेत्ररोग में खाने अथवा लगाने से गुणकारी है। बाह्य और आन्तरिक स्नायुओं को हानिकारक है।

दर्पनाशक—केसर और दालचीनी।

प्रतिनिधि—खुरासानी अजवायन।

मात्रा—चौथाई से एक रत्ती।

प्रयोग—१. सफेद रंग की अफीम को "जारण" कहते हैं, क्योंकि यह अंत को जीर्ण करती है। काले रंग की "मारण" कहलाती है, क्योंकि यह मृत्यु लानेवाली है। पीले रंग की "धारण" कहलाती है, क्योंकि यह जरा का नाश करती है; और चित्र रंगवाली अफीम को "सारण" कहते हैं, क्योंकि वह मल का सारण करती है।

इसको शुद्ध करके खाने के काम में लाना चाहिए। अदरक के रस में २१ बार भावना देने पर यह शुद्ध औषधियों के योग में खाने लायक हो जाती है। लेप में शुद्ध करने की आवश्यकता नहीं रहती। बालकों और स्त्रियों को अफीम मिली हुई औषधि देना अनुचित है। यदि आवश्यक ही हो तो स्त्रियों को बहुत सावधानी से दी जा सकती है; परन्तु बालकों को किसी हालत में न देना ही उचित है।

अफीम की मात्रा बहुत कम होनी चाहिए, अधिक मात्रा से मरण होता है। कम से कम २ रत्ती से मृत्यु हो सकती है। अधिक मात्रा से पहले नींद सी मालूम होती है, फिर चक्कर आता है, जी घबराता है, शिथिलता उत्पन्न होती है, मूर्च्छा होकर बोलचाल बंद हो जाती है, नाड़ी भारी होकर धीमी, मन्द और अनियमित चलती अथवा जल्दी जल्दी चलती है, श्वास तेजी से चलने लगता, दम घुटता, शरीर किंचित् गरम हो जाता, पसीना आने लगता, आँखें बंद होतीं, पुतलियाँ सिकुड़ने लगतीं और चेहरा फीका पड़ जाता है। इस अवस्था तक रोगी की चिकित्सा हो सकती है। किन्तु इसके आगे कष्ट-साध्य और असाध्य है। होंठ, जिह्वा, नाखून और हाथ काले पड़ जाते, मलावरोध होकर पेट फूलता, शरीर ठंढा होने लगता, सिकुड़ी हुई आँख की पुतली फैलने लगती, नाड़ी मन्द और निर्बल हो जाती है। हाथ-पैरों की स्नायु शिथिल होने लगती हैं और अंत में श्वास की नली सिकुड़कर श्वास की गति को रोक देती है। खर्राटे से श्वास लेता हुआ रोगी प्राण त्याग देता है। इसके विष का प्रभाव एक घंटे के अंदर जान पड़ने लगता है और प्रायः २४ घंटे के अंदर यह मार डालती है।

अफीम की बहुत अधिक मात्रा आत्मघात के लिये खाने से वमन होकर प्रायः निकल जाती है और कभी कभी वातरोग, खींचतान, प्रलाप, वमन, दस्त, धनुस्तम्भ इत्यादि अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

२. कोमल अंग के शोथ में इसको रसकपूर और सुरमे के साथ पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ३. हाथों की वातज पीड़ा में इसको गरम कर लेप करना चाहिए। धनुस्तंभ, गठिया, प्रलाप आदि में इसका सेवन करना लाभकारी है। ४. स्नायु-संबंधी और वातज पीड़ा पर लेप करना उचित है। ५. दंत पीड़ा में इसको नौसादर के साथ पीसकर दाँतों के छेद में रखने से लाभ होता है। ६. शिरपीड़ा (सर्दी) में ४ रत्ती अफीम, २ लौंग के साथ पीसकर लेप करने से पीड़ा दूर होती है। ७. नाड़ीव्रण पर अफीम और हुक्के की कीट की बत्ती बनाकर देना चाहिए। ८. सर्दी में थोड़ी मात्रा में देने से लाभ होता है। ९. कर्णपीड़ा में इसकी ४ चावल भस्म गुलरोगन में मिलाकर कान में डालने से पीड़ा का नाश होता है। १०. नकसीर में अफीम और कुंदुरु सम भाग पानी में पीसकर नास लेने से लाभ होता है। ११. स्तंभनकारी औषधियों में इसको डालने से शीघ्रपतन नहीं होता। १२. हौलदिल (गर्मी से उत्पन्न होने पर) में इसकी बहुत थोड़ी मात्रा से लाभ होता है। १३. खुजली पर इसको तिल के तेल और मोम में मिलाकर मर्दन करने से लाभ होता है। १४. जीर्ण ज्वर में इसको सुरमे और कपूर के साथ पीसकर देना चाहिए। बाइँटे में इसका उपयोग लाभकारी होता है। १५. निद्रा लाने के लिये इसका

अफसंतीन उल-बहर

अफसंतीन विलायती

पृ० ५६]
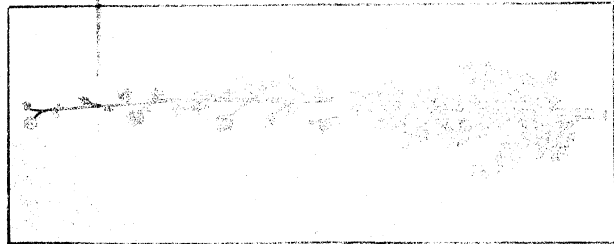
प्रयोग किया जाता है। १६. पक्कातिसार में इसको सेंककर खिलाने से लाभ होता है। १७. अतिसार और अजीर्ण में सम भाग अफीम और केसर की गुंजा प्रमाण बनी हुई गोली मधु के साथ सेवन करने से अथवा बकरी के दूध में घोलकर पीने से फायदा होता है। १८. प्रबल अजीर्ण में नारियल के टुकड़े में छेद कर दो गुंजा अफीम भर आग पर पकाकर खिलाने से लाभ होता है। १९. सर्दी-जुकाम पर इसको घोल, कागज पर लेपकर बीड़ी बनाकर धूम्रपान करने से फायदा होता है। २०. अधिक पसीना आने पर इसकी थोड़ी मात्रा गुणकारी है। २१. अतिसार में इसको प्याज के रस में मिलाकर सेवन करना चाहिए। २२. नहरुए पर साँप की केंचली और अफीम की टिकिया बनाकर चिपकाने से लाभ होता है। २३. नासूर पर मनुष्य के नाखून की राख में दो-ढाई रत्ती अफीम मिलाकर गोलियाँ बनाकर सेवन करना हितकारी है। २४. बहुमूत्र पर अफीम और जावित्री सम भाग, कपूर और कस्तूरी अफीम से आधा आधा भाग खरल कर गुंजा प्रमाण पान के रस में सेवन करने से फायदा होता है। २५. आमातिसार और रक्तातिसार पर नींबू के रस में मिलाकर दूध में डालकर पीना चाहिए। अफीम, शुद्ध कुचले का चूर्ण और सफेद मिर्च सम भाग, अदरक के रस में घोंटकर एक एक रत्ती की गोली बनाकर सोंठ के चूर्ण और गुड़ के साथ देने से लाभ होता है। २६. आमातिसार और विशूचिका में सम भाग अफीम, जायफल, केसर और कपूर को खरलकर दो दो रत्ती की गोलियाँ बनाकर जल के साथ सेवन करना गुणकारी है। २७. संग्रहणी, आमातिसार और रक्तातिसार पर अफीम दो भाग, जायफल, आग पर फुलाया हुआ सुहागा, अभ्रक भस्म और शुद्ध धतूरे के बीज प्रत्येक एक भाग, सबको गंधप्रसारिणी के पत्तों के रस में खरल कर, गुंजा समान गोलियाँ बनाकर मधु के साथ देने से फायदा होता है। २८. संग्रहणी, विषमज्वर, सूजन, अग्निमांद्य और पांडु रोग पर अफीम और वत्सनाभ विष प्रत्येक तीन तीन माशे, लोहे का भस्म दश रत्ती और अबरक भस्म १२ रत्ती, दूध में घोंट एक एक रत्ती की गोलियाँ बनाकर दूध के साथ सेवन करना चाहिए। किंतु इसको सेवन करने तक जल का त्याग करके खाने पीने के लिये दूध ही का व्यवहार करना चाहिए। २९. शीघ्रपतन निवारण और वीर्य्य-स्तंभन के लिये जायफल में बड़ा छेद कर, अफीम भर, मुख मूँद कर, गूलर, बड़ अथवा बबूल के वृक्ष में छेद करके उसमें उक्त जायफल को रखकर बाहर से मुख बंद कर दे। फिर कुछ दिनों के बाद अफीम निकाल, गोलियाँ बना चीनी में मिलाकर दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ३०. केश न उगने के लिये इसको ईशबगोल के लुआब में मिलाकर लगाना चाहिए। ३१. अफीम के विष के निवारण का उपाय—इसका शत्रु हींग है। यदि इसकी डिबिया में हींग का टुकड़ा रख दे तो यह नि-सत्त्व हो जाती है। हींग को पानी अथवा छाछ में घोलकर पिलाने से विष उतर आता है। मैनफल, सेंधा नमक और पीपल, नीम का काढ़ा, तमाखू का काढ़ा, घी और नमक, राई को पानी में पीस, इनमें किसी एक के व्यवहार से वमन कराना उचित है। घी में सुहागा और नीला थोथा अथवा केवल सुहागा घी में मिलाकर खिलाने से वमन होकर प्रायः अफीम निकल जाती है। फिटकिरी और बिनौले का चूर्ण खिलाना हितकारी है। मालकंगनी के पत्तों का रस अफीम के विष का नाश करनेवाला है। बच और सेंधा नमक खिलाने से लाभ होता है। नींबू के बीच में भूना हुआ नीला थोथा डालकर चूसना चाहिए। चौलाई की जड़ को बारीक पीसकर पानी में घोलकर पिलाने से लाभ होता है। मकोय के पत्तों का रस पिलाना हितकारी है। इमली के पत्तों का रस पिलाना भी गुणकारी है। शरीफे के बीजों की गिरी पानी में पीसकर पान करने से लाभ होता है। किसी प्रकार वमन करा घी और बकरी अथवा गाय के दूध में किंचित् पानी मिलाकर पिलाना आरंभ करे। जहर रहने तक यह पेट में नहीं ठहरता, वमन हो जाया करता है। जब तक यह पेट में न ठहर जाय, तब तक थोड़ा थोड़ा पिलाते जायँ, सोने न दें और टहलाते रहें।

अफीम का दूसरा शत्रु रीठा है। पाव भर अफीम में ५-७ बूँद रीठे का जल छोड़ देने से अफीम सत्त्वहीन हो जाती है, अतएव रीठे का जल बनाकर पिलाना चाहिए। अथवा करेमू के शाक का रस निचोड़कर पिलाने से अफीम द्वारा प्राणत्याग करता हुआ मनुष्य भी मरने से बच जाता है।

अफीम-विषनाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अखरोट नं० ११। अरहर नं० ६। आंवला नं० ४८। एरंड नं० ३, १४, ३६। कपास के बीज नं० ९। कपास बागी नं० ६। कलंबा (करेमू) नं० २। कागज नं० २। केले का पानी नं० ४। गूमा नं० ६। घृत नं० २। जिंगनी नं० ८। तमाखू नं० ६। तूतिया नं० ७। तेजपत्ता नं० ३। धामिन नं० २। नीम नं० २०। पातालगारुड़ी नं० ८। मकोय सब्ज नं० १६। सुगंधबाला नं० ८। सेब नं० ३। हींग नं० २।

अफु-[मरा०]
अफूकड़रो-[मरा०] } अफीम। अहिफेन।

अफूचें बोंड-[मरा०] पोस्तदाने का वृक्ष।

अफू-[मरा०]
अफूक-[मरा०]
अफूकड़रो-[मरा०] } अफीम। अहिफेन।

अफून–[मरा०] } अफीम । अहिफेन ।
अफेन–[सं०] }
अफेनफल–[सं०] पोस्त । खसफल ।
अफेल–[सं०] अफीम । अहिफेन ।
अफोत रक्तार्क–[सं०] आक लाल । रक्तार्क । लाल मदार ।
अफ़्तीमून–[फा०] अमरबेल । आकाशवल्ली । अमरलता ।
अफयून–[यू०] अफीम । अहिफेन ।
अफलातान–[अ०] गूगल । गुग्गुलु ।
अब-उल-आस–[अ०] हब्बुलास । मोरद ।
अब-उल-नील–[लि०] काला दाना । कृष्णबीज । मिरचाई बेल ।
अबकर–[अ०] } शोरा । सूर्य्यक्षार ।
अबकेर–[अ०] }
अबनुसु झाड़–[क०, ते०] तेंदू । तिंदुक ।
अबरक–[हिं०] अबरख । [सं०] अभ्र । अभ्रक । गिरिजाबीज । निर्मल । घन इत्यादि । [बं०] अभ्र । आव । [गु०] अभरख । [मरा०, क०] अभ्रक । [ते०] अभ्रकं । [ते०] अभ्रकमु । [मा०] भोडल । [फा०] सिताराजमीं । सितारा़ज़मीन । सितारये ज़मीन । [अ०] तल्क । तलूक । [लै०] Talc, Mica. [अं०] Talc Glimmer.

जाति के भेद से अबरक चार प्रकार का होता है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । इनमें से ब्राह्मण अबरक सफेद रंग का, क्षत्रिय लाल रंग का, वैश्य पीले रंग का और शूद्र अबरक काले रंग का होता है । चाँदी के बनाने में सफेद अबरक, रसायन-कार्य्य में लाल, सोने के बनाने में पीला और रोगों में तथा ऐश्वर्य्य के लिये काला अबरक लेना चाहिए । पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र इन भेदों से अबरक चार प्रकार का होता है । इनमें से वज्र के सिवा शेष तीन प्रकार के अबरक औषधि-प्रयोग में लेना अनुचित है । पिनाक अबरक अग्नि में डालने से परत परत हो जाता है और इसके खाने से महाकुष्ठ रोग उत्पन्न होता है । दर्दुर नाम का अबरक आग में पड़ने पर मेंढक के समान शब्द करता है तथा गोलाकार हो जाता है । इसके खाने से मृत्यु होती है । नाग नाम का अबरक अग्नि में पड़ने से फुंकार करता है । इसके खाने से भगंदर रोग उत्पन्न होता है । चौथा वज्र नामवाला अबरक अग्नि में डालने से वज्र के समान ज्यों का त्यों रहता है और विकार को प्राप्त नहीं होता । यह वज्र नाम का अबरक सब प्रकार के अबरकों में उत्तम होने के कारण सब प्रकार के रोगों, वृद्धावस्था और मृत्यु को हरनेवाला है । उत्तर देश के पर्वतों में उत्पन्न हुआ अबरक अत्यंत सत्त्ववान् और गुणकारक होता है तथा दक्षिण देश के पर्वतों से उत्पन्न अबरक अल्प सत्त्वयुक्त और न्यून गुणवाला होता है ।

कहते हैं कि जब इंद्रदेव ने वृत्रासुर के मारने को वज्र उठाया था, तब वज्र में से चिनगारियाँ निकलकर आकाशमंडल में फैल गईं और गरजते हुए बादलों से निकलकर जिन जिन पर्वतों के शृंगों पर गिरीं, उन्हीं पर्वतों में अबरक उत्पन्न हुआ । वज्र से उत्पन्न होने के कारण इसको वज्र कहते हैं, बादलों के शब्द से उत्पन्न होने के कारण अभ्रक कहते हैं और आकाश से गिरने के कारण गगन कहते हैं ।

आजकल पिनाक नामवाला अबरक बहुत मिलता है । इसी में से वैद्य लोग चुनकर भस्म करते और व्यवहार में लाते हैं । इससे किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होते हुए देखा भी नहीं गया । भस्म अच्छा होना चाहिए, किंतु गुणों में बहुत हीन गुणवाला होता है । वज्र नामवाला काला अबरक भी कहीं कहीं मिलने लगा है । इसको मैंने घंटों धधकती हुई अग्नि में रखा, किंतु किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होते हुए नहीं पाया । इसके पत्रों का चूर्ण भी सहज में नहीं होता । यह कज्जल के समान काला होता है तथा इसका भस्म रक्त वर्ण का होता है । एक अबरक श्याम वर्ण या भूरापन लिए काले रंग का और सफेद अबरक के समान पत्रवाला होता है । इसका भस्म गुलाबी रंग का होता है ।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष–मधुर, कसैला, शीतल, धातुवर्द्धक, आयु को बढ़ानेवाला तथा त्रिदोष, घाव, प्रमेह, कोढ़, प्लीहा, उदर रोग, ग्रंथि, विष-विकार और कृमि रोग का नाश करनेवाला है ।

यथाविधि पूर्ण रूप से मरा हुआ अबरक सकल रोगनाशक, शरीर को दृढ़ करनेवाला, वीर्य्यवर्द्धक, आयुवर्द्धक, कोमलताजनक, स्त्री-संभोग-शक्तिवर्द्धक, पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करनेवाला और अकालमृत्यु-नाशक है ।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–दूसरे दर्जे में ठंढा और तीसरे में रूक्ष है । रक्तातिसार, यकृत्-संबंधी अतिसार तथा मुख के रुधिर-स्राव में यथानुपान सेवन करना गुणकारी है । वृक्क (गुर्दा) और वस्ति की पथरी को तोड़नेवाला है । पर केवल इसी का सेवन करना यथेष्ट नहीं है । तिल्ली और गुरदे को हानिकारक है ।

दर्पनाशक–कतीरा, मधु और घृत ।

प्रतिनिधि–अंजीर और कैमूलिया ।

मात्रा–१-२ रत्ती ।

प्रयोग–१. अशुद्ध अबरक भस्म नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करनेवाला है तथा कोढ़, क्षय, पांडु रोग और हृद्रोगादि अनेक रोग उत्पन्न करनेवाला है । इस कारण इसको विधिपूर्वक शुद्ध करके व्यवहार में लाना चाहिए । इसके शोधने और भस्म करने की रीति अनेक पुस्तकों में लिखी है, इसलिये यह प्रसंग छोड़ दिया जाता है । अबरक के सेवन-काल में खारी और खट्टा पदार्थ, उड़द, मूँग आदि द्विदल अन्न, ककड़ी, करेला, बैंगन, करील और तेल सर्वथा त्याज्य हैं । अनुपान के योग से यह सब रोगों

का नाश करनेवाला है। २. वीर्य्य-पुष्टि के लिये अबरक भस्म और लौंग के चूर्ण को मधु के साथ सेवन करना चाहिए। ३. प्रमेह पर इसको गिलोय के सत्व और मधु के साथ अथवा शिलाजीत, पीपल और मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ४. पित्त-विकार में इसको मिस्री सहित कच्चे दूध के साथ सेवन करना चाहिए। ५. मंदाग्नि में पीपल और मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ६. मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्र पर मिस्री और जवाखार मिले हुए पानी में अबरक भस्म मिलाकर सेवन करने से फायदा होता है। ७. मूत्रकृच्छ्र पर ६ माशे से तोले भर तक खमीर संदल में १ से ४ रत्ती तक भस्म मिलाकर पान करना हितकारी है। अबरक भस्म और मिस्री के चूर्ण में ३० बूँद चंदन का तेल अथवा २० बूँद गंधाबिरोजे का तेल या १०-१० बूँद दोनों मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। ८. श्वास, काश पर अदरक का रस गरम कर ठंढा होने पर उसमें भस्म और मधु मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। ९. पित्तज काश पर इसको अडूसे के रस और मधु के साथ पान करने से फायदा होता है। १०. कफज काश पर इसको कंटकारी के काढ़े के साथ सेवन करना उचित है। ११. वातज काश पर लौंग और मधु के साथ सेवन करना हितकारी है। १२. वातातिसार में सोंठ के साथ, पित्तातिसार में लोध और मिस्री के चूर्ण के साथ अथवा बेलगिरी और मिस्री के साथ, कफातिसार में अतीस के साथ अथवा सोंठ, मिर्च और पीपल के साथ सेवन करना चाहिए। १३. रक्तातिसार में राल और मिस्री के साथ अथवा नागरमोथे के चूर्ण के साथ सेवन करना हितकारी है। १४. आमातिसार में इसको हर्रे के मुरब्बे के साथ अथवा सौंफ और गुलकंद के साथ सेवन करने से फायदा होता है। १५. रक्तपित्त में छोटी इलायची और मिस्री के साथ सेवन करना गुणकारी है। अडूसे के रस या काढ़े के साथ अथवा गिलोय के रस या काढ़े के साथ सेवन करने से भी लाभ होता है। १६. वातरक्त में अबरक भस्म और हर्रे की छाल को गुड़ में गोली बनाकर शतावर और मिस्री के साथ सेवन करना चाहिए। १७. नेत्र-विकार पर मधु, घृत और त्रिफला के साथ इसका सेवन करना गुणकारी है। १८. रक्तार्श में काले तिल और मक्खन के साथ सेवन करना लाभदायक है। १९. वातज अर्श में भूभल में पकाए हुए जमींकंद को पीसकर सुखावे। फिर उसमें अबरक भस्म और गुड़ मिलाकर गोलियाँ बनाकर सेवन करना चाहिए। २०. कफजार्श में अदरक के रस के साथ, पित्तजार्श में शुद्ध भिलावाँ एक भाग, काला तिल एक भाग, एक साल से अधिक समय का पुराना गुड़ २ भाग, अबरक भस्म सोलहवाँ भाग, इन सब को एकत्र कर एक एक माशे की गोलियाँ बनाकर १ से ४ गोली तक सेवन करने से लाभ होता है। २१. राजयक्ष्मा और शोष रोग पर—इसमें सोने का भस्म मिलाकर मधु के साथ देना चाहिए। २२. विशूचिका में मधु के साथ व्यवहार में लाना उत्तम है। मूत्रावरोध पर पुदीने के अर्क के साथ एक एक घंटे पर देना चाहिए। २३. प्लेग में इसको लोहे के भस्म में मिलाकर पान के साथ सेवन करना गुणकारी है। शतपुटित अबरक भस्म १ रत्ती, केसर १ रत्ती, छोटी पीपल ४ रत्ती, अदरक का रस ४ माशे और मधु ६ माशे, सब को एक में मिलाकर सुबह, दोपहर और शाम को सेवन करना चाहिए। इसी प्रकार अनुपान के योग से यह भस्म सब प्रकार के रोगों को दूर करनेवाला है।

अबरख–[गु०] अबरक। अभ्रक।

अबरुन–[अ०] हमेशह बहार। हय्युल आलम।

अबरेशम–[फा०] } **अबरेसम**–[अ०] } अबरेशम। इबरेशम। रेशम। कज। एक प्रकार का कीड़ा जो अपनी लार से अपने ऊपर घर बनाता है। इसका रंग पीला और सफेद तथा स्वाद फीका होता है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम और रूक्ष, किसी किसी के मत से मातदिल, उत्तमांग को बलकारी, शरीर के लिये बृंहणकर्त्ता, ओज को बलकारक, रोध-उद्घाटक, मन-प्रसन्नकारक, मुँह के रूप का शोधक, प्रकृति में मृदुता का वर्धक, स्निग्धता का आकर्षक तथा नेत्र-रोग, हृदय की व्याकुलता और आमाशय की कठोरता का नाश करनेवाला है।

दर्पनाशक—मोती का भस्म।

मात्रा—३ से ६ माशे तक।

अबल–[सं०] बरुन। वरुण वृक्ष।

अबलगुंदर–[मरा०] कुंदरु। बिरोजा।

अबलगुज–[फा०] बकुची। सोमराजी।

अबला–[सं०] १. स्त्री। नारी। औरत। २. रत्न। जवाहिर। ३. प्रियंगु। फूल प्रियंगु। दहिंगना। ४. [कच्छ०] तरवड़। आहुल्य।

अबलगुज़–[फा०] बकुची। सोमराजी।

अबहल–[द०, पं०] }
अबहाल–[अ०] } हाऊबेर। इपुपा।
अबहुल–[पं०] }

अबाबील–[हिं०] अबाबील नामक पक्षी। मयानी पट। टेरी। इसको फारसी में "परस्तूक" और अरबी में "खताक" कहते हैं। यह उजाड़ में रहनेवाली गौरैया के बराबर एक चिड़िया है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—इसका मांस देखने में किंचित् कालापन लिए लाल रंग का और स्वाद में नमकीन होता है। यह तीसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, वृक्क और वस्ति की

पथरी का नाश करनेवाला, पांडु रोग और प्लीहा को लाभकारी, कांतिदायक, रूप का स्वच्छकर्त्ता और वृषणों में पानी उतरने को लाभकारी, इसके स्वरस का अंजन दृष्टि को बलवान् करनेवाला तथा फेफड़े को हानिकारक है।

दर्पनाशक—सिर्कंजबीन।

प्रतिनिधि—खंजन (खँडरिच) का मांस।

अबालुक–[सं०] पानीआलु। पानीयालुक।

अबीर–[हिं०] अबीर [सं०] रागचूर्ण। फल्गुचूर्ण। भूलिगुच्छ। पिष्टात इत्यादि। [बँ०] आबीर।

अबीर लाल रंग की एक प्रसिद्ध बुकनी है। प्रायः इसको होली में सूखा अथवा पानी में घोलकर व्यवहार में लाते हैं।

अबुनास–[अ०] पोस्तदाना। खसखस।

अबूकर–[यू०] शोरा। सूर्य्यखार।

अबूखिलसाय–[अ०] रतनजोत।

अब्ज–[सं०] १. कमल। पद्म। २. शंख। संख। ३. इजल। हिजल। ४. समुद्रफल। समुंदर फल।

अब्जकर्णिका–[सं०] कमल के बीज-कोष। कमलगट्टे का घर। कर्णिका।

अब्जकेशर–[सं०] कमलकेसर। पद्मकेसर।

अब्जभोग–[सं०] भसींड। कमलकंद।

अब्जबीजभृत्–[सं०] कनेर सफेद। श्वेत करवीर वृक्ष। सफेद कनेर।

अब्जाह्व–[सं०] सुगंधबाला। नेत्रबाला।

अब्जिनी–[सं०] कमलिनी। पद्मिनी।

अब्द–[सं०] १. मोथा। मुस्तक। मुस्ता। २. नागरमोथा। नागरमुस्तक। ३. भद्रमोथा। भद्रमुस्तक। ४. अबरक। अभ्रक।

अब्दनाद–[सं०] १. चैलाई। तंडुलीय शाक। २. शंखिनी। यवतिक्ता। यवेची।

अब्दसार–[सं०] कपूर। कर्पूरभेद।

अब्धि–[सं०] समुद्र। सागर। समुंदर।

अब्धिकफ–[सं०] }
अब्धिज–[सं०] } समुद्रफेन। समुंदरफेन। कफेदरिया।

अब्धिजा–[सं०] मदिरा। शराब। दारू।

अब्धिडिंडीर–[सं०] समुद्रफेन। समुंदरफेन।

अब्धिनारिकेल–[सं०] नारियल दरियाई। दरियाई नारियल।

अब्धिफल–[सं०] समुद्रफल। समुंदर फल।

अब्धिफेन–[सं०] समुद्रफेन। अब्धिकफ।

अब्धिमंडूकी–[सं०] सीप। शुक्ति। मोती की सीप।

अब्धिवृक्ष–[सं०] शाखिमूल। मलयभु।

अब्धिहिंडीर–[सं०] समुद्रफेन। अब्धिकफ।

अब्बासी–[यू०] गुलबाँस। कृष्णकेलि।

अब्बासी का फूल–[यू०] गुलबाँस का फूल। गुल अब्बासी।

अब्बासी की जड़–[यू०] गुलबाँस की जड़। बेखअब्बासी।

अब्बासी के पत्ते–[यू०] गुलबाँस के पत्ते। बर्गअब्बासी।

अब्बासी के बीज–[यू०] गुलबाँस के बीज। तुख्मअब्बासी।

अभ्र–[सं०] १. अबरक। अभ्रक। २. मोथा। मुस्तक। मुस्ता।

अभ्रकाकिया–[फा०] मकड़ी का जाला।

अभ्रमुर्दह–[फा०] १. मुंडी बड़ी। महामुंडी। गोरखमुंडी। २. इस्पंज। मुआ बादल।

अभय–[सं०] खस। उशीर। वीरणमूल।

अभयदा–[सं०] भुइँआँवला। भूम्यामलकी।

अभया–[सं०] }
अभया हरीतकी–[हिं०] } हरीतकी अभया। पाँच रेखावाली हर्रे।

अभरक–[गु०] }
अभरख–[गु०] } अबरक। अभ्रक।

अभिघार–[सं०] घृत। घी।

अभिनंदन–[सं०] आम। आम्र।

अभिन्यास–[सं०] }
अभिन्यासक–[सं०] } सन्निपात ज्वर विशेष।

अभिमंथ–[सं०] नेत्ररोग। चक्षुरोग।

अभिलकपित्थ–[सं०] अमड़ा। आम्रातक।

अभिषव–[सं०] }
अभिषुत–[सं०] } काँजी। कंजिक। शंडाकी।

अभिष्यंद–[सं०] नेत्ररोग विशेष। नेत्रशूल रोग। आँख से पानी आदि गिरना। [फा०] रमद। [अ०] दमआ। [अँ०] Ophthalmia.

इस नेत्ररोग में अत्यंत भयंकर पीड़ा होती है। प्रायः यह सर्व नेत्र रोगों का कारण होता है। इसको देशभाषा में "आँख दुखना" या "आँख आना" कहते हैं। वात, पित्त, कफ और रुधिर के दोषों से यह रोग चार प्रकार का होता है।

अभिष्यंदी–[सं०] वह औषधि जो चिकनी, खट्टी, कोमल, फूली हुई, कफकारी इत्यादि गुण-संयुक्त होने से रसवाहिनी नाड़ियों को रोककर शरीर को जकड़ दे। जैसे "दही"।

अभिसार–[सं०] सकुची मछली। शष्कुली मत्स्य।

अभिहिता–[सं०] जलपीपल। जलपिप्पली।

अभीरु–[सं०] शतावर। शतावरी।

अभीरुपत्रिका–[सं०] }
अभीरुपत्री–[सं०] } शतावर। शतमूली।

अभीष्ट–[सं०] तिलक। तिलपुष्पी।

अभीष्टगंधक–[सं०] माधवी लता। अतिमुक्तक।

अभीष्टा–[सं०] रेणुका। रेणुक।

अभुल–[पं०] हाऊबेर। हवुषा।

अभेद्य–[सं०] हीरा । हीरक ।
अभ्यंग–[सं०]
अभ्यंजन–[सं०] } तैलमर्दन । शरीर में तेल लगाना ।
अभ्यक्त–[सं०] तिलों का कल्क । तिलकल्क ।
अभ्युष–[सं०]
अभ्यूष–[सं०] } पूरी । पोलिका । लुचुई ।
अभ्र–[सं०] १. अबरक । अभ्रक । २. सोना । सुवर्ण । ३. मोथा । मुस्तक । ४. नागरमोथा । नागरमुस्तक । ५. मेघ । बादल । घटा ।
अभ्रक–[सं०] १. अबरक । अभ्र । २. सोना । स्वर्ण । ३. मोथा । मुस्तक ।
अभ्रकमु–[ते०] अबरक । अभ्र ।
अभ्रज–[सं०] कौआ । काक पक्षी ।
अभ्रनामक–[सं०] मोथा । मुस्तक ।
अभ्रपटल–[सं०] अबरक । अभ्रक ।
अभ्रपुष्प–[सं०] बेंत । वेतस ।
अभ्रमांसी–[सं०] आकाशमांसी । सूक्ष्म जटामासी ।
अभ्ररोह–[सं०] वैडूर्य्य (मणि) । लहसुनिया ।
अभ्रवटिक–[सं०]
अभ्रवाटक–[सं०] } अमड़ा । आम्रातक ।
अभ्रवाटिक–[सं०]
अभ्रसार–[सं०] भीमसेनी कपूर । भीमसेनी कर्पूर ।
अभ्राह्व–[सं०] केसर । कुंकुम । जाफरान ।
अमंगल–[सं०]
अमंड–[सं०] } रेंड । एरंड वृक्ष ।
अमआगुल अर्ज़–[अ०] केचुआ । महिलता । चेंरा । चौंरा ।
अमउल सिबियाँ–[फा०] बाँयटे । करैरे । आसेब ।
अमकिटपिवेट–[क०] असगंध । अश्वगंध ।
अमकुडुवित्तम–[ते०] कुड़ा । कुटज वृक्ष ।
अमकुडु–[ते०] कुड़ा काला । कृष्ण कुटज वृक्ष ।
अमकोलमचेट्टु–[ते०] ढेरा । अंकोट वृक्ष ।
अमचूर–[हिं०] आम की खटाई । आम्रपेशी ।
अमटेंगिड–[क०]
अमटेपुंडी–[खा०] } अमड़ा । आम्रातक ।
अमड़ा–[हिं०] आमड़ा । अमरा । अमड़ा । अमला । अंबाड़ा । आमरा । अंबोया । [सं०] आम्रातक । पीतन । मर्कटाम्र । कपितन इत्यादि । [बं०] आमड़ा । अमरा । अंबरा । [गारो०] टंग रोग । अडिआई । [ता०] काटमा । काटमा । टानेब । मरिमन । चेकी । कटमोरा । अंपलै । [ते०] अलीममडी । अंबालमु । अमाट । [मु०] जंगली आम । अंबाड़ा । [कोल०] अंबुरी । [आसा०] अमरा । टॉमॉग । [ने०] अमरा । [लि०] कौचिलिंग । [माल०, द०] काट । अंबोहम । [उ०] अंबुड । [कुर०] अंबेरा । [कोड०] हमरा । [कु०] अमरा । अमुरस । बोहमले । अमड़ा । अंबरा । अमबरा । [द०] रान आंब । जंगली आम । [मु०] अमरा । अमराड़ । [मरा०] रानअंबा । अंबाड़ा । अंबाड़े । आंबचार । [ते०] अमाट । अंबालमु । पुर्ईछे । केडरी अंबला चेट्टु पिटे । अमनिवरु । मामिडि । अमाटम । अडिविअो मामिडि । टौरा-मामिडि । [खा०, को०] अमते । अंबटे मर । अमटे पुंडी । [बरमा०] कोर । क्योरोई । [सिंह०] अंद्मब केला । [गु०] अंमेरा । अंमेड़ा । [क०] आंबोडेय कायि । अमटेंगिड । [द्रा०] काटमा । [पं०] अमरा । अंबड़ा । [फा०] दरख्ते मोरयम । [लै०] Spondias Mangifera. [अं०] Hog plum.

भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में सिंध से पूरब की ओर तथा दक्षिण की ओर मलाका और लंका तक पाया जाता है।

इसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है। छाल चिकनी, सुगंधित मसालेदार खाकी रंग की होती है। लकड़ी कोमल, हलकी, खाकी होती है। १-१॥ फुट लंबे सींकों पर जियाल (जिंगनी वृक्ष) के पत्तों के समान ३ से ५ जोड़े पत्ते लगते हैं और जियाल के पत्तों से मोटे होते हैं। ये २ से ६ इंच तक लंबे तथा १ से ४ इंच तक चौड़े अनीदार होते हैं। फूल मंजरी में सफेद आते हैं। फल १॥-२ इंच लंबे, अंडाकार, चिकने, खट्टे, गुलाब के समान गंधवाले झुमकों में लगते हैं और पकने पर पीले पड़ जाते हैं। इनका अचार बनाया जाता है। देशी और विलायती के भेद से यह दो प्रकार का होता है। पक्के विलायती अमड़े का स्वाद खटमिट्ठा होता है और देशी अधिक खट्टा होता है; इसलिये लोग विलायती को ही पसंद करते हैं।

साधारण वृक्षों के समान इसके बीज से पौधे उत्पन्न किए जाते हैं। शाखाओं को काटकर रोपण कर देने से भी वृक्ष तैयार हो जाते हैं। जली हुई मिट्टी, बालू और उद्भिज्ज खाद मिट्टी में मिलाकर इसकी जड़ में देना अच्छा होता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—कच्चा फल खट्टा, वातनाशक, भारी, उष्णवीर्य्य, रुचिकारी और दस्तावर है। पका फल कषाय, मधुर रसयुक्त, पाक में कसैला, मधुर, शीत-वीर्य्य, तृप्तिकारी, कफवर्द्धक, स्निग्ध, वीर्य्यवर्द्धक, विष्टंभी, पुष्टिकारक, भारी और बलकारी है तथा वात, पित्त, घाव, दाह, क्षय रोग और रुधिर-विकार का नाश करनेवाला है।

इसके कोमल पत्ते रुचिकारी, ग्राही तथा अग्नि-प्रदीपक हैं।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में शीतल और पहले में रूक्ष। पैत्तिक रोग और पित्तातिसारनाशक एवं उष्ण प्रकृतिवाले को लाभकारी है। नाक के रोग में इसके वृक्ष की छाल पीसकर बकरी के तुरंत दुहे हुए दूध के साथ

पीना गुणकारी है तथा आर्तव रोकने में गुठली का प्रयोग हितकारी है।

प्रयोग—१. अमड़े के वृक्ष की छाल, गोंद, पत्ते और फल औषध-प्रयोग में आते हैं। इसके फल की गूदी अम्ल-संकोचक तथा पित्तज मंदाग्नि को लाभकारी है। इसकी छाल शीतल तथा आमातिसार को गुणकारी है। पत्तों का रस कान की पीड़ा में व्यवहृत होता है और इसका फल रक्तज रोग में लाभदायक होता है। २. पित्त की मंदाग्नि में फल की गिरी खिलाने से लाभ होता है। ३. आमातिसार में पत्तों का चूर्ण, वृक्ष की छाल के काढ़े के साथ, देना चाहिए। ४. कर्ण-शूल में पत्तों का रस कान में डालने से और कान के बाहर लगाने से लाभ होता है। ५. विष में बुझाए हुए शस्त्र के घाव पर इसके फल को खाने और पीसकर लगाने से लाभ होता है।

अमता–[हिं०] चांगेरी। अमलोनी। अंबिलोना।

अमती–[मु०] वायविडंग भेद। विडंग भेद।

अमते–[खा०] अमड़ा। आम्रातक।

अमदुर–[हिं०]
अमदूर–[हिं०] } अमरूद। पेरुक। सफरी।

अमधोक–[बं०] अंगूर जंगली। वन अंगूर।

अमन–[ता०] १. अजवायन। यमानिका। जवाइन। २. [हिं०] बिजैसार। पीतशाल। असन।

अमनिवरु–[ते०]
अमबरा–[को०] } अमड़ा। आम्रातक।

अममुघिलन–[अ०] बबूल। बबूर।

अमर–[सं०] १. हड़जोड़ी। अस्थिसंहारी। २. पारा। पारद। ३. रुद्राक्ष। शिवाक्ष। ४. सोना। स्वर्ण।

अमरकंटिका–[सं०] सतावर। शतावरी।

अमरकण–[सं०] गजपीपल। गजपिप्पली।

अमरकालिक–[सं०] वृश्चिकाली। बिछाती।

अमरकाष्ठ–[सं०] देवदारु। देवदार।

अमरकुसुम–[सं०] लौंग। लवङ्ग।

अमरज–[सं०] १. दुर्गंध खैर। विट खदिर। २. देवदारु। देवदार। ३. बड़ नदी का। नदीवट। नदी का बड़।

अमरतरु–[सं०] देवदारु। देवदार।

अमरथवल–[प०] पाषाणभेद। पाखानभेद।

अमरदवल्लि–[सं०]
अमरदवल्ली–[सं०] } गिलोय। गुडूची। गुरुच।

अमरदारु–[सं०] देवदारु। देवदार।

अमरद्रु–[सं०] दुर्गंध खैर। विट खदिर।

अमरपुष्प–[सं०] १. सुपारी। पूगफल। २. कांस। काश तृण। ३. आम। आम्र। ४. केवड़ा। केतकी।

अमरपुष्पक–[सं०] कांस। काश तृण।

अमरपुष्पिका–[सं०] १. अंधाहुली। चोरपुष्पी। २. कांस। काश तृण।

अमरपुष्पी–[सं०] १. अंधाहुली। अधःपुष्पी। २. कांस। काश तृण।

अमरविंद–[सं०] कमल। पद्म।

अमरबेल–[हिं०] १. अमरबेल नं० १। आकाश बेल। २. अमरबेल नं० २। आकाशवल्ली। ३. [पं०] अर्कपुष्पी नं० २। ४. अमरबेल। अमरवल्लरी। अमरबल्ली। अमरलता। अमरलत्ती। [सं०] आकाशवल्लरी। आकाशवल्ली। खवल्ली। अमरवल्लरी आदि। [बं०] आलोक लता। आलक लता। [मरा०] सोनबेल। [क०] नेदमुदवल्ली। वलुवल्ली। अमर-वल्लि। [ते०] इंद्रजाल। [को०] अंतरबेल। अंतर्वेल। [तै०] पैंचफिगा। [द्रा०] कोहन। [पं०] निराधार। [फा०] बरिश। अफ्तीमून। [अ०] कसूस। अफ्तीमून। [लै०] १. Cuscuta Reflexa. २. Cassytha Filiformis. [अं०] The Dodder.

यह लता वृक्षों के ऊपर पीले रंग के डोरे के समान फैली हुई रहती है। इसकी जड़ नहीं होती। जिस वृक्ष पर यह रहती है, बढ़ते बढ़ते उस वृक्ष को अपनी लताओं से ढाँककर सुखा देती है। यह कई प्रकार की होती है। किसी पर फूल-पत्ते नहीं होते और किसी पर केवल फूल ही देखने में आते हैं। फूल गुच्छेदार झुमकों में होते और पीलापन लिए सफेद सुहावने दिखाई पड़ते हैं।

यह बड़ी और छोटी के भेद से दो प्रकार की होती है। बड़ी अमरबेल की बेल बड़ी भारी, सघन, पीले रंग की होती है। जिस वृक्ष पर यह फैल जाती है, उसको पूरा ढक लेती है। भूमि में उगती और वृक्ष पर चढ़कर पृथ्वी से अपना संबंध तोड़ उसी पर फैलती रहती है। इसके फूलों से मीठी सुगंधि आती है। बीज कड़वे होते हैं। इससे एक प्रकार का रंग निकाला जाता है।

अमरबेल नं० १—[हिं०] अमरबेल। आकाश बेल। [बं०] हलदी अलगुसी लता। अलगुसी। [संता०] अलगजरी। [पं०] निलाधारी। विराधर। आमिल। जरबूटी। कसुस। अफ्तीमून। [द०] आकाश पवन। अमरबेल। [गु०] अकसबेल। [मा०] निर्मूली। [म०] आकाशबेल। [तै०] सीतामा पुरगो नलु। सीताम्मा पेगु नुलु। [लै०] Cuscuta Reflexa.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में, विशेषकर बंगाल में अधिक पाई जाती है।

यह लता पत्र-विहीन, पतली, गूदेदार, डोरे के समान, पीले रंग की, छोटे-बड़े वृक्षों पर अथवा झाड़ियों पर शाखा-

अमड़ा

अमड़ा (फल)

पृ० ५८]
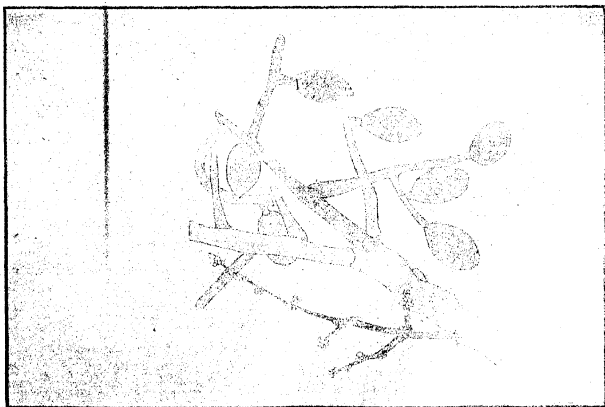
प्रशाखाओं द्वारा अत्यंत सघन होकर इस प्रकार फैलती है कि वे इसके विस्तार से ढक जाते हैं। यह लता कहीं मोम के समान पीलापन लिए सफेद, कहीं हरापन लिए पीले अथवा कहीं कहीं पीले रंग की देख पड़ती है। फूल छोटे-छोटे, पीलापन लिए सफेद, कहीं हरापन लिए पीले अथवा कहीं कहीं पीले रंग के देख पड़ते हैं।

वैज्ञानिक विद्वानों का कथन है कि इसके बीज भूमि पर गिरकर अंकुरित होते हैं; परंतु वे भूमि से आहार पाते हुए नहीं मालूम पड़ते। अपनी अद्भुत शक्ति से वे अंकुर निकट-वर्ती पौधे या वृक्ष के पास आप ही आप खिसककर उससे लिपट जाते हैं और बारीक रेशों में ही छाल के भीतर घुसकर उससे अपना आहार पाने लगते हैं। उसी समय वे भूमि से अवलंब छोड़ पृथक् हो जाते हैं और शेष भाग सूखकर अलग हो जाते हैं। इस प्रकार यह लता वृक्ष से ही आहार पाकर समय आने पर उसी को सुखा देती है।

इस लता के टुकड़े को किसी वृक्ष पर डाल देने से भी यह उस पर खूब फैलती है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—अमरबेल एक दिव्य औषधि है। यह धारक, तिक्त, कषाय रसयुक्त, पिच्छिल, अग्नि-प्रदीपक, हृदय को हितकारी, रसायन, बलकारक, वीर्य-वर्द्धक तथा कफ, पित्त और नेत्ररोग-नाशक है।

इसका **अर्क** शीतल तथा कफ, पित्त और आम का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष–तीसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, शोथनाशक, रोध को खोलनेवाली, वातज और कफज मल को दस्त द्वारा निकालनेवाली, रक्तशोधक तथा उन्माद, हृदय के परदे की सूजन, प्रायः मस्तिष्क-संबंधी रोगों और त्वचा के रोगों को लाभकारी है। व्याकुलता को बढ़ानेवाली, मूर्च्छा और तृषोत्पादक तथा फुफ्फुस को हानिकारक है।

दर्पनाशक–सेब, कतीरा, केसर, बबूल का गोंद और बादाम रोगन।

प्रतिनिधि–विसफायज (एक यूनानी दवा), निसोथ, लाजवर्द और पित्त पापड़ा।

मात्रा–४ माशे से १ तोले तक।

प्रयोग–१. बीज शूलनाशक है, इस कारण इसको उबालकर पाकस्थली (मेदा) पर लगाते हैं। इसका हिम स्वच्छताकारक होता है। यह दस्तावर है। पंजाब और सिंध के चिकित्सक इसको स्वास्थ्य-सुधारक मानते हैं और रुधिर को शुद्ध करने के लिये सारसा पैरिला के साथ व्यवहार में लाते हैं। इसको लगाने से खुजली का नाश होता है। यह ज्वरनाशक तथा तृषा उत्पन्नकारक है। २. यकृत की कठोरता मिटाने के लिये इसका लेप करना तथा यकृत का बल बढ़ाने के लिये इसका रस पिलाना चाहिए। ३. खुजली और पामा में इसको पीस-कर लेप करना चाहिए। ४. रुधिर शुद्ध करने के लिये इसको उशबे के साथ औंटकर छान और उसमें मधु मिलाकर पिलाना होता है। ५. कोष्ठ शुद्ध करने के लिये इसका हिम पिलाना उत्तम है। ६. पित्तज रोग में इसके काढ़े से लाभ होता है। ७. जीर्ण ज्वर और अफरे में इसके चूर्ण की फंकी देनी चाहिए। ८. उपदंश में इसका रस पिलाना लाभकारी है। ९. पक्षाघात, गठिया, ककहारी आदि में इसको औंटाकर बफारा देना चाहिए। १० पुष्य नक्षत्र में इसको विधिपूर्वक लाकर यदि स्त्री को खिलावे तो जैसा बालक उत्पन्न हो चुका हो, उससे दूसरे प्रकार का (पुत्र अथवा कन्या) उत्पन्न होता है; तथा रक्त का शोधन होता है।

अब दूसरी जाति की अमरबेल का वर्णन किया जाता है; किंतु प्रयोग का नंबर उक्त अमरबेल के सिलसिले के साथ इस कारण रखा गया है कि दोनों के गुणावगुण प्रायः एक समान हैं।

अमरबेल नं० २–[हिं०] अमरबेल। आकाशबेल इत्यादि। [सं०] आकाशवल्ली। आकाशवल्लरी आदि। [बं०] अकासबेल। आकासबेलि। आकासबेल। [संता०] अलगजरी। [मरा०] आकासबेल। अकासबेल। अमरवेल। [द०] कोटन। [ते०] पैंच फिग। [ता०] कोट्टन। [मला०] अकासज बुलि।

यह बांदे से बंगाल और चटगाँव तक तथा दक्षिण की ओर ट्रावनकोर तक पाई जाती है।

यह भी उक्त अमरबेल की नाईं पत्र-विहीन, पीले रंग की, अनेक शाखा-प्रशाखाओं से सघन झाड़ियों पर जाल के समान पसरी हुई रहती है। फल मटर के समान गोल और चिकने होते हैं।

गुण—यह बलकारी, स्वास्थ्यरक्षक और धातुवर्द्धक है। इसका स्वाद अच्छा नहीं होता, किंतु इसमें गंध नहीं होती। मोरिशस टापू में इसका काढ़ा आँत के रोग और बालकों के गलरोग पर दिया जाता है। मडागास्कर में भी इसका व्यवहार होता है। इसको पीसकर तिल के तेल में मिलाकर बालों को दृढ़ करने के लिये लगाते हैं। मक्खन और अदरक के साथ पीस-कर घाव पर लगाते हैं। आँख आने पर इसके रस में चीनी मिलाकर आँखों के ऊपर लेप करते हैं।

प्रयोग—दूसरी जाति की अमरबेल बल-वीर्य-वर्द्धक तथा रक्तशोधक है। ११. पुराने घाव पर इसके चूर्ण में सोंठ और घी मिलाकर लेप करना चाहिए। १२. बालों के गिरने पर इसको तिल के तेल में मिलाकर लेप करना चाहिए। १३. आँख की सूजन पर इसके रस में मिस्री मिलाकर टपकाने से फायदा होता है। १४. जलोदर में काढ़े का बफारा देना हितकारी है। १५. रक्तार्श पर इसका प्रयोग उपकारी है। १६. बालरोग में इसको बालक के गले, हाथ और गुल्फों पर बाँधना चाहिए।

अमरबेल के बीज–[हिं०] आकाशबेल के बीज। [सं०] अमरवल्लीबीज। [फा०] तुख्मबरिश। [अ०] बजरुल कसूस। [यू०] अमरलता के बीज।

अमरबेल के बीज मूली के बीज से छोटे, लाल रंग के और स्वाद में फीके होते हैं।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, मल को स्वच्छकारक, पक्वाशय और आँतों का उद्घाटक, अत्यंत मूत्र लानेवाले, प्रस्वेद और आर्तव-प्रवर्तक, स्तनों में दूध बढ़ानेवाले, प्रकृति को मृदुकारक, मल को हरण करनेवाले, दोष ज्वर के नाशक तथा तिल्ली और फेफड़े को हानिकारक हैं।

दर्पनाशक—सिकंजबीन, मधु और कासनी के बीज।

प्रतिनिधि—अफ़िस्तीं और बादरूज। (एक यूनानी दवा)

मात्रा—२ से ७ मासे।

प्रयोग—१. रुधिर शुद्ध करने के लिये बीजों के चूर्ण की फंकी देना हितकारी है। २. आध्मान और पेट की पीड़ा में बीजों को उबालकर पेट पर बाँधने से अपशब्द और डकार होकर लाभ होता है। यह रेचक है। ३. वातोन्माद में बीजों का प्रयोग किया जाता है।

अमरलता–[यू०] अमरबेल। आकाशवल्ली।

अमरलता के बीज–[यू०] अमरबेल के बीज। तुख्मबरिश।

अमरलत्ती–[हिं०]
अमरवल्लरी–[सं०]
अमरवल्लि–[कं०]
अमरवल्ली–[सं०]
अमरवेल–[हिं०, द०]
अमरवेलि–[हिं०]
अमरवेल्ल–[मरा०]
} १. अमरबेल। आकाशवल्लरी। २. अमरबेल नं० १। आकाशवल्ली। ३. अमरबेल नं० २। आकाशवल्ली।

अमरसर्षप–[सं०] देवसर्षप। निर्जर सरसों।

अमरा–[सं०] १. दूब। दूर्वा। २. गिलोय। गुडूची। गुरुच। ३. इनारू। इंद्रवारुणी। इंद्रायन। ४. बड़। वट वृक्ष। बरगद। ५. नील। नीली वृक्ष। ६. घीकुवार। घृतकुमारी। ७. वृश्चिकाली। बिछाती। ८. मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी। ९. बड़, नदी का। नदी वट। नदी का बड़। [हिं०, बं०, ने०, आसा०] अमड़ा। आम्रातक।

अमराह–[मु०] अमड़ा। आम्रातक।

अमराह्व–[सं०] देवदारु। देवदार।

अमरी–[सं०] १. दूब नीली। नीली दूब। नील दूर्वा। २. निर्गुंडी। संभालू। सेंधुआर। मेउड़ी। ३. मूर्वा। मरोड़फली। चूरनहार।

अमरुत–[हिं०] १. अमरूद। पेरुक। २. [मला०] गिलोय। गुडूच। गुरुच।

अमरुतकल्लि–[ता०, को०]
अमरुतवल्लि–[मला०]
} गिलोय। गुडूची।

अमरुल–[बं०]
अमरुल शाक–[बं०]
अमरुल साक–[बं०]
} चांगेरी। अंबिलोणा। अमता। खट्टी बूटी।

अमरूत–[हिं०]
अमरूद–[हिं०]
} अमरूद। अमृत फल। सफरी। बीह। [सं०] पेरुक। दृढ़ बीज। मांसल। वर्तुल आदि। [बं०] पियारा। [मरा०] पेरु। [मा०] जाम फल। [गु०] जाम फल। पेर। [ते०] जाम्नि पंडु। जमकोइया। गोय्या। [ता०] सेगपु। [द्रा०] कोय्या। [कं०] शीबे। [ने०] अमुक। [आसा०] मोधरियन। [द०] जाम। लाल जाम। सफेद जाम। [मु०] पेरु। तांबड़ा पेरु। पांढ़रा पेरु। [फा०] अमरूद। कमशरी। [अ०] कमुसरा। [लै०] Psidium Guyava. Syn: Pyrus Communis. [अं०] Guava. The Guava tree.

इसका उत्पत्ति-स्थान अमेरिका के गरम प्रांत तथा वेस्ट-इंडीज़ हैं। अब भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में तथा बरमा और सिलोन में होता है। विशेषकर वाटिकाओं में अधिक मिलता है। यह जंगलों में भी पाया जाता है एवं जंगली अमरूद भी देखने में आता है।

अमरूद के वृक्ष मध्यमाकार के होते हैं और बारहो मास हरे भरे रहते हैं। प्रायः सब प्रांतों के बागों और वाटिकाओं में रोपण किए जाते हैं। बीज और दाब कलम से पौधे तैयार किए जाते हैं। यह वृक्ष ५-७ वर्ष में फल देने लगता है तथा फलों के भेद से अनेक प्रकार का होता है। छाल चिकनी, पतली, खाकीपन या किंचित् हरियाली लिए भूरे रंग की, कागज के सदृश त्वचावाली होती है। लकड़ी हरापन लिए सफेद और साधारणतः दृढ़ होती है। पत्ते समवर्ती ३ से ६ इंच तक लंबे, चौड़े, शरीफे के पत्तों के समान परंतु खुरदरे और रेशेवाले होते हैं। फूल सफेद १॥ इंच के घेरे में आते हैं। फल गोल, गूदेदार छोटे बड़े कई प्रकार के होते हैं। बनारस और इलाहाबाद का अमरूद अच्छा होता है। बड़े अमरूद ४ इंच के घेरे में गोलाकार और सुस्वादु होते हैं। पके फल हरापन लिए पीले या सफेदी लिए पीले रंग के होते हैं। गूदा गुलाबी या सफेद होता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—कसैला, मधुर, ग्राही और किंचित् खट्टा होता है। पकने पर स्वादिष्ठ, शीतल, तीक्ष्ण, भारी, कफकारी, वात-वर्द्धक, उन्मादनाशक, वीर्य-दायक, रुचिकर्त्ता, त्रिदोषनाशक तथा श्रम, दाह और मूर्च्छा का नाश करनेवाला है।

अमरबेल नं० १

अमरबेल नं० २

पृ० १०]
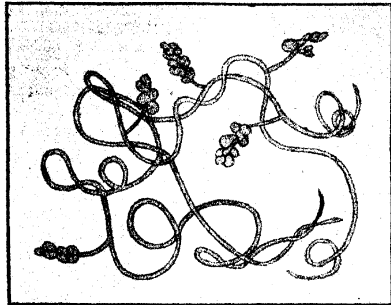
यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में ठंढा, तर और दूसरे दर्जे में गरम है। बलकारी, वर्द्धक और मृदु होने पर भी स्वच्छताप्रद, मन को प्रसन्न करनेवाला, प्रकृति को मृदुकारक और क्षुधा को बढ़ानेवाला है। हृदय की व्याकुलता का नाशक तथा हृदय, पक्काशय और पाचन-शक्ति को बल देनेवाला है। यह मस्तिष्क को तर रखता है। इसकी कली मन को प्रसन्न करनेवाली और बलकारी है तथा मुख से रुधिर आने में हितकारी है। इसके पत्ते अतिसार और व्रणनाशक हैं। ठंढी प्रकृति और निर्बल आमाशयवाले को हानिकारक तथा अफरा करनेवाला है।

दर्पनाशक—सोंठ का मुरब्बा और सौंफ।

प्रतिनिधि—बिही।

प्रयोग—१. अमरूद के वृक्ष की छाल संकोचक और बालकों के अतिसार को गुणकारी है। प्रायः इसका काढ़ा दिया जाता है। पाचन-शक्ति की निर्बलता पर इसके कोमल पत्तों का उपयोग किया जाता है। पत्तों का काढ़ा विशूचिका में लाभकारी है। इससे वमन और दस्त बंद होते हैं। दंतपीड़ा पर पत्तों का चबाना गुणकारी है। पत्तों की लुगदी में रांगे की भस्म की जाती है। २. अतिसार में कच्चा फल खिलाना हितकारी है। पुराने अतिसार में इसकी जड़ की छाल का अथवा कोमल पत्तों का काढ़ा पिलाया जाता है। कच्चे फलों को औटाकर पिलाने से भी लाभ होता है। ३. बालकों के अतिसार में इसके कोमल पत्ते, अनार की कली और बबूल के पत्तों का फांट पिलाना अथवा सवा तोले जड़ को १२ तोले जल में अर्द्धावशेष काढ़ा बना छः-छः माशे की मात्रा से दिन में तीन बार पिलाना चाहिए। विशूचिका में पत्तों का काढ़ा पिलाना गुणकारी है। ४. कांच निकलने पर गाढ़ा किए हुए काढ़े का लेप हितकारी है। ५. घाव पर पत्तों की पुल्टिस बाँधना अच्छा है। ६. मसूड़े की सूजन और पीड़ा में पत्तों के काढ़े से कुल्ला करना गुण-प्रद है।

अमरेंद्रतरु-[सं०] देवदारु। देवदार।

अमर्ता-[हिं०] अत्यम्लपर्णी। रामचना।

अमल-[सं०] १. अबरक। अभ्रक। २. समुद्रफेन। अब्धिकफ। ३. कपूर। कर्पूर। ४. निर्मली। कतक वृक्ष। ५. रूपामाखी। तारमाक्षिक। ६. अफीम। अहिफेन।

अमलकी-[सं०] भुईं आंवला। भूम्यामलकी। पाताल आंवला।

अमलतास-[हिं०] अमलतास। धन बहेड़ा। धन बहेरा। सोनालु। किरवारो। किरमाला। बनर लउर। बंदर लउर। सियार लाठी। सोनहाली। [सं०] सुवर्णक। आरग्वध। राजतरु। व्याधिघात आदि। [बं०] राखाल नड़ी। सोणालु। सोनालु। सोंदाल। सुंदा। सोनाली। अमलतास। बंदर लाठी। [मरा०] बाहवा। बाहव्याचे झाड़। बाहवा। भावा। बया। बवा। [गु०] गरमाल। गरमालो। सरमाला। [क०] कक्केमर। हेग्गके। [ते०] रेलकाया। रेयलु। रेलराल। रेलकायलु। सुवरम। [मा०] किरमालो। [द्रा०] कोन्नेमरं। शरकोन्ने। [उ०] सुनारी। [पं०] अमलतास। अलश। अली। करंगल। किश्रर। कनियार। अमोलो फली। [द०] गिरमाला। [कु०] राजवृक्ष। किनोला। [ने०] राजवृक्ष। [सिं०] चिमकनी। [संता०] नुरनिक। [कोल०] हार। हरी। [गारो०] सोनालु। [आसा०] सनारु। [कच्छ०] बनदोलत। [उ०] सुंदरी। सुनरी। [पश्चि०] कितवाली। सिटोली। इटोला। भीमरी। सीम। [अव०] वर्गा। [म०, प्र०] अमगर वाह। रेला। पिरोजा। करकचा। [गोंड०] जगरा। जगरुआ। कंवर। रटा। [ता०] कोरेकाय। शरक कोरेककाय। कोए। [माल०] कोनक काय। [को०, खा०] ककी। कार्को। [अ०] खयार संबर। खियार संबर। ख्यारे शंबर। फल्लूस ख्यार शंबर। [लै०] Cassia Fistula. Syn: Cathartocarpus fistula. [अं०] The Pudding Pipe tree; The Indian Laburnum or Purging Cassia.

इसका वृक्ष भारतवर्ष के कई प्रांतों में पाया जाता है। यह मध्यमाकार का होता है, किंतु कहीं कहीं बड़ा वृक्ष भी देखने में आता है। छाल चौथाई इंच मोटी, हरापन लिए खाकी, नई छाल चिकनी, नीलापन लिए लाल, भूरे रंग की और पुरानी खरदार होती है। इसकी लकड़ी बहुत दृढ़ होती है। इसका सार भाग दृढ़, खाकी या पीलापन लिए लाल एवं रक्तवर्ण का किंतु सूखने पर स्याहीमायल हो जाता है। १२ से १८ इंच तक लंबे सींकों पर ४ से ८ जोड़ समवर्त्ती पत्ते लगते हैं। वे अंडाकार, किंचित् लंबे ३॥ से ३ इंच तक के घेर में होते हैं। फूल सुगंधित, अधिक पीले रंग के १० से २० इंच तक लंबी टहनियों पर झुमकों में आते हैं। फलियां गोल १-२ फुट लंबी और एक इंच मोटी, चिकनी, कालापन लिए भूरे रंग की होती हैं। इनके अंदर चवन्नी के समान पतले, काले, लसीले, गूद से लिपटे हुए सिलसिलेवार पर्दे होते हैं। यही अमलतास की गिरी है। पर्दों के बीच में इमली के बीज के आकारवाले भूरे रंग के छोटे छोटे अनेक बीज होते हैं। फलियां अमलतास कहलाती हैं।

इस वृक्ष की जड़, जड़ की छाल, छाल, पत्ते, फूल और फली की गूदी औषधि-प्रयोग में आती है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—भारी, स्वादिष्ट, शीतल, पेट के मल को ढीला करनेवाला तथा ज्वर, हृदयरोग, रक्तपित्त, वात, उदावर्त और शूल का नाश करनेवाला है। इसकी फली कोठे के मलादि को निकालनेवाली, रुचिकारी, ज्वर में सदा पथ्य तथा कोढ़, पित्त और कफनाशक है। यह कोठे को शुद्ध करने में अत्यंत उत्तम है।

इसके पत्ते कफ और मेद को सोखनेवाले, मल को ढीला करनेवाले, ज्वर में पथ्य और चर्म्मरोग पर मलने में हितकारी हैं।

इसके फूल स्वादिष्ट, शीतल, कड़वे, ग्राही, कसैले, वातवर्द्धक तथा कफ और पित्त-नाशक हैं।

इसकी मज्जा मधुर, स्निग्ध, अग्निवर्द्धक, दस्तावर तथा पित्त और वात का नाश करनेवाली है।

दूध में औटाई हुई इसकी जड़ वातरक्त, दाह और मंडल कुष्ठ को हरती है।

इसका अर्क उदावर्त, वात, रक्तपित्त, शूल, कंडु, प्रमेह, श्वास, कास, कृमि, कोढ़ और ज्वर-नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम तर और कोई मातदिल बतलाते हैं। वक्षःस्थल को मृदुकर्त्ता, प्रकृति को मृदुकारक, रक्तप्रकोप और उष्णशोथ को शांतिदायक, अतिसार द्वारा मल को सुगमता से निकालनेवाली है (गर्भिणी और बालक को भी देना हानिकारक नहीं है)। कंठरोग में धनियाँ के साथ इसके बने हुए काढ़े से कुल्ले करना चाहिए। पत्ते सब प्रकार के शोथ को लाभकारक हैं। औटाने से इनका प्रभाव मिथ्या हो जाता है। यह मूर्च्छाप्रद और आमाशय को हानिकारक है।

दर्पनाशक—रूमी मस्तकी, बादाम रोगन, कद्दू और इमली का फाड़।

प्रतिनिधि—त्रिगुण नींबू और मुनक्का।

मात्रा—२ से ५ तोले तक।

प्रयोग—१. गूदी विरेचक तथा रुधिर की उष्णता का नाश करनेवाली है। इसको बालकों और स्त्रियों को निर्भय दे सकते हैं। आमवात, गठिया आदि वातरोगों पर लगाने से लाभ होता है। जड़ संस्रन, बलकारी, विरेचक तथा ज्वर और हृद्रोग-नाशक है। फूलों का गुलकंद ज्वरनाशक है। ५-७ बीजों का चूर्ण वमनकारक है। प्रसवकाल की वेदना पर फल का छिलका, केसर और चीनी गुलाब जल में पीसकर उपयोग में आता है। कोंकण में कोमल पत्तों का रस दाद पर लगाते हैं तथा भिलावें के रस से उत्पन्न हुए फोड़े पर लगाने से लाभ होता है। सिंध में पत्तों की पुल्टिस सर्दी से उत्पन्न हुई सूजन पर लगाई जाती है तथा इसको अर्दितवात और आमवात पर लगाने से लाभ होता है। गूदी सारक और ज्वरघ्न है। डाक्टरी औषध "कास्करा सेगरेडा" के बदले में अमलतास की गूदी दी जा सकती है। २. वृक्ष की छाल तीव्र गलपिंड-शोथ की उत्तम ओषधि है। इसके काढ़े का सेवन करने से उक्त रोग में शीघ्र लाभ होता है। विशेषकर छोटे छोटे बालकों को जब यह रोग होता है, तब इसके काढ़े की ५ से १० बूँद की मात्रा से दो दो या तीन तीन घंटे पर देने से बालक की गलग्रंथि की सूजन शीघ्र दूर हो जाती है और वह बिना किसी कष्ट के आसानी से श्वास लेने लगता है। ३. बालकों और गर्भवती स्त्रियों के दस्त लाने के लिये इसकी फली को गरम कर गिरी निकाल बादाम रोगन में चुपड़कर औंटाने और छानकर पिलाने से लाभ होता है। ४. विरेचन के लिये गिरी का काढ़ा देना चाहिए। ५. श्वास की रुकावट में गिरी का काढ़ा पीने से लाभ होता है। ६. पित्त-प्रकोप में इसकी और इमली की गूदी का फाँट हितकारी है। ७. ज्वर में फूलों का गुलकंद लाभदायक है। ८. नाक की फुंसियों पर इसके पत्ते और छाल को पीस तेल में मिलाकर लेप करने से फायदा होता है। ९. स्नायु की सूजन पर इसका लेप गुणकारी होता है। १०. त्वचारोग पर पत्ते और छाल का काढ़ा मलना अथवा इसके द्वारा सिद्ध किया हुआ तेल लगाना उपकारी है। ११. बद्धकोष्ठ में पत्तों का शाक भोजन के समय खाने से लाभ होता है। १२. बालक के अफरा और पेट की पीड़ा पर गिरी को नाभि के चारों ओर लेप करना चाहिए। १३. दस्त लाने के लिये इसकी और इमली की गूदी पानी में भिगो, मल और छानकर रात्रि को सोते समय पीने से अथवा १। तोला इसके फूलों का गुलकंद गरम दूध के साथ सेवन करने से प्रातःकाल दस्त होते हैं। १४. वातरक्त पर पत्तों को गरम करके बाँधना चाहिए। १५. अर्दितवात और गठिया पर पत्तों को गरम कर बाँधने से लाभ होता है। १६. वातरक्त और शिरोरोग पर पत्तों के काढ़े में घृत मिलाकर पान करने से फायदा होता है। १७. छोटे जोड़ों के शोथ पर इसके पत्तों की पुल्टिस बाँधनी चाहिए। १८. मुखपाक पर पत्तों को पीस जीभ पर मलने से लाभ होता है। १९. अंडवृद्धि में १॥ तोले गिरी को १० तोले पानी में चतुर्थांश काढ़ा बना उसमें ३ माशे घृत मिला खड़े होकर किंचित् गर्म ही पीने से लाभ होता है। २०. नवीन पत्तों या कच्ची फली की गिरी पीसकर लेप करने से दाद का नाश होता है। २१. आमवात में पत्तों को कड़वे तेल में तलकर और चावलों में मिलाकर खाने से लाभ होता है। २२. गुल्म रोग में इसका चार माशे तेल पिलाना चाहिए। २३. हरिद्रा प्रमेह में इसका काढ़ा पीना हितकारी है। २४. गंडमाला पर इसकी जड़ को चावलों के पानी में पीसकर नस्य देना अथवा लेप करना हितकारी है। २५. खुजली, गजचर्म्म, कुष्ठ, दाद इत्यादि त्वचारोगों में पत्तों को काँजी के साथ पीसकर लेप करना चाहिए। २६. कान बहने पर इसके काढ़े को कान में डालने से लाभ होता है। २७. कुष्ठ और दाद पर पत्तों को सिरके के साथ पीसकर लेप करने से फायदा होता है। २८. उपदंश की टाँकियाँ मिटाने के लिये पत्तों के काढ़े से धोना चाहिए। २९. सूखी खाँसी पर इसके फूलों के गुलकंद को २ तोले की मात्रा में सेवन करने से अथवा गिरी को पानी में घोंट त्रिगुण चीनी डाल गाढ़ी चाशनी बनाकर चाटने से फायदा होता है।

अमरूद

पृ० ६२]
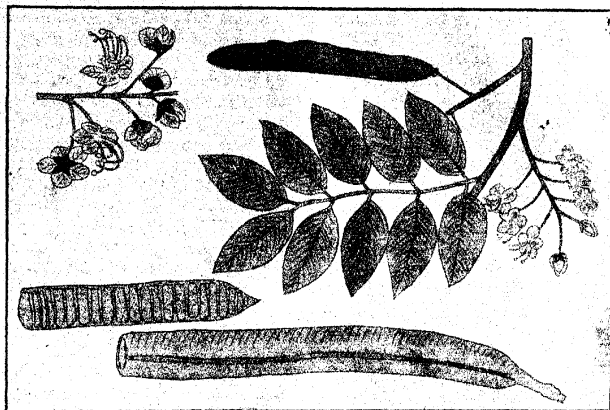
अमलतास

१०. सुखपूर्वक प्रसव होने के लिये छिलके को औंटाकर उसमें चीनी मिलाकर पिलाना चाहिए। ११. खटमल दूर करने के लिये इसकी गूदी को चारपाई के पावों के छिद्रों में थोड़ी थोड़ी लगा देना चाहिए। १२. साँप के विष पर अमलतास वृक्ष की छाल, जो स्वयं छूट गई हो, ३ माशे और ३ दाना काली मिर्च को जल के साथ पीसकर पिलाना चाहिए।

अमलतास छोटा—[हिं०] छोटा अमलतास। सोनालु। सोनहालु। किरवारो। किरमाला। [सं०] कर्णिकार। परिव्याध और पादपोत्पल। [बं०] छोट सोंदाल। [मरा०] लघु बाहवा। [गु०] नहानो गरमाला। [ते०] किरुगके। [अं०] A sort of Cassia.

यह वृक्ष मुझे प्राप्त नहीं हो सका, इस कारण इसका विवरण और चित्र देने में असमर्थ हूँ। किंतु शालिग्राम निघंटु भूषण में इसका विवरण यों दिया गया है—"कर्णिकार के वृक्ष प्रायः पर्वतों और वनों में अधिक होते हैं, पत्ते ढाक के पत्तों के समान होते हैं। फूल लाल और अत्यंत मनोहर लगते हैं।" कनकचम्पा नं० २ देखो।

गुण-दोष—कड़वा, चरपरा, कसैला, गरम, सारक, लघु, रंजक और सुखदाता है तथा शोथ, कफ, रुधिर-विकार, घाव, कोढ़, उदररोग, कृमि, प्रमेह और गुल्म का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. छोटे अमलतास का उपयोग बहुत कम देखने में आता है। २. गजचर्म, कोढ़, दाद, खुजली और चर्म रोग पर पत्तों को काँजी में पीसकर लेप करना चाहिए। ३. गंडमाला पर, चावलों के पानी में पीसकर लेप करना हितकारी है।

अमलदीप्ति—[सं०] कपूर। कर्पूर। काफूर।

अमलपत्री—[सं०] हंस (पक्षी)।

अमलबेंत—[हिं०] अमलबेंत। अम्लबेंत। अमलबैंत। [सं०] अम्लवेतस। चुक्र। शतवेधि। सहस्रनुत इत्यादि। [बं०] थैकड़। थैकल। अमलवेतस। [मरा०] अम्लवेतस। चुका। [गु०] अमलवेत। [फा०] तुर्शक। [यू०] अमलबेद। [लै०] Acido Zeyfolia. [अं०] Common Soral.

इसका वृक्ष मध्यमाकार का होता है और प्रायः वाटिकाओं में लगाया जाता है। फूल सफेद और फल गोल, खरबूजे के समान, कच्चे रहने पर हरे और पकने पर पीले हो जाते हैं। ये फल चिकने होते हैं। अमलबेत दो प्रकार का होता है, एक अमलबेत और दूसरी बेती। यह एक प्रकार का नींबू है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण दोष—अत्यंत खट्टा, भेदक, हलका, अग्निवर्द्धक, पित्तवर्द्धक, रोमांचकर्त्ता, रूखा तथा हृदयरोग, शूल, गुल्म, मूत्र और मलदोष, प्लीहा, उदावर्त्त, हिचकी, मद्यदोष, आनाह, अफरा, अरुचि, श्वास, खाँसी, अजीर्ण, वमन, कफ और वातरोग का नाश करनेवाला है। यह बकरे के मांस को गलानेवाला है। जिस प्रकार चनाखार से लोहे की सूई गल जाती है, उसी प्रकार इसके रस में भी सूई डालने से गल जाती है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—ठंढा, तर, हृदय रोग को हितकारी, पित्तनाशक, पाचक, पक्वाशय को मृदुकर्त्ता, क्षुधाकारक, रुधिर-विकार-नाशक, वातज गुल्म के वायु को नाश करनेवाला और उदरपीड़ा को दूर करनेवाला है। इसका चूर्ण अनेक योगों में पड़कर अत्यंत गुण करता है। बादी और उदर रोग पर खुरासानी अजवायन के चूर्ण में नमक मिलाकर अमलबेत के रस में सात भावना देकर सेवन करना चाहिए। यह कफ को उत्पन्न करनेवाला है।

दर्पनाशक—लौंग और काली मिर्च।

प्रतिनिधि—चूक।

मात्रा—१ से ३ माशे तक।

अमलबेद-[यू०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अमलबेल-[हिं०] अत्यम्लपर्णी। रामचना। अमिर्ती।

अमलबेत-[हिं०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अमलमणि-[सं०]
अमलरत्न-[सं०] } बिल्लौर। स्फटिक मणि।

अमललता-[बं०] अत्यम्लपर्णी। रामचना। अमिर्ती।

अमलवेत-[हिं०]
अमलवैत-[हिं०] } अमलबेत। अम्लवेतस।

अमलांझटा-[सं०] भुईं आँवला। भूम्यामलकी।

अमला-[सं०] १. सातला। सप्तला। थूहरभेद। २. अमड़ा। आम्रातक। ३. भुईं आँवला। भूम्यामलकी। ४. नील। नीली वृक्ष। महानील। ५. [बं०, आसा०] आँवला। आमलकी।

अमलाटन-[हिं०] कटसरैया। बाणपुष्प।

अमली-[हिं०, मु०] इमली। तिंतिड़ी। [हिं०] गोरखी। गोरख इमली।

अमलुक-[बं०] अंगूर जंगली। बन अंगूर।

अमलुल-[गु०]
अमलोल-[मरा०] } विषांविल। वृक्षाम्ल। महादा।

अमाकीरे-[क०] असगंध। अश्वगंधा।

अमाटम-[ते०] अमड़ा। आम्रातक।

अमांपच्च अरिशि-[ता०] दूधी। दुग्धिका।

अमावट-[हिं०] आम के रस की रोटी। [सं०] आम्रवर्त। [बं०] आम्रसत्व, आमक। [मरा०] आमाचे साट। आम्रवर्त।

गुण—रुचिकारी, किंचित् दस्तावर तथा वमन, आम, वात और पित्त का नाश करनेवाला है। धूप में पकने से हलका होता है और कोठे की वायु को निकालता है।

अमा हरदी-[हिं०]
अमा हलदी-[हिं०] } आँबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आम आदा।

अमितद्रुम-[सं०] तेजपत्ता। पत्रज।

अमिया-[हिं०] आम । आम्र ।
अमिर्ती-[हि०] अत्यम्लपर्णी । रामचना ।
अमिलातका-[सं०] सेवती । शतपत्रिका पुष्प वृक्ष । सादा गुलाब ।
अमुंदकी-[सं०] धान साठी । गर्भ में ही पकनेवाला बरसाती धान । साठी धान ।
अमुईगरु-[सिंह०] अदरक । आद्रक । आदी ।
अमुक-[ने०] अमरूद । पेरुक । सफरी ।
अमुक कुरविरई-[ता०] } असगंध । अश्वगंधा ।
अमुकरांकि डंग-[द्रा०] }
अमुखुरा विरई-[ता०] काकना नं० २ । अकरी, पनीर के बीज ।
अमुगिलां-[अ०] बबूल । कीकर ।
अमुगिलां सिमग-[अ०] बबूल का गोंद । बबूर-निर्यास । गोंद बबूर ।
अमुम पक्षे अरिसिल-[ता०] दूधी नं० १ । दूधिया । दुग्धिका ।
अमुरस-[कु०] अमडा । आम्रातक ।
अमू-[यू०] रेशए बाला । सोआ के समान एक यूनानी औषध ।
अमूला-[सं०] कलिहारी । लांगली ।
अमृडाल-[सं०] लामजक । पीला बाला ।
अमृणाल-[सं०] १. खस । वीरणमूल । उशीर । २. लामजक । पीला बाला ।
अमृणालय-[सं०] लामजक । पीला बाला ।
अमृत-[सं०] १. अमर । न मरनेवाला । देवता । २. विष । विष-मात्र । ३. शृंगिक विष । सिंगिया विष । ४. वत्सनाभ । बच्छनाग विष । मीठा तेलिया । ५. पारा । पारद । ६. औषधि । दवा । ७. दूध । दुग्ध । ८. घृत । घी । ९. सोना । स्वर्ण । १०. पानी । जल । ११. वाराहीकंद । गेंठी । चमारआलु । १२. बनमूँग । मुद्गपर्णी । मुगवन । १३ मोठ । मकुष्ठ । १४. गिलोय । गुडुचि ।
अमृत अम्लिका-[सं०] भुईं आँवला नं० १ । भूम्यामलकी ।
अमृतकंदा-[सं०] कंद गिलोय । कंद गुडूचि ।
अमृतकदली-[सं०] केला भेद । कदली भेद ।
अमृतकल्लि-[खा०] गिलोय । गुडूचि ।
अमृतकेलि-[सं०] नारियल की खीर ।
अमृतक्षार-[सं०] नौसादर । नरसार ।
अमृतजटा-[सं०] जटामांसी । बालछड़ ।
अमृतजा-[सं०] हरीतकी । हर ।
अमृतफल-[सं०] १. नासपाती । २. परवल । पटोल । परोरा । ३. पारा । पारद । ४. वृद्धि । (अष्टवर्ग की एक ओषधि ।) ५. आँवला । आमलकी । ६. अमरूद । पेरुक । सफरी । ७. पारेवत । पालेवत फल ।
अमृतफला-[सं०] १. दाख । द्राक्षा । २. आँवला । आमलकी ।
अमृतमंजरी-[सं०] गोरखदुग्धी । अमृतसंजीवनी । गोरख-दुद्धी ।
अमृतरसा-[सं०] दाख काली । काली द्राक्षा ।
अमृतलता-[सं०] गिलोय । गुडूचि ।
अमृतवल्लरी-[सं०] १. पोई शाक । उपोदिका । २. गिलोय । गुडूचि । गुरुच ।
अमृतवल्लि-[क०] गिलोय । गुडूचि ।
अमृतवल्लिका-[सं०] १. अमृतवल्ली । अमृतस्रवा । २. गिलोय । गुडूचि । गुरुच ।
अमृतवल्ली-[सं०] १. अमृतवल्ली । तोयवल्ली । अमृतस्रवा । २. गिलोय । गुडूचि । यह चित्रकूट प्रदेश में उत्पन्न होनेवाली गिलोय की जाति की एक लता है जो रुदंती के नाम से प्रसिद्ध है ।

गुण—किंचित् कड़वी, रसायन तथा विष, वाव, कोढ़, आमवात, कामला और सूजन का नाश करनेवाली है ।
अमृतविष-[सं०] वत्सनाभ विष । मीठा विष । बच्छनाग ।
अमृतवुस-[तु०] गिलोय । गुडूचि ।
अमृतवेल-[गोआ०] } गिलोय । गुडूची । गुरुच ।
अमृतह्वेल-[गोआ०] }
अमृतसंगम-[सं०] खपरिया । खर्परी तुत्थ ।
अमृतसंजीवनी-[सं०] गोरखदुग्धी । गोरखदुद्धी ।
अमृतसंभवा-[सं०] गिलोय । गुडूचि ।
अमृतसारज-[सं०] गुड़ । मीठा ।
अमृतसारजा-[सं०] चीनी । शर्करा ।
अमृतस्रवा-[सं०] १. अमृतवल्ली । तोयवल्ली । २. त्रायमान । त्रायमाणा । ३. रुद्रवंती । रुदंती ।
अमृता-[सं०] १. गिलोय । गुडूचि । २. मदिरा । दारू । शराब । ३. मालकंगनी । ज्योतिष्मती । मलकौनी । ४. निसोथ लाल । रक्त त्रिवृत्त । लाल निसोथ । ५. गोरखदुग्धी । अमृत-संजीवनी । ६. अतीस । अतिविषा । ७. दूब । दूर्वा । ८. आँवला । आमलकी । ९. हरीतकी । हर्रे । १०. तुलसी । सुरसा । ११. पीपल । पिप्पली । १२. इनारू । इंद्रवारुणी । १३. सालम मिश्री । सुधामूली । सालब । १४. शिवलिंगी । लिंगिनी लता । १५. गँगेरन । नागबला । गुल शकरी । १६. कंद गिलोय । कंद गुडूचि ।
अमृताक-[सं०] १. परवल । पटोल । २. नासपाती । अमृतफल ।
अमृतादि-[सं०] सब प्रकार के कषाय द्रव्य ।
अमृतादि विष-[सं०] स्थावर विष ।
अमृताष्टक-[सं०] हरीतक्यादि अष्टद्रव्य । हरीतकी आदि आठ ओषधियाँ । यथा—हरीतकी, नागरमोथा, चीता, चिरा-यता, हलदी, इंद्रजव, गिलोय और सोंठ ।